पॉलिसी और उन्नति !!

"सत्यमेव जयते नानृतम् ।"

"Truth may languish, but cannot Perish."

लेखक और प्रकाशक

रामलौटनप्रसाद "विशारद"

आर्य्य-भवन बीकानेर ।

३१ दिसम्बर सन् १९२४ ई० ।

पहली बार

प्रकाशक—
रामलौटनप्रसाद "विशारद"
आर्य्य-भवन, बीकानेर।

मुद्रक—
किशोरीलाल केडिया
वणिक् प्रेस
१, सरकार लेन, कलकत्ता

ईश-प्रार्थना

हे प्रभो! तुम तेजमय हो तेजमय हम कीजिये,
हों अटल सब सत्य-पथ पर दिव्य दृष्टी दीजिये।
सत्य-पथ परसे डिगानेके लिये परमात्मा!
कोई भी शक्तिसे हमको जगमें विचलित कर न हो।
न्यायके आगे हमारा आपही सिर जा झुके,
पर प्रभो! अन्यायकी तोपोंसे हमको डर न हो।
पापका फल पापियोंको हाथ निर्दय दीजिये,
औ धर्मार्थी दासता पर दया दृग कीजिये।

ओ३म् शान्ति! शान्ति!! शान्ति!!!

रामलौटनप्रसाद।

भूमिका

आजकलकी परिपाटी यह है कि चाहे दो ही पृष्ठकी पुस्तिका क्यों न लिखी जाय परन्तु उसमें भूमिकाकी आवश्यकता होती है। यह परिपाटी अच्छी हो अथवा बुरी इस वाद-विवादका यहाँ समय नहीं। किन्तु हिन्दीमें भी इस प्रणालीके प्रचलित होनेके कारण मैं भी उसकी रक्षा-हेतु कुछ लिखना आवश्यक समझता हूँ।

आधुनिक समयमें उपन्यासोंके पढ़नेका बहुत शौक़ हो रहा है और अशिक्षित ही नहीं, किन्तु शिक्षित पुरुष भी उसीमें अपना समय बिताते हैं। उपन्यासोंकी घटनाएँ चाहे सत्य न हों, किन्तु समाजमें कलियुगी प्रचार होनेके कारण सत्यसी प्रतीत होती हैं। प्रस्तुत पुस्तिका उपन्यास नहीं, किन्तु सच्ची घटना और व्यवहारका जीता-जागता चित्र है। यह पुस्तिका किसी पुस्तकके आधारपर नहीं लिखी गयी है, इसलिये यदि इसमें पाठकोंके लिये मनोरंजनकी सामग्री न हो तो कोई आश्चर्य नहीं; क्योंकि सच्चे रोदनमें मनोरंजकताका अंश नहीं होता, किन्तु उसमें प्रभाव अवश्य होता है।

प्रातःकालीन सूर्यकी प्रभापूर्ण किरणें, सोमदेव का शीतल, शान्तमय प्रकाश और सन्ध्याकी सुखप्रद सुगन्धयुत समीरके संचारके अभिलाषी आजकल प्रायः दिखायी देते हैं। परन्तु वे महासागरकी उत्ताल तरङ्गों और घोर घनोंकी भयंकर वास्त-

विक रमणीयता (निसर्गता) का आनन्द उठानेमें असमर्थ होते हैं, क्योंकि प्रकृतिके आनन्दमें प्रवेश करने अथवा मनुष्य-की विविध लीलाओंको जाँचनेकी उनमें या तो योग्यता नहीं होती या यों कहना चाहिये कि वे जानबूझकर ही इस ओरसे अनभिज्ञ रहा करते हैं।

संसारमें पशु-पक्षी और स्वयं मनुष्य भी एक व्यापक नियमका प्रत्यक्ष स्वरूप है और सब वस्तुओंका एक ही बन्धन है जिसके इन सब अधीन हैं। यह बन्धन केवल स्वतंत्रताका तत्व है जिसके दूसरे स्वरूपको यदि परमात्माके नामसे कहा जाय तो अनुचित न होगा। सांसारिक जीवन व्यतीत करने-के लिये प्राणीमात्रको इसकी अनिवार्य आवश्यकता है; परन्तु आधुनिक समयमें स्वेच्छाचार और अत्याचारको भ्रमवश "स्वतंत्रता" कहने लगे हैं जो सर्वथा विपरीत है। स्वतंत्रता किसीके अधिकार छीनने या ईश्वरीय आज्ञोल्लंघन करनेकी शिक्षा नहीं देती और न अन्यायपूर्वक गुलामी (दासता) की बेड़ियों-में आततायीकी भाँति किसीको जकड़ना चाहती है, वरन् इसको घोर महापाप बतलाती है; क्योंकि दुःख, दरिद्रता तथा अवनति आदि समस्त सांसारिक क्लेशोंका मूल कारण केवल स्वच्छंदता तथा स्वेच्छाचारिता ही हुआ करती है। स्वतंत्रता-व्यवहार सुख, उन्नति तथा समृद्धिका राज्य स्थापित कर जो चिरस्थायी और शान्तिमय रहा करता है। जहाँ यह वहाँ खूनकी नदियाँ बहती हैं, सिविल वॉर (घरेलू

झगड़े) और अशान्ति उत्पन्न हो जाती है। चीनमें रक्तपात, फ्रांसकी राज्यक्रान्ति और रूसमें खूनकी नदियोंका बहना स्वतंत्रताके अभावहीका कारण था और भारतकी वर्तमान दुर्दशा तथा अशान्तिका भी यही एकमात्र प्रधान कारण है। उन्नत जातियोंका इतिहास इस सिद्धान्तका साक्षी है। अठारहवीं शताब्दीके अन्तमें अमेरिकाके उपनिवेशोंने भी स्वेच्छाचारपूर्ण शासनसे बचनेके लिये इसीकी आराधना की थी।

स्वतंत्रताका अभाव केवल तभी होता है जब मनुष्य धर्म-हीन तथा कर्त्तव्यहीन हो जाता है और यह अभाव केवल अशिक्षा तथा कुशिक्षाका ही हुआ करता है। इसलिये यदि कोई संस्था अथवा जाति स्वतंत्रताके शिखरपर चढ़ना चाहती है तो उसका कर्त्तव्य है कि वह शिक्षारूपी पहली सीढ़ीपर भलीभाँति पैर जमावे और फिर कर्त्तव्यरूपी दूसरी सीढ़ीपर सावधानीसे पैर रक्खे। क्योंकि सीढ़ियोंपर असावधानी करनेका फल यही होगा कि बजाय ऊपर चढ़नेके अकस्मात् नीचे गिर पड़ेगा और फिर सहसा चढ़नेका साहस कदापि न हो सकेगा।

उपर्युक्त बातोंको ध्यानमें रखते हुए मैंने इस पुस्तिकाको पाठकोंके समक्ष रखनेकी धृष्टता की है और इसमें यही दिख-लानेकी चेष्टा की है कि नींवके बिगड़नेसे उसपर अच्छी इमारत नहीं उठायी जा सकती, और न जड़ खोखली होनेपर कोई वृक्ष फल ला सकता है।

मुझे आशा है कि पाठकगण मेरी इस धृष्टतापर ध्यान न

देते हुए पुस्तिकाको आद्योपान्त पढ़नेका कष्ट उठावेंगे और यदि इससे पाठकोंको कुछ भी लाभ हुआ तो मैं अपने प्रयत्नको सफल समझूंगा।

इन तमाम बातोंके लिये मैं श्रीमान् मेजर-जेनरल, हिज़ हाइनेस, महाराजाधिराज, राजराजेश्वर, नरेन्द्रशिरोमणि, श्री सर गङ्गासिंहजी बहादुर, जी० सी० एस० आई, जी० सी० आई० ई०, जी० सी० वी० ओ०, जी० बी० ई०, के० सी० बी०, ए० डी० सी०, एलएल० डी० श्री जय जङ्गलधर बादशाह श्री बीकानेर-नरेशको, जिनकी छत्रछायामें मुझे अपने विचारोंके निर्विघ्नतापूर्वक प्रकट करनेकी स्वतंत्रता मिली हुई है, कोटिशः हार्दिक धन्यवाद देते हुए ईश्वरसे प्रार्थी हूँ कि श्रीअन्नदाताजी, श्री महाराज कुमार साहिब बहादुर तथा दुलारे श्री भँवरजी साहिब बहादुर आदि सकुटुम्ब चिरायु हों और अपने शान्तिमय शुभ साम्राज्यमें धार्मिक तथा सामाजिक स्वतंत्रताकी उत्तरोत्तर वृद्धि कर तथा प्रजाको कृतार्थ कर स्वर्गानन्द प्रदान करें।

अन्तमें यद्यपि मैं धनवान नहीं हूँ तथापि ऐसा कृपण भी नहीं हूं कि अपने कृपालुओंको धन्यवाद (Thanks) दिये बिना रहो सकूं कि जो आधुनिक सभ्यताका सबसे बड़ा पुरस्कार है

रामलौटन प्रसाद।
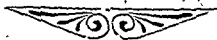
समर्पण

आनन्दकन्द, सच्चिदानन्द, नन्दनन्दन, कंस-निकंदन, व्रजचन्द्र, यदुपते, कृष्णमुरारे ! तूने स्वेच्छाचारिता और निरंकुशताको समूल नष्ट करनेहीके लिये इस भारत-भूमिको अपना क्रीड़ा-स्थल बनाया था। आज तेरी इस पवित्र जन्मभूमिकी दुर्गति तुमसे छिपी नहीं है, फिर भी न जाने क्यों तू इसकी सुधि नहीं लेता है।

भगवन् ! आज तो धींगोंने, स्वेच्छाचारिता और निरंकुशताको पॉलिसीके आवरणमें ढक, खुले खेलनेका साहस कर, अशान्ति और ऊधम मचा रक्खा है। ऐसी ही पॉलिसीका नग्न स्वरूप संसारको दिखलानेहीके लिये यह पुस्तिका टूटे-फूटे शब्दोंमें लिखी गयी है जो तेरे सिवाय और किसको समर्पण की जाय ! अतः यह तुच्छ भेंट स्वीकार कर कृतार्थ कर ! इत्यलम्।

सत्य-दर्शनाभिलाषी—

रामलौटनप्रसाद।

चित्र-परिचय

इस चित्रके देनेका केवल यही अभिप्राय है कि कुटिल नीति एक सच्चे और आदर्श व्यक्तिको कर्त्तव्य-पथसे विचलित कर सकती है और जिस देश, जाति, संस्था अथवा समाजमें इसका सादर प्रचार होता है वह अवश्यमेव महाराजा दशरथ जैसे महा प्रतापी वीरकी भाँति नष्ट होनेसे नहीं बच सकता। इस पुस्तिकाके पढ़नेसे भी समय समयपर पाठकोंको इसका दिग्दर्शन होता रहेगा। इसी सिद्धान्तानुसार पण्डितोंने अपने पूर्णानुभवद्वारा यह सर्वसाधारणके हितार्थ स्पष्ट घोषणा कर दी है :—

"Better alone than in ill company."

अर्थात्

"बरु भल बास नरक कर ताता।
दुष्ट संग जनि देहि विधाता॥"

—महात्मा तुलसीदासजी।

पॉलिसी और उन्नति
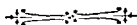
काण्ड १

अवनतिका मूल कारण

संसारमें जिस वस्तुको देखा जाय नियमबद्ध प्रतीत होती है और तमाम जीव प्राकृतिक नियमोंके अधीन हो अपने अपने कर्त्तव्योंका पालन कर रहे हैं। इसीसे यह संसार-चक्र पूर्ण रूपसे नियमानुकूल चलता हुआ दिखायी दे रहा है।

जब कोई वस्तु प्राकृतिक नियमोंसे हटती है तो तरह तरहकी बाधाएं उपस्थित हुआ करती हैं। उदाहरणार्थ, जब पृथ्वी अपनी धुरीपरसे घूमती घूमती कुछ भी हटती है तो किसी न किसी सितारेसे टकराकर उसकी गतिमें केवल अन्तर ही नहीं पड़ता किन्तु भूकम्प होकर शहरके शहर और लाखों जीव-जन्तु नष्ट हो जाते हैं। इसका मुख्य कारण केवल यही है कि जब कभी कोई जीव या वस्तु प्राकृतिक नियमोंका उल्लंघन करना चाहती है तो प्रकृति उसको नियमपर लानेके लिये अनेक चेष्टाएँ करती है और यदि चेष्टापर भी नियमानुकूल न होवे तो उस वस्तुको नष्ट करनेके लिये बाध्य होती है। सांसारिक उन्नति और अवनति इसी अटल नियमके अधीन हैं।

इसी तरह जब कभी कोई देश उन्नतिके शिखरपर चढ़ता और अपनी कीर्ति संसारको दिखलानेका सौभाग्य प्राप्त करता है तो उसको प्राकृतिक नियमोंका पालन अवश्य करना पड़ता है और जब कोई देश प्राकृतिक नियमोंका उल्लंघन करने लगता है तो वह देश उन्नतिके शिखरपर चढ़नेके बजाय शीघ्र ही रसातल को पहुंच जाता है। इतिहास ही मनुष्योंका पथ-प्रदर्शक हो सकता है। उसके देखनेसे विदित होता है कि किसी देश, जाति समाज अथवा सोसाइटी आदिकी जब कभी उन्नति हुई है तो उसका एकमात्र कारण यही था कि वे प्राकृतिक नियमोंका पूर्ण रूपसे पालन करती थीं अर्थात् कर्त्तव्यपरायणता और अपनी इच्छाओंको प्राकृतिक नियमोंके अधीन रखकर कार्यरूप परिणत होती थीं। इसका परिणाम यह होता था कि उनमें प्रेम संगठन, सहनशीलता और ईमानदारी अंकुरित ही नहीं किन्तु पूर्ण रूपसे फलान्वित हो जाती थी और जहाँ कहीं कर्त्तव्यहीनता अथवा स्वेच्छाचारिताका आदर तथा प्रादुर्भाव हो जाता था वहीं देश, समाज और जाति गिरने लग जाती थी।

इङ्गलिस्तानका इतिहास हमको बतलाता है कि जबतक वहाँके राजा और प्रजा अपने अपने कर्त्तव्य-पालनमें तत्पर रहे उनमें प्रेम, संगठन और सहनशीलता बढ़ती रही परन्तु जब कभी एलिज़बेथ तथा आठवें हेनरी जैसे अनाचारी, स्वेच्छाचारी और [illegible] राजा होने लगे तो प्रजामें उनका ही नहीं वरन् [illegible] भी प्रेम और संगठन टूट गया और इसका परिणाम

यह हुआ कि वहाँ फूटकी अग्नि भभककर प्रज्वलित हो गयी और हंड्रेडइयर्स वॉर (Hundred year's war) वॉर्स आव रोज़ेज़ (wars of Roses) तथा सेविनइयर्स वॉर (Seven year's war) आदिके नामसे लड़ाइयाँ होने लगीं, उनकी उन्नति धीरे धीरे नष्ट हो गयी, प्रेम और संगठन जाता रहा, उष्णता तथा स्वेच्छाचारिताकी मात्रा अधिक बढ़ गयी, सहनशीलता जाती रही और फिर लड़ाइयोंद्वारा वे धनहीन, बलहीन, शक्तिहीन तथा मनुष्यहीन हो गये। इसी तरहसे भारतवर्षमें जब जब राजा रामचन्द्रजी आदि जैसे प्राचीन कालमें अथवा बाबर आदि जैसे कलियुगमें राजा हुए तो देशमें प्रेम और संगठन होने लगा और जब हिरण्यकशिपु, कंस, अकबर तथा औरंगज़ेब आदि जैसे अनाचारी, स्वेच्छाचारी और कर्त्तव्यहीन राजा हुए तो प्रजामें वही अशांति उत्पन्न हो गयी कि जिसने राज्योंका अन्त कर दिया।

देशों और राज्योंपर ही निर्भर नहीं किन्तु प्रत्येक वस्तुके नियमानुकूल होनेसे ही शांति स्थापित रह सकती है। यदि कोई सिपाही शत्रुके समक्ष आकर कर्त्तव्यहीन होता है अर्थात् शत्रुके बल या पराक्रमसे भयभीत होकर भागनेकी चेष्टा करता है तो उस सिपाहीके कर्त्तव्यहीन होनेसे सारी सेनामें अशांति छा जाती है और भगदड़ पड़ जाती है। इसी तरहसे जब कभी कोई घोड़ा लड़ाईमें भयभीत हो भाग उठता है तो सवार कितना ही बहादुर तथा निर्भीक क्यों न हो उसकी कीर्ति धूलमें मिल जाती,

है और उसकी सेना भी इस घटनाओंसे नहीं बच सकती। सारांश यह है कि कर्त्तव्यपरायण मनुष्य ही उन्नति नहीं करता वरन् मनुष्यसे संसर्ग रखनेवाले पशु आदिकोंका प्रभाव भी मनुष्योंपर पड़े बिना नहीं रहता। इसीलिये यह कहा गया है कि जीवमात्रको प्राकृतिक नियमोंके अधीन हो अपने अपने कार्योंको करना चाहिये। तमाम मतों, सभ्यता अथवा क़ानूनका सार यही है कि प्राणीमात्रको केवल अपने कर्त्तव्यका पालन करना ही श्रेयस्कर है।

सांसारिक जीवों और वस्तुओंके अधीन होकर जब देश और राज्य बनते और बिगड़ते, ग्राम तथा शहर आदि मनुष्योंके कर्त्तव्यद्वारा ही बसते और उजड़ते हैं तो संस्थाएँ भी इन्हीं नियमोंके अधीन बन और बिगड़ सकती हैं अर्थात् जिस देशके मनुष्योंमें कर्त्तव्यपरायणता होती है और जो अपनी इच्छाओंको प्राकृतिक नियमोंके अधीन बनाये रखते हैं वहां पारस्परिक प्रेम, संगठन और सहनशीलताकी मात्रा बढ़ जानेके कारण नये नये विचारोंकी सभाएँ, समाजें तथा संस्थाएँ खुलती हैं और देशमें कुरीतियोंके निवारण करनेकी चेष्टाएँ करती हैं और इस तरहसे अपने देश तथा अपने राज्यको अन्य देशों और राज्योंके मुक़ाबिलेमें उठाती ही नहीं वरन् उनको उन्नतिके शिखरपर ले जाती इन्हीं कारणोंसे भारतवर्ष कभी तमाम देशोंका गुरु तथा [illegible] जाता था और ऐसो ही समाजों तथा सोसा- [illegible] सिकन्दर) आदि राजा पैदा हुए।

परन्तु जब सोसाइटियों, समाजों अथवा संस्थाओंमें स्वेच्छाचारिताकी मात्रा बढ़ जाती है और वे कर्त्तव्यहीन हो जाती हैं तो वे स्वयं ही नहीं किन्तु अपने देश, अपनी जाति तथा अपने संरक्षकोंको भी ले डूबती हैं। उदाहरणार्थ, जब योरपमें पोपने अपनी स्वेच्छाचारिताको बढ़ाकर कर्त्तव्यहीन होना आरम्भ कर दिया तो ईसाई मतका वह आदर जो पहले था मनुष्योंके हृदयोंसे जाता रहा। पहले लोग विश्वासान्ध होकर हज़ारों और लाखोंकी वस्तुएँ, इस विचारमें निमग्न होकर कि उनको वे तमाम वस्तुएँ बैकुण्ठमें प्राप्त हो जावेंगी, दे देते थे किन्तु जब यह ज्ञात हो गया कि यह कार्रवाई केवल पोपकी स्वार्थपरायणतापर निर्भर है और वह नियमानुकूल नहीं है तो उसके विरुद्ध आन्दोलन होने लगा और उसकी स्वेच्छाचारिताको मिटानेके लिये ऐक्ट ऑव सुप्रिमेसी (Act of Supremacy) तक पास कर दिया गया। भारतवर्षमें भी जबतक यह विश्वास था कि ब्राह्मण हमारे सच्चे हितैषी और पथ-प्रदर्शक हैं तो यहांके लोग उनके आज्ञा-पालनमें कोई कसर न रखते थे और धन ही नहीं किन्तु प्राणतक देनेको तैयार रहा करते थे परन्तु जब यह ज्ञात हो गया कि ब्राह्मण-समाजमें स्वेच्छाचारिता और स्वार्थपरायणताका राज्य है तो लोग समाजको सन्देहकी दृष्टिसे देखने लगे और ऐसा करनेपर ही काशी-करौत अथवा श्रीजगन्नाथजीके बलिदानकी घटनाओंकी पोल खुल गयी और मनुष्योंमें ब्राह्मणोंके प्रति वह श्रद्धा नहीं रही जो हमारे पूर्वजोंमें थी।

संस्थाओंकी भी यही गति है कि जबतक उनके सभासद

कर्त्तव्यपरायण और धर्मनिष्ठ रहते हैं बराबर उनकी उन्नति होती रहती है परन्तु जब कभी उनमेंसे कोई भी कर्त्तव्यहीन हो जाता है तो फूट अंकुरित हो जाती है, पार्टी-बन्दियाँ होने लगती हैं और फिर "अपनी अपनी डफ़ली और अपना अपना राग" के अनुसार हर समासद् स्वेच्छाचारिताके अर्थात् दो अपनी ढाई ईंटकी मस्जिद अलग ही बनाता है। ऐसी अवस्थामें चाहे वह विद्या-प्रचारिणी सभा हो, चाहे नैतिक संस्था हो और चाहे कुरीति-निवारिणी सोसाइटी हो -सारांश यह कि कितना ही अच्छा और पवित्र उद्देश्य उस समाका क्यों न हो, वह माननीय तथा आदरणीय नहीं हो सकती और जिस तरह किसी सुगन्धित वस्तु अथवा बढ़िया इत्रको किसी गन्दी नालीमें बहानेसे उसका अनादर किया जाता है ठीक यही गति अति पवित्र तथा उच्चादर्श रखनेवाली उन समाजों और संस्थाओंकी होती है जिनका प्रचार स्वेच्छाचार, फूट, अकर्त्तव्य, अविवेक, ठकुरसुहाती, चापलूसी तथा पॉलिसी आदि गन्दी नालियोंद्वारा किया जाता है।

किसी वस्तु, जीव अथवा व्यक्तिको अपनी जाति या वंशपर गौरव नहीं हो सकता जबतक कि उसमें उस जाति या वंशका अंश न हो। अर्थात् जिस जातिकी वह वस्तु है उसका उस वस्तुमें गुण विद्यमान न हो तो उस वस्तुको उस जातिका सच्चा गौरव कदापि प्राप्त नहीं हो सकता। उदाहरणार्थ, जिन कुत्तोंमें उनके भेड़ियोंका सा साहस, बल और फुरती नहीं होती वे कुत्ते

कदापि मान नहीं पाते वरन् टुकड़ोंके लिये मारे मारे फिरते हैं। इसी तरह धूम्र (धुआँ) का कोई मनुष्य यह कहकर कि यह प्रज्वलित अग्निके वंशसे है आदर नहीं करता। अर्थात् यह अटल नियम है कि जिसमें उसकी जाति या वंशके गुण न हों उसका निरादर ही होता है। अभिप्राय यह है कि संस्था केवल वही मान पाती है या मान पानेयोग्य होती है जिसमें उसके उद्देश्योंका व्यवहार कुछ न कुछ अवश्य पाया जाता हो अन्यथा "विष संपृक्ताभवत् त्याज्यः" (विषयुक्त अन्न त्यागनेके योग्य होता है) के अनुसार लोग उससे घृणा करने लगते हैं और फिर वह संस्था अपने उद्देश्योंसे गिरकर तथा अपने गुणोंको नष्ट करके उस अग्निकी भाँति कि जो बुझनेके पश्चात् अग्नि नहीं किन्तु राख कहलाती है, अनादर पाती है।

भारतवर्षमें अनुराग और वैराग्य अर्थात् प्रवृत्ति और निवृत्ति दो मार्ग प्राचीन कालसे चले आते हैं। यद्यपि दोनों अपना अंतिम उद्देश्य एक ही बतलाते हैं परन्तु उनकी नीति और व्यवहारमें ठीक पूरब और पच्छिमका सा अन्तर है। अर्थात् प्रवृत्ति मार्ग-वाले यह कहते हैं कि संसारमें जबतक किसी वस्तुको भोगा न जावे "जीव" उसका इच्छुक बना रहता है और इच्छुक रहते हुए जीवको मायारत (प्राकृतिक) प्रलोभनोंमें पड़ अपनी अव-स्थासे गिरनेकी सम्भावना रहती है। इसलिये प्राकृतिक वस्तु-ओंको खूब भोगना चाहिये ताकि नियमानुसार जीव भोगनेसे उकता जावे और जब वह प्रकृतिसे उकता जायगा तो अवश्य-

मेव उसको ईश्वरमें लीन होना पड़ेगा क्योंकि और कोई वस्तु फिर लीन होनेके लिये शेष नहीं रह जाती। निवृत्ति मार्गवाले यह कहते हैं कि संसारको त्याग करनेसे ही शांति हो सकती है और जीव मोक्ष पाता है, बिना त्यागके जीव प्राकृतिक बंधनोंसे मुक्त नहीं हो सकता। इसीलिये प्रवृत्ति मार्गवाले संसारको असार नहीं मानते और उसमें लीन होनेकी चेष्टा करते हैं और निवृत्ति मार्गवाले महादेव-उपासक बन भस्म रमा संसारको असार समझते हैं। अर्थात् प्रवृत्ति मार्गवाले मायाको मुख्य मान ब्रह्मको गौण मानते हैं और इसीलिये वे राधाकृष्ण, सीताराम और गौरीशंकर आदि नामोंका जप करते हैं और निवृत्ति मार्गवाले ब्रह्मको मुख्य मान मायाको गौण मानते हैं और इसीलिये वे महादेव, पार्वती आदिका उच्चारण करते हैं। सारांश यह है कि प्रवृत्ति मार्गवाले विष्णुके, कि जो सृष्टिके पालनकर्त्ता कहे जाते हैं, उपासक बन वैष्णव कहलाते हैं और निवृत्ति मार्गवाले महादेवके, कि जो सृष्टिके संहारकर्त्ता कहे जाते हैं, उपासक बन शैव कहलाते हैं। परन्तु प्रवृत्ति मार्गवाले भी दो विचारोंके पाये जाते हैं। एक वह जो कहते हैं कि संसारको भोगते हुए भी अपना न समझकर भोगना चाहिये अर्थात् मालीकी भांति यह समझते रहना कि बाग़ वास्तवमें मेरा नहीं है, मैं केवल उसकी देखभालके लिये ही भेजा गया हूं, इसलिये उसकी देखभाल रखनी चाहिये। ऐसे विचारको "वैराग्य"के नामसे पुकारते हैं। वेदान्ती इसी विचारके हैं और वैष्णव-सम्प्रदायवाले भी इसीके अनुयायी हैं।

दूसरा विचार यह है कि जब किसी वस्तुको अधिक भोगा जाता है, तो जीव नियमानुकूल उसके भोगसे उकताकर उसके त्यागकी चेष्टा करता है और फिर दूसरी वस्तुमें चित्त लगाता है। इसलिये प्रकृतिको खूब अच्छी तरह भोगना चाहिये ताकि जब कभी जन्म-जन्मान्तरमें जीव इससे उकता जावे, तो ईश्वरमें लीन हो जावे, क्योंकि संसारमें जीवके लिये जो भोगनेवाला है, प्रकृतिके सिवाय, जिसको भोग रहा है, केवल ईश्वर ही भोग्य रह जाता है, और प्रकृतिसे उकता जानेपर ईश्वरमें लीन होनेके अतिरिक्त और कोई बात रह नहीं जाती। इस विचारके माननेवाले प्रायः बहुत पुरुष हैं अर्थात् शाक्तधर्मी और पाश्चात्य देशोंके अनुयायी इसी विचारमें मग्न हो रहे हैं। इसको "अनुराग" कहते हैं। भारतवर्षमें त्यागकी मुख्यता थी और हर मतमें — जितने उस समयसे पहले थे जब कि पाश्चात्य की मञ्जुल मूर्तिने हमारे देशको मोहित न किया था — इसकी मुख्यता मिलती है, चाहे निवृत्ति रूपमें हो चाहे वैराग्य रूपमें। अब जबसे पाश्चात्य-देवीका आराधन हमारे भाई करने लगे हैं उनके मस्तिष्कोंसे त्यागके विचार शनैःशनैः बिलकुल काफूर होते जा रहे हैं।

यह अटल नियम है कि जब किसी एक वस्तुके बहुतसे ग्राहक हो जाते हैं तो उन सबमें आपसमें ईर्ष्या तथा द्वेषादि उत्पन्न होने लगते हैं और स्वार्थ धीरे धीरे अपना कौरिया-डेरा डेरा डाल लेता है। इसी नियमके अनुसार जो मनुष्य अथवा जो समाज वा देश अनुरागमें लीन हो प्रकृति अर्थात् मायाका ग्राहक हो जाता

उसमेंसे त्याग, परोपकार और अन्यान्य अच्छे अच्छे गुण-जिनपर भारतवर्षको गौरव था—मिट गये, और उनके स्थानकी पूर्ति ईर्ष्या-द्वेष तथा स्वच्छन्दता आदि दुर्गुणोंसे हो गयी। ऐसी अवस्थामें स्वेच्छाचारिताका बढ़ना और अशान्तिका फैलना अवश्य ही नियमानुकूल है। इस विचारमें लीन होनेसे मनुष्योंमें कर्त्तव्य-परायणता नहीं रहती, झूठा अभिमान उत्पन्न हो जाता है, सहनशक्ति नष्ट हो जाती है और वे छोटी-छोटी बातोंमें विकल या विह्वल हो जाते हैं। उदाहरणार्थ, जिस देशको सीताजी और अनसूया आदिके पतिप्रेम तथा सतीत्व-रक्षाके विचारोंपर गौरव था उस देशकी आज यह अधोगति हो रही है कि जिसको देख अथवा सुनकर हृदय विदीर्ण हो जाता है, लज्जासे सिर ऊपर नहीं उठाया जाता और यही कहना पड़ता है कि समय बड़ा बलवान है। श्रीमती डा० एनीबेसेन्टने इस देशकी गाथा लिखते हुए लिखा है कि "ये युवतियाँ, जो गलियोंमें भीख माँगती फिरती हैं, अपने पेटकी ज्वालाको शान्त करनेके लिये, दुष्टोंके प्रलोभनमें पड़ अपने अमूल्य सतीत्व-रत्नको नष्ट कर देती हैं।" हाय! कहाँ इस गये-गुज़रे कलियुगमें भी, जब मुसलमानोंका साम्राज्य था, पद्मावती जैसी स्त्रियोंका चरित्र मिलता है, और कहाँ यह लज्जास्पद, करुणोत्पादक तथा हृदय-विदारक दुर्दशा दृष्टिगोचर होती है। इतनाही नहीं, किन्तु आजकल समाजमें इसी पाश्चात्य-देवीकी कृपासे ऐसी अवस्था हो गयी है कि मनुष्य, देश और समाजमें, कर्त्तव्यको मुख्य नहीं

किन्तु गौण समझने लगे हैं और चाटुकारी आदिको मुख्यता देने लगे हैं।

हमारे पूर्व महर्षियोंने हमको यतलाया है कि यदि कोई मनुष्य देश, भेष, भाषा, आचार, धर्म, कर्म, सिद्धान्त और विचारपर दृढ़ रहकर स्वतंत्र दृष्टिसे विचार करता रहे तो वह मनुष्य केवल अपना ही नहीं किन्तु अपने कुटुम्ब, अपनी जाति, अपने समाज और अपने देशका भी उद्धार कर सकता है। इसका कारण केवल यही है कि उक्त बातोंपर विचार करनेवाले पुरुषमें प्रेम, सहनशीलता, कर्त्तव्यपरायणता, निर्भीकता, स्वदेशभक्ति, सची राजभक्ति तथा आत्माभिमान आदि उत्तमोत्तम गुण उत्पन्न हो जाते हैं, जो मनुष्यको अमानुषिक पथपर चलनेसे सदैव रोके रहते हैं; और प्राचीन कालसे, हमारे भारतवर्षमें ही नहीं किन्तु अन्य देश-देशान्तरोंमें भी, इन्हीं बातोंको देशोन्नतिकी कुंजी माना गया है। सेम्युएल स्माइल्स (Samuel Smiles) साहबने अपनी ड्यूटी (Duty) नामक पुस्तकमें विस्तारपूर्वक उल्लेख किया है कि कर्त्तव्यपरायणतासे ही मनुष्य इस संसारमें उन्नति कर सकता है। हमको संसारमें अनेक ऐसे ऐसे उदाहरण मिलते हैं कि मनुष्य ही नहीं किन्तु पशु तथा पक्षी आदि भी कर्त्तव्यपरायणताके गुण गाया करते हैं। घोड़ों और कुत्तोंकी एक नहीं सैकड़ों कहानियाँ ऐसी हैं जिनसे प्रतीत होता है कि वे कितने कर्त्तव्यपरायण होते हैं। महाराणा उदयपुरको, जब वह हल्दीघाटीकी लड़ाईमें चारों ओरसे शत्रुओंसे घिर चुके थे और

उनकी सेना मारी जा चुकी थी तब, उनके प्रिय घोड़े "चेतक" ने ही उस लड़ाईसे उनको बाहर सही-सलामत निकाल लिया था। अहह! चेतककी अपने मालिकके प्रति कैसी कर्त्तव्यपरायणता थी, जिससे केवल उसीका नाम जीवित नहीं है किन्तु उसीके कारण महाराणा प्रतापका भी यश विख्यात है, जिन्होंने आर्य्य-गौरव-रक्षाके लिये अनेक कार्य किये, जिनसे वह हिन्दूपति राणा कहलाये और जिनसे आज प्रायः हिन्दूमात्र और विशेषकर उदयपुरवासी अपनेको भाग्यशाली समझते हैं। इसके धन्यवादका पात्र "चेतक" ही हो सकता है, यद्यपि वह पशु है। इसी तरहसे हाथी, बन्दर, तोता और मैना आदिके भी हमको संसारमें विविध उदाहरण मिलते हैं, जिनके नाम आजतक केवल इसीकारण लिये जाते हैं कि उन्होंने अपने स्वामीके प्रति सच्चे कर्त्तव्यका पालन किया था।

मनुष्योंमें भी ध्रुव, प्रह्लाद, सत्य हरिश्चन्द्र, प्रणवीर महाराणा प्रताप, भामाशाह, वीर बालक (ज़ोरावर सिंह, फ़तह सिंह, हक़ीक़त राय), महर्षि दयानन्द सरस्वती, लोकमान्य तिलक आदि भारतवर्षमें और हज़रत मूसा, हज़रत ईसा, हज़रत मुहम्मद, हज़रत इमाम हुसेन, नौशेरवाँ बादशाह, अलक्षेन्द्र (सिकन्दर), महात्मा मेज़नी, महात्मा गैरीबाल्डी तथा महर्षि सुक़रात आदि अन्य देशोंमें ऐसे ऐसे महान् पुरुष हुए हैं जिन्होंने अपने धर्मपर आरूढ़ रहकर अपने अपने कर्त्तव्योंका, जो समयानुकूल उनको उचित प्रतीत हुआ, पालन किया। इसी तरह श्री आदिनाथ,

श्रीशान्तिनाथ, भगवान गौतम बुद्ध तथा भगवान महावीर स्वामी आदि इसी वास्ते पूजनीय हैं कि उन्होंने सदाचार, सहनशीलता, प्रेम तथा भक्तिमें अपनी दृढ़ता प्रकट की और अपने कर्त्तव्य-पालनमें प्राणपणसे तत्पर रहे।

परन्तु वर्तमान समयकी स्थिति बिलकुल ही विपरीत है, अर्थात् जिन बातोंको समाज अथवा मनुष्यके लिये पहले हानिकारक माना जाता था, आज उन्हीं बातोंको हितकर बतलाया जाता है। जहाँ पंच-महाव्रत-धारी मुनि और यती (यति) कहलाते थे वहाँ आज प्रायः पाँच स्त्रियोंको धारण करनेवाले हैं, और जहाँ भगवान वीरके आज्ञानुसार चलनेवाले थे वहाँ कलि महाराजके प्रेरणानुसार अपनी इन्द्रियोंके अनुगामी हो स्वेच्छापूर्ति करनेवाले दीख पड़ते हैं। जहाँ सत्यके लिये प्राण देकर भी दृढ़ रहते थे वहाँ छोटी छोटीसी बातोंपर झूठके पुल बाँध देते हैं। जो सत्य बोलनेकी डींगें मारते हैं वे काम पड़नेपर झूठा हलफ़ उठानेमें भी नहीं लजाते, और ऐसा प्रतीत होता है मानो उन्होंने प्राणपणसे पूर्वजोंके विपरीत चलनेकी प्रतिज्ञा ही कर रक्खी है। जहाँ कन्याको सुसराल के गाँवका पानी पीनेमें भी दोष समझा जाता था वहाँ आज कन्याओंको रुपयेके बदले भेड़-बकरियोंकी तरह बेचकर हीरों (कन्याओं) को पत्थरों (वृद्धों) के गलेसे बाँधते दिखायी देते हैं। जहाँ स्त्रियोंकी ओर आँख उठानेमें भी पाप समझा जाता था वहाँ आज खुल्लमखुल्ला शुभ अवसरोंपर वेश्याओंका नृत्य कराकर उनके हावभाव और

कटाक्षोंके शिकार होते हैं। जहाँ स्त्रियोंको कभी भी स्वच्छ रहनेकी आशा न थी वहाँ अब वे नौकरोंके साथ स्वच्छन्दतापूर्वक भ्रमण करती और विचरती हैं। जहाँ स्त्रियाँ पतिव्रता होती थीं वहाँ आज प्रायः पतियोंकी पर्वाह न कर शृङ्गारयुक्त हो मन्दिर और तीर्थोंमें भटकती फिरती हैं, और उन पवित्र स्थानोंको मनोरञ्जनालय तथा रङ्गमहल आदि बनानेकी चेष्टा कर रही हैं। जहाँपर सच्चे मित्रों और शुभचिंतकोंका देवताके समान आदर सत्कार किया जाता था वहाँ आज स्वेच्छाचारिता, स्वच्छन्दता तथा हठ (ज़िद) के वशीभूत हो अनेकानेक कुतर्कोंद्वारा उन्हींका पूर्ण अनादर तथा बहिष्कार किया जा रहा है और चापलूसों, धूर्तों, लम्पटों, वंचकों तथा चालबाज़ोंका सम्मान किया जाता है। जहाँका वायुमण्डल भगवद्-भजन, हरि-कीर्त्तन तथा वेद ध्वनि आदिसे गूँजा करता था, वहाँ आजकल पठित-मण्डली और विशेषकर ऐसे व्यक्ति, जिनका कर्त्तव्य आदर्श बनना है, अर्थात् अध्यापक आदि भी, हसीनों और साक़ीकी यादमें बावले प्रतीत होते हैं, और "इन हसीनोंका लड़कपन ही रहे ऐ अल्लाह!" "मज़ा देते हैं क्या यार तेरे बाल घूँघरवाले!"—"सैंयाँ तोरे पइयाँ लागूँ बहियाँ न मरोड़!"—"करिहइयाँ (कमर) न टूटे हमारि, बेदर्दा ऐ बालमा (प्रियतम)!"—"तोरे रसीले नैना ग़ज़ब ढाहैं!"—"आँखोंमें लाल डोरे कानोंमें बालियाँ, हमको ग़रीब जानकर देती हो गालियाँ!"—गोरिया (प्यारी) तिरछी नज़रिया, करेजवामें मारे बान!" इत्यादि मनोविकारपूर्ण

भ्रष्ट गीतोंकी सत्यानाशी प्रतिध्वनि वायुमण्डलको कलुषित करती हुई दिखायी देती है। आजकलके नवयुवक भी इन दोषोंके शिकार हो रहे हैं। क्या ऐसा कुप्रभाव प्राचीनकालमें भी नवयुवकोंपर डाला जाता था? इसका उत्तर कभी "हाँ" में नहीं दिया जा सकता, और यही कारण है कि पहले नवयुवक गृहस्थाश्रममें प्रवेश करनेके पश्चात् स्वर (नाद, शब्द) का आनन्द भोगते और देशहितकी नई नई बातें विचारते थे; परन्तु आजकल गृहस्थाश्रमको गरिष्ठाश्रम बनाकर स्वयं नरक भोगते हैं और देश तथा जातिको उठानेके बजाय रसातलको ले जाते हैं। जो लोग सार्वजनिक सभा-मंचोंपर खड़े होकर लम्बे-लम्बे हृदय-विदारक भाषण देते हैं और समाचारपत्रोंके कालमोंमें बड़े बड़े लेख छपाते हैं, प्रायः उन्हींके चरित्रोंको जब देखा जावे तो आदर्श तथा उद्देश्यसे कोसों दूर पाये जाते हैं। जो लोग प्लैटफ़ार्मों (Platform) पर खड़े हो गला फाड़-फाड़कर तम्बाकू तथा अन्य मादक वस्तुओंकी निन्दा करते हैं अर्थात् उनके गुणावगुणोंका विविध प्रमाण तथा युक्तियोंद्वारा दिग्दर्शन कराते हैं, वे ही कहीं तो शराबमें मस्त नज़र आते हैं, कहीं भंग-भवानीकी उपासना करते हुए पाये जाते हैं, कहीं मूँछोंपर हाथ फेरते हुए ज़र्दे और पानके डब्बे लिये फिरते हैं, कहीं दफ़्तरोंमें सभ्यतापूर्वक आसनारूढ़ हो (कुर्सीपर बैठ तथा मेज़पर पाँव फैलाकर) सुरती देवीकी (कुछ भाग हाथमें ले फाँकनेकी तय्यारी कर तथा कुछ भाग सरकारी कागज़ोंपर रखकर) भूरि भूरि प्रशंसा करते हुए

दृष्टिगोचर होते हैं, और प्राक्टिकल-मैन (practical man) बननेकी चेष्टा कर रहे हैं; कहीं कॉंग्रेस-मैन (Congress man) के आदर्श (माँग फाड़े, नंगे सिर, ज़र्दा-पान चावे अर्थात पूर्ण व्यसनी) बन भारतवर्षको गुलामीकी जंजीरसे मुक्त करने के लिये भ्रमण कर रहे हैं, और धुआँ निकालनेमें तो उनका मुँ जी० आई० पी० रेलवे-एंजिनको भी मात करता है। इन्हीं सम तथा आदर्श पुरुषोंकी देखादेखी स्त्रियाँ तथा बच्चे भी धड़ाधड़ इन्हींके रङ्गमें रँगे जा रहे हैं।

ये सब दोष क्यों हैं? इसका उत्तर यदि विचारपूर्वक दिया जाय तो यही हो सकता है कि वही समाज अथवा देश उन्नतिशील कहला सकता है जिसके निवासी केवल ग्रेजुएट अथवा पाश्चात्य रङ्गमें रँगे हुए विद्वान् न हों, किन्तु सुशिक्षित हों। शिक्षा हीके द्वारा मनुष्य उच्च कोटिका हो सकता है और लोक-परलोकका सुख पा सकता है। शिक्षाकी ज्योति जगमगाते हुए सूर्यकी नाईं छिपायी नहीं जा सकती। शिक्षाके बिना कोई ज्ञान नहीं हो सकता, और बिना ज्ञानके मोक्ष मिलना दुर्लभ ही नहीं किन्तु असम्भव है, और अशिक्षित होनेसे कोई भी इस लोकमें माननीय नहीं हो सकता।

परन्तु शिक्षा क्या वस्तु है,वह कैसे प्राप्त होती है, और वर्त्तमान समयमें, जबकि हर साल युनिवर्सिटियोंसे झुण्डके झुण्ड ग्रेजुएटके निकलते हैं, जनताके अन्दर ये सब दोष क्यों उत्पन्न हो गये हैं? ये प्रश्न विचारवान् पुरुषके मस्तिष्कमें रात-दिन

रटकर लगाया करते हैं और यही कहना पड़ता है कि आधुनिक शिक्षा वास्तविक रूपमें शिक्षा नहीं कही जा सकती। शिक्षा केवल तोता-रटन्त करने अथवा किसी डिग्री या डिप्लोमा ग लेनेका नाम नहीं है किन्तु शिक्षामें मनुष्यके आचार और विचार भी सम्मिलित हैं। शिक्षा ठोस होनी चाहिये। शिक्षाका मतलब ऊपरी हालतका अच्छा करना (general efficiency) ही नहीं किन्तु किसी दोषको न रखकर ठोस बनाना है। वास्तविक शिक्षाका उद्देश्य मनुष्योंमें कार्यकुशलता, सुशीलता तथा कर्त्तव्यपरायणता आदि सद्गुणोंको उत्पन्न कर उन्हें सच्चा मनुष्य बनाना है। सुशिक्षित पुरुष वही है जो जीवनके समस्त कार्योंको सुचारु तथा उत्तम रीतिसे करता हो और जो सुशील, सत्यव्रती तथा धार्मिक हो। इसीलिये सुशिक्षितको "भद्र पुरुष" के नामसे पुकारा जाता है।

शिक्षा केवल किसी लिपिके जाननेको ही नहीं कहा जा सकता। आजकलके विद्यालयों तथा पाठशालाओंको शिक्षालय नहीं कहा जा सकता; क्योंकि आजकलके अधिकांश अध्यापक न तो स्वयं ही उच्च कोटिके आचार-विचारवाले होते हैं और न वे दूसरोंको उच्च कोटिका बना सकते हैं, किन्तु वे स्वयं आचारहीन, आदर्शहीन, कर्त्तव्यहीन और धर्मशिक्षासे कोसों दूर होते हैं। इसलिये उनके शिष्योंपर भी स्वभावतः उन्हींका असर पड़ता है।

यह अटल नियम है कि यदि किसी गर्म चीज़को ठंडी चीज़पर रक्खा जावे तो थोड़े ही कालमें उन दोनों चीज़ोंमें समान

गर्गी हो जायेंगी। इसी नियमके अनुसार आजकलके वि-
जब अध्यापकोंके पास आते हैं तो उनमें भी वही दोष व गुण-
जो अध्यापकोंमें होते हैं—थोड़े ही कालमें उत्पन्न हो जाते हैं। और
वर्तमान समयके अध्यापक—केवल इसलिये कि वे वैतनिक होते
हैं और उनके वेतनका आधार लड़कोंके आचार-विचारपर निर्भर
नहीं रहता, किन्तु महीनेके दिनोंपर निर्भर होता है—यद्यपि व
परखनेकी चेष्टा नहीं करते कि विद्यार्थियोंमें क्या गुण या दो
पैदा हो गये हैं अथवा उनके आचार-विचार कैसे हैं। यदि को
बालक किसी दिन पाठशालामें नहीं आता, तो वे उस बालक
ग़ैरहाज़िरीका सबब पूछने या उसकी जाँच करनेकी चेष्टा नहीं
करते, और न उसे ऐसा न करनेको भविष्यके लिये समझाते हैं,
बल्कि उसपर जुर्माना करके उसके मा-बापका, यदि वे ग़रीब हों
तो, उत्साह भंग कर देते हैं। यदि किसी बालककी ग़ैरहाज़िरी
ज़ियादा हो या वह आचार-भ्रष्ट हो जावे तो उसके सुधारके लिये
आधुनिक समयमें सबसे बड़ा उपाय केवल यही है कि उसको
पाठशालासे निकाल दिया जाय, मानो गुप्त रीतिसे उसको यह
उपदेश दिया जाता है कि अब तुम अपने आचार भ्रष्ट करनेके
लिये स्वच्छन्द हो। यदि कोई बालक अपने माता-पिता आदिकी
सेवा नहीं करता अथवा उनकी आज्ञाओंका उल्लंघन करता है
और उनकी शिकायतें वर्तमान अध्यापकोंके पास पहुचती हैं, तो
वे केवल यह कहकर टाल देते हैं कि स्कूलके बाहरके कामोंके
लिये हम उत्तरदायी नहीं हैं। किन्तु, यदि अध्यापक महाशयके

ज्ञाका उल्लंघन होता है तो तत्काल ही बालकोंको बेंत आदिसे
ज़ा मिल जाती है। क्या इसका अर्थ यह नहीं है कि बालकोंको
ाता-पिता आदिकी सेवा और आज्ञाओंके पालन करनेका तो
पदेश दिया जाता है और शिक्षककी आज्ञाका पालन करनेके
लये भय दिखलाया जाता है? शिक्षालयोंको दण्डालय (जेल)
नाया जाता है! यही कारण है कि आजकल ऐसा कोई
विद्यालय या पाठशाला नहीं है, जिसके विद्यार्थियोंसे यह आशा
की जावे कि वे गृहस्थाश्रममें प्रवेश कर जातीयताका झण्डा
फहरावेंगे।

इन सब बातोंका कारण कुछ तो यह है कि माता-पिता
लड़कोंको सिवाय विद्यालयोंमें भेज देनेके उनकी और कोई देख-
भाल या सँभाल नहीं करते। उनकी कुशिक्षाका प्रारम्भ घरसे
ही हो जाता है अर्थात् स्त्रियाँ विवाह आदिमें तथा पुरुष होली
आदि उत्सवोंपर जब असभ्य और अश्लील शब्दों तथा गानोंका
प्रयोग करते हैं तो बालकोंके स्वच्छ हृदयोंको वे कुशब्द दूषित कर
देते हैं और फिर जब कभी मेलोंमें जाकर बालक देखते हैं कि
बड़े भाई तथा पूज्य चचा आदि भी अन्य युवती स्त्रियोंपर*नीबू,
नाशपाती, अनार, पान और खाटकी पुड़िया आदि फेंककर

* यहांपर यह एक विचित्र प्रथा है कि भिन्न भिन्न समयोंमें लोग मेलेके अवसरोंपर युवतियोंके ऊपर (नेत्र, कपोल, उर, जंघु आदि स्थानोंपर) नीबू आदि फेंक मनोरंजन करते हैं। ऐसे व्यवहारोंको युवतियां सहर्ष गौरवपूर्वक स्वीकार करती हैं। सुना जाता है कि यह प्रथा प्रायः राजपूतानाभरमें व्याप्त है।

अपने चित्तको प्रसन्न करते हैं, तो बालकोंके कोमल तथा पवि
हृदयोंपर इन दोषोंका यह दूसरा परत (तह) और बैठ जा
है। सात आठ वर्षके पश्चात् जब इन दोषोंसे उन अबोध बच्चों
हृदय आच्छादित हो जाते हैं तो उनके माता-पिताओंको उन
विवाहकी सूझती है और इस प्रकार वे अपने लड़कोंक
जीवन, "शैशवेऽभ्यस्त विद्यानाम्" पर अमल न करके "शैशवेऽ
विद्यानाम्" के अनुयायी होकर, नष्ट कर देते हैं। ऐसे बालक नि
पाठशालाओंमें भेजे जाते हैं। बाज़-बाज़ समाज और देशों
तो केवल ४ या ५ वर्ष पढ़ाकर ही लोग समझ लेते हैं कि हमा
लड़का सर्वथा योग्य तथा सुशिक्षित हो चुका। फिर उस
सांसारिक व्यवहारोंमें डाल देते हैं। बाज़ बाज़ जगह तो राज
ने भी ख़ास ख़ास समाजोंके ११-१२ वर्षके लड़कोंको यु
(बालिग़) मानकर भयंकर भूल की थी; परन्तु अब विद्याध्ययन
लिये इसको हानिकारक समझकर हटा दिया गया है। ऐ
नवयुवक समय पाकर जब अध्यापक बनने तथा अन्य नौकरि
ढूंढ़नेकी चेष्टा करते हैं, तो क्या वे जाति-सेवाका भाव अ
हृदयोंमें उत्पन्न कर सकते हैं अथवा इसके पवित्र महत्व
समझ सकते हैं? क्या ऐसे बालक बड़े होकर स्वदेश
स्वजातिका उद्धार करनेमें, जो मनुष्यमात्रका कर्त्तव्य है, स
हो सकते हैं? इन बातोंका उत्तर मिलता है—"नहीं"। प्र
रूपसे यही सिद्ध भी होता है। मेरा अनुभव है कि ऐसे नवयुव
के मस्तिष्कोंमें सबसे पहला भाव, जो गृहस्थाश्रममें प्रवेश क

र उत्पन्न होता है, दासता (ग़ुलामी) का है, अर्थात् वे नौकरी करनेकी चेष्टा करते हैं, और इसीका परिणाम यह हुआ है कि यदि किसी अपढ़ मज़दूरको रखना हो तो वह १५-२० रुपये मासिकपर नहीं मिलता और पढ़े-लिखे १०-१२ रुपयेपर तैयार रहते हैं। इतना ही नहीं, बल्कि ४०-५० रुपयेपर ग्रेजुएटोंके झुण्डके झुण्ड मारे मारे फिरते हैं। (यदि किसीको विश्वास न हो तो वे बड़ी सरलतासे अख़बारी दुनियाद्वारा इसका ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं) इसका मुख्य कारण एक तो यही है कि विद्यालयोंमें गुरु-शिष्य अर्थात् पिता-पुत्रका भाव अध्यापकों और विद्यार्थियोंमें नहीं होता (कहीं कहीं तो अध्यापकों तथा विद्यार्थियोंके मध्य ऐसा घृणास्पद व्यवहार सुना जाता है जो मनुष्य-सभ्यताके सर्वथा विरुद्ध है—हाय! पतनकी भी कोई सीमा होती है!) किन्तु जेलर और क़ैदियोंका होता है। इसलिये स्वभावतः बालकोंके हृदयोंमें, अध्यापकोंकी अनुचित हुकूमतों तथा कार्रवाइयोंको देखकर, यह भाव उत्पन्न होता है कि वे भी अपने देश और जातिके भाइयोंपर इसी प्रकारसे अनुचित व्यवहार कर आनन्द भोगें, और इसका एकमात्र उपाय सर्कारी नौकरी है। इसीलिये "चाहे ५ के २ कर दे, पर नाम दारोग़ा रख दे" के अनुसार वे छोटी छोटी तनख़्वाहोंपर इस नीच अभिलाषाको पूर्ण करनेके लिये नौकर हो जाते हैं। जब ऐसे नवयुवक किसी पदपर नियुक्त हो जाते हैं तो वे कर्त्तव्यपरायण अथवा सहनशील नहीं होते और भारतवर्षको उच्च बनानेके बजाय रसातलको पहुँचाते हैं।

कमीना, पाजी (Rascal) बतलाया जावे अथवा महात्माजीके पवित्र उद्देश्यको खुदग़र्ज़ी (स्वार्थपरायणता) तथा स्वेच्छाचारिता बतलाया जावे, या जहाँ नेताओंके कैलेण्डरोंको अथवा ऐसे अध्यापकोंके फ़ोटो या ऐड्रेसों (अभिनन्दनपत्रों) को, जो देश तथा जातिके लिये जेल-यात्रा कर चुके हों, फेंकवा या उतरवा दिया जावे।

राष्ट्रीय अर्थात् जनताकी ओरसे खोले हुए विद्यालयोंकी देख-रेख यदि ऐसे योग्य तथा कर्त्तव्यपरायण पुरुषोंके द्वारा होती रहे जिनमें चाटुकारी, व्यभिचार, स्वेच्छाचार और अभिमान न हो, तो निस्सन्देह ऐसी पाठशालाएँ, चाहे वे बालकोंकी हों या बालिकाओंकी, दूषित नहीं हो सकतीं और न ऐसे योग्य पुरुषोंके द्वारा प्रबन्ध की हुई कन्यापाठशालाओंको "विश्राम-भवन, रङ्ग-महल तथा ठहरनेका केन्द्रस्थान आदि" कहनेका साहस हो सकता है। इसलिये आधुनिक समयमें यदि सबसे अधिक सुधारकी आवश्यकता है तो केवल शिक्षा-प्रणाली, अध्यापकों तथा पाठशालाओंके निरीक्षकों और प्रबन्धकर्त्ताओंके सुधारकी ही है। ये ही डाइनमो (Dynamo) * रूप हैं अर्थात् सत्यासत्य-प्रचारके मूल कारण हैं, और इन्हींसे भली या बुरी जो धारा (Current) बहती है, वह तमाम देश और जातिमें गुज़रती और अपना प्रभाव डालती हुई चली जाती है। शिक्षकका कार्य बड़ा महत्वशाली है; क्योंकि जीवनका रहस्य और सच्चा मार्ग

* बिजली पैदा करनेका एक यन्त्र है।

मैं इस पुस्तिकामें तमाम नौकरियोंके गुणावगुणों न करके केवल शिक्षा-सम्बन्धी श्रेणीकी जाँच पाठकोंके रक्खूंगा, जिससे उनको भलीभाँति ज्ञात हो जायगा कि कार सुधारनेसे ही कार्योंमें स्वतः सुधार हो जाता है। इन त दोषोंका मुख्य तथा मूल कारण "शिक्षा-प्रणालीका दूषित हो है। इसलिये मैं आप लोगोंका ध्यान केवल इसी प्रधान का की ओर आकर्षित करूँगा।

भारतवर्षमें अंग्रेज़ी-राज्य, देशी-राज्य, भिन्न भिन्न संस्थाओं और समाजों तथा व्यक्तिगत पुरुषोंकी भी पाठशालाएँ हैं। इनमेंसे सर्कारी विद्यालयोंमें जो शिक्षा-प्रणाली है, उसके लि तो मैं कोई राय देना नहीं चाहता, क्योंकि वर्तमान समाचारप कांग्रेस तथा अन्य नेतागण उसके दोषोंका पूर्ण दिग्दर्शन क रहे हैं। मेरा विचार केवल उन विद्यालयोंके विषयमें है किसी समाज, जाति अथवा किसी व्यक्तिविशेषकी ओरसे खु हुए हैं। इन विद्यालयोंमेंसे निकले हुए नवयुवकोंमें देश त जातिकी सेवाके भावोंका होना अत्यावश्यक है; क्योंकि जनता इन पाठशालाओंके व्ययका भार केवल इसी उद्देश्यसे अपने ऊपर लिया है कि उनमें धार्मिकता, सत्यपरायणता, कर्त्तव्यपरायणता, जातीयता तथा स्वाभिमान आदि सचरित्रोंकी शिक्षा दी जावे, न कि वहाँ हमारे पूर्वजोंको जङ्गली तथा असभ्य, शिवाजी आदि पूज्य नेताओंको पहाड़ी चूहा (Mountain Rat), चोर, डाकू और महात्मा गाँधी जैसे उच्चतम कोटिके पुरुषको

…नेता, पाजी (Rascal) बतलाया जावे अथवा महात्माजीके …त्र उद्देश्यको खुदग़र्ज़ी (स्वार्थपरायणता) तथा स्वेच्छा…रिता बतलाया जावे, या जहाँ नेताओंके कैलेण्डरोंको अथवा …से अध्यापकोंके फ़ोटो या ऐड्रेसों (अभिनन्दनपत्रों) को, जो देश तथा जातिके लिये जेल-यात्रा कर चुके हों, फेंकवा या उतरवा दिया जावे।

राष्ट्रीय अर्थात् जनताकी ओरसे खोले हुए विद्यालयोंकी देख-रेख यदि ऐसे योग्य तथा कर्त्तव्यपरायण पुरुषोंके द्वारा होती रहे जिनमें चाटुकारी, व्यभिचार, स्वेच्छाचार और अभिमान न हो, तो निस्सन्देह ऐसी पाठशालाएँ, चाहे वे बालकोंकी हों या बालिकाओंकी, दूषित नहीं हो सकतीं और न ऐसे योग्य पुरुषोंके द्वारा प्रबन्ध की हुई कन्यापाठशालाओंको "विश्राम-भवन, रङ्ग-महल तथा टहरनेका केन्द्रस्थान आदि" कहनेका साहस हो सकता है। इसलिये आधुनिक समयमें यदि सबसे अधिक सुधार-की आवश्यकता है तो केवल शिक्षा-प्रणाली, अध्यापकों तथा पाठशालाओंके निरीक्षकों और प्रबन्धकर्त्ताओंके सुधारकी ही है। ये ही डाइनमो (Dynamo) * रूप हैं अर्थात् सत्यासत्य-प्रचारके मूल कारण हैं, और इन्हींसे भली या बुरी जो धारा (Current) बनती है, वह तमाम देश और जातिमें गुज़रती और अपना प्रभाव डालती हुई चली जाती है। शिक्षकका कार्य बड़ा महत्वशाली है; क्योंकि जीवनका रहस्य और सच्चा मार्ग

* बिजली पैदा करनेका एक यन्त्र है।

बतलानेवाला, ज्ञानरूपी चक्षुओंमें अंजन लगानेवाला और कुम्हारकी तरहसे मनुष्य-जीवनको जिस ढाँचेमें चाहे ढालनेवाला अर्थात् मनुष्य-जीवनके बनाने या बिगाड़नेवाला केवल शिक्षक ही हो सकता है। कारण, युवावस्थामें मनुष्य उन्हीं भावोंका अनुसरण करता है जो शैशवावस्थामें उसके हृदयपर अंकित हो गये हों, जैसा कि ऊपर बयान किया गया है। माता-पिता केवल स्थूल शरीरके जन्मदाता हैं और शिक्षक मस्तिष्कका, जो शरीरमें सबसे श्रेष्ठ है, तथा तमाम शरीरका शासक है, सुधारक है। शिवाजी, लार्ड क्लाइव तथा नेपोलियन बोनापार्ट जब पठन-पाठन न कर सके, तो यह उनके शिक्षकोंकी ही बुद्धिमत्ता थी कि उन्होंने उनको घोड़ेपर चढ़ना तथा कुश्ती लड़ना आदि कलाएं सिखाकर जातीयता तथा युद्धवीरताकी साक्षात् मूर्त्ति बना दिया, जिसका फल यह हुआ कि आज उनको बच्चा बच्चा केवल जानता ही नहीं किन्तु उनका नाम बड़े गौरवके साथ लेता है। श्रीरामचन्द्रजीने रावण जैसे चक्रवर्ती राजा और श्रीकृष्णचन्द्रजीने कंस जैसे महाप्रतापी राजापर जो विजय पायी, वह केवल उनके शिक्षकका ही प्रभाव था। परन्तु हाय! आज शिक्षक लोग भाड़ेके टट्टू बने हुए, कक्षामें ऊंघते तथा कुर्सीपर बैठे, मूंछे मरोड़कर या सिरोंपर हाथ फेरते हुए, महीनेके दिन पूरे कर देते हैं, और यदि किसीने बहुत मेहरबानी की, तो कोर्सकी किताबोंको "चित्रकूटके घाटपर भइ संतनकी भीड़" की भाँति तोता-रटन्त करा दिया। इसीसे भारतवर्ष आज शिक्षितमें नहीं कुलियोंके

…की गणनामें समझा जाता है। इङ्गलैण्डमें कोई वालक …सा नहीं होगा जिसको अध्यापकोंने सर वॉल्टर स्कॉट नामक …विकी "Breathes there the Man, with soul so dead. Who never to himself hath said. This is my own my native land…. ………." यह कविता न सिखायी और याद करायी हो। यही कारण था कि पिछले दिनोंमें, जब यौरप भयंकर संग्रामका शिकार हो रहा था, इङ्गलैण्डकी स्त्रियों, वालकों, युवकों और वृद्धोंने उसमें चन्दा करके सहायता दी। एक* युवतीकी वावत् तो, जो अत्यन्त सुन्दरी थी, यहाँ तक कहा जाता है कि उसने अपना चुम्बन (Kiss) वाज़ारमें केवल इसीलिये नीलाम किया था कि वह धन सहायतामें दिया जायगा। यह जातीयताका ही प्रभाव था कि युद्धके समयमें जब अनाज कम रह गया, तो वहाँके मनुष्योंने तौलकर अनाज लेना और

* इस परम सुन्दरी रमणीका यह व्यवहार हमारी आर्य्य-(हिन्दू)-सभ्यताके सर्वथा विरुद्ध तथा अनुचित है। ऐसे व्यवहारको, जहाँतक मुझे ज्ञात है, कभी भी यहाँ प्रधानता नहीं दी गयी है, और देना उचित है भी नहीं। किन्तु यह वहाँकी सभ्यताके विरुद्ध नहीं है। अतः पाठकगण यह समझ सकते हैं कि उस युवतीमें जातीयताका सच्चा भाव वहाँतक जम गया था कि उसने जाति तथा देश-हितके आगे अपनी सबसे प्रिय वस्तुको भी कुछ न समझा, तभी तो आज यह देश सब देशोंका सिरमौर बना हुआ है। भगवन्! क्या हमारे यहाँ भी जाति तथा देशमें जागृतिकी सच्ची लहर कभी लहरायेगी? बहुत हो चुका! शीघ्र दया कर दयालुताका परिचय दीजिये। हम केवल यही दया चाहते हैं कि हममें यह शक्ति उत्पन्न हो कि "सत्व" को इस भाँति कौड़ियोंके मोल न बेचें, उसके रक्षार्थ अपने पूर्वजों

खाना स्वीकार कर लिया। परन्तु हाय! भारतवर्षमें यह बात नहीं है। हम "जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी" को नहीं जानते और न हमारे हृदयोंमें यह बात बैठी हुई है कि—"जो भरा नहीं है भावोंसे, बहती जिसमें रसधार नहीं; वह हृदय नहीं है पत्थर है, जिसमें स्वदेशका प्यार नहीं" और न हममें वीरता है, न प्रेम है, न कर्त्तव्यपरायणता है। हाँ, फ़ैशन अवश्य है, और वह इतना बढ़ा-चढ़ा है कि बाज़-बाज़ आदमी तो अपनी मातृभाषा बोलना अथवा लिखना और स्वदेशी वस्तुओंका प्रयोग करना अथवा स्वजातीय रीति-रस्मोंका मानना भी अपमान-जनक समझते हैं। वसन्तोत्सव (होलिकोत्सव), में जब कि प्रकृतिमें भी विह्लता पैदा हो जाती है, आङ्गल देवीके उपासक फ़ैशनेबुल बाबू सम्मिलित होना असभ्यता समझते हैं। परन्तु बड़े दिनोंमें स्केटिङ्ग*

(राजा हरिश्चन्द्र तथा आदर्श सत्यवीर विद्यार्थी हकीकतराय आदि) की तरह सदा अचल रहें। पाठक गण! ज़रा इस १२ वर्षके नन्हे सत्यवीर आदर्श विद्यार्थी हकीक़तराय तथा आधुनिक समयके किशोरावस्था-प्राप्त विद्यार्थियोंकी स्थितिपर दृष्टिपात कीजिये—भेद खुल जायगा, चाटुकारीका चश्मा नेत्रोंसे हट जायगा, सत्यका दृश्य स्पष्ट दिखायी देने लग जायगा। इसी भारतके प्यारे हकीक़तने सत्यधर्मके रक्षार्थ लगभग सन् १८१४ ई० में उछल उछल कूद कूद कर सहर्ष अपना प्राण त्यागा। ओफ़...... समस्या बड़ी जटिल है, अक़्ल हैरान है। बन्धुओ! यदि अब भी चेत जाओ, तो ख़ैर है।

* (Skating) स्केटिङ्ग—बर्फ़पर चलनेके लिये एक प्रकारका जूता होता है, जिसको पहनकर बर्फ़पर दौड़ते हैं। यही अब एक खेल हो गया है, जिसका प्रचार यहाँ भी बड़े आदमियोंमें पाया जाता है।

करना, पहली एप्रिलको गन्दीसे गन्दी मज़ाक़ करके एप्रिल फ़ूल* बनाना, स्त्रियोंके साथ टेनिस † (Tennis) खेलना और भंगी आदि अछूत जातियोंसे, जब कि वे ईसाई होकर फ़ैशनमें आ गये हों, हाथ मिलाना सभ्यता तथा गौरव-जनक मानते हैं। ये तमाम बातें क्यों हैं ? इसका उत्तर पहले ही दिया जा चुका है कि अध्यापकों तथा पाठशालाओंके प्रबन्धकर्त्ताओंके कर्त्तव्यहीन होनेसे ही ये तमाम बातें पैदा हो गयी हैं। स्कूलोंमें न तो कोई कर्त्तव्य-परायणताकी पुस्तक पढ़ायी जाती है और न उसकी शिक्षा ही दी जाती है। धर्मसम्बन्धी कोई प्राकृतिक शिक्षा होती ही नहीं। वीर-रसकी पुस्तकें दिखायी नहीं जातीं। अत. यहाँसे फ़ैशनेबुल जेन्टिलमैन बने हुए तथा चाटुकारिताके भाव लिये हुए बालक निकलते हैं। इसका एकमात्र कारण यही है कि शिक्षक, जो सेनापतिकी तरह देशकी वर्तमान स्थिति ही नहीं किन्तु भावी राष्ट्रको सुधार सकते हैं, विद्यार्थियोंकी ओर ध्यान नहीं देते। यदि अध्यापक महोदय तथा शिक्षाविभागके अन्य कर्मचारिगण सच्चे आदर्श बन आज अपने कर्त्तव्य-पथपर आरूढ़ हो जावें, तो देखिये, कल ही देशकी कैसी काया पलट जाती है !

आधुनिक समयमें पालिसी (Policy) तथा डिप्लोमेसी

* एप्रिल फूल—जिस प्रकार भारतमें होलीके दिनोंमें मज़ाक करनेका प्रचार है उसी प्रकार अंग्रेज़ोंमें यहां पहली अप्रैलको मज़ाक करके लोगोंको "बेवकूफ़" बनाया जाता है, जिसको "एप्रिल-फूल" कहते हैं।

† टेनिस—यह एक प्रकारका गेंदका खेल है।

(Hypocrisy) के जाननेवाले तथा उसके व्यवहार करनेवालेको विद्वान् तथा नीति-निपुण कहा जाता है परन्तु यह विचार नहीं किया जाता कि ऐसे मनुष्योंकी योग्यताकी डींग, सत्यता, निस्स्वार्थता, परोपकारिता, दयालुता और न्यायप्रियता आदिकी प्रामाणिकता जनतामें केवल उसी समयतक माननीय हो सकती है, जबतक कि वास्तविकताका अंकुर प्रस्फुटित होकर दुनियाको सचेत न करे। सचेत होनेपर दुनिया "ऐसे व्यक्तियोंसे उदासीनता ही धारण करती है।" इसका उदाहरण इतिहासमें बहुत मिलता है। लार्ड डलहौज़ीकी अनेकसेशन-पालिसी (Annexation Policy) जब भारतीयोंपर प्रकट हुई तो लॉर्ड केनिङ्गके समयका भयानक काण्ड (सन् १८५७ का बलवा) उपस्थित हुआ। इसी तरह लार्ड कर्ज़नकी पालिसी जिस समय बङ्गालियोंको पार्टिशन-आफ़-बङ्गाल (Partition of Bengal) के विषयमें स्पष्ट हुई तो स्वदेशी आन्दोलनके नामसे ऐसा बीज अंकुरित हो गया कि जिसके रूप आज सत्याग्रह तथा स्वराज्यदल आदि हैं।

परन्तु यह सब कब होता है ? जब "अति" हो जाती है तब। जब कोई जाति, मनुष्य अथवा देश अपनी सीमाका उल्लंघन कर जाता है तो "उघरे अन्त न होय निबाहू, कालनेमि जिमि रावन राहू" की भाँति अन्तमें उसका भेद खुले बिना नहीं रहता और उस समय ऐसे पालिसीबाज़ोंका जो आदर और सत्कार होता है वह कालनेमि आदिके उदाहरणोंसे स्पष्ट है। लार्ड कर्ज़नका जो आदर अथवा लार्ड चेम्सफ़ोर्ड तथा श्रीमान् प्रिंस

ऑव वेल्सका जो सत्कार भारतीय कर्मचारियोंकी पॉलिसीके कारण हुआ वह किसीसे छिपा हुआ नहीं है। और भी ऐसे ही अनेक ज्वलन्त उदाहरण हमको मिलते हैं जिनसे पता चलता है कि "शेरे क़ालीं और है शेरे नयस्ताँ और है—" अर्थात् शेरकी खाल पहने हुए गदहे और वास्तविक शेरमें बहुत बड़ा अन्तर होता है। गत महासमरमें भारतवासियोंको यह कहकर ही सम्मिलित किया गया था कि हम सत्यकी रक्षाके लिये हस्तक्षेप कर रहे हैं, और सिपाहियोंको भर्ती होनेके बदलेमें आजन्म ही नहीं किन्तु पीढ़ियों तकके लिये ज़मीनें मुआफ़ीमें दी गयी थीं, और भी उनसे कई प्रतिज्ञाएँ की गयी थीं; परन्तु सुना जाता है कि समरान्त पश्चात् बहुतेरे सिपाहियोंकी वे मुआफ़ियाँ, जो पुश्तोंके लिये दी गयी थीं, ज़ब्त हो गयीं और उनकी सनदोंकी वही गति हुई जो नव्वाब सिराजुद्दौलाकी हारके बाद लॉर्ड क्लाइवने अमीचन्दके परवानेकी सनदोंकी की थी। इतना ही नहीं, किन्तु गत वर्षोंकी कॉंग्रेसके सभापतियोंकी वक्तृताएँ (स्पीचें) तथा नेताओंकी वक्तृताएँ हमको बतलाती हैं कि पंजाब-हत्या-काण्ड आदि भी उसी सहायताके बदलेमें पारितोषिकस्वरूप थे, जो भारतवासियों-ने महायुद्धमें सम्मिलित होकर सर्कारको दी थी—न कि और किसी दान-रूपमें।

निस्सन्देह ऐसे समयमें, जब कि पॉलिसी और डिप्लोमेसीकी आँधी चल रही हो, सत्य दिखायी नहीं दे सकता। महात्मा सुक़रातको सत्यपक्ष होनेके कारण ही विषका प्याला पीना पड़ा

था। उनका दोष केवल यही था कि उन्होंने उस समयके प्रधान राजनैतिक मनुष्यों (Politicians) की पोल खोली थी। मंसूरको सूली इसीलिये दी गयी थी कि वह अनलहक़ (अहं ब्रह्माऽस्मि) का सच्चा माननेवाला था, जो इस्लाम शरीअत (राह खुदाका बनाया हुआ तरीक़ा) के विरुद्ध है। महात्मा गैलीलियोको सूलीपर इसीलिये चढ़ाया गया था कि उन्होंने पोपकी पोल खोलकर जनताको बतला दिया था कि वास्तवमें लोग धर्मकी आड़में किस तरह पॉलिसीके शिकार हो रहे हैं। महाराणा प्रतापको घर-बार त्यागकर वनों तथा पर्वतोंमें इसीलिये भटकना पड़ा था कि उन्होंने अकबरकी पॉलिसीके विरुद्ध आवाज़ उठायी थी। महर्षि दयानन्द सरस्वतीने विषका प्याला इसीलिये पिया था कि उन्होंने पादरियों, महन्तों तथा मठधारियों आदिकी हिपॉक्रिसियोंकी धज्जियाँ उड़ाकर उनका वास्तविक स्वरूप जनताको दिखलाया था। परन्तु आज वह दिन है कि महात्मा सुक़रात, मंसूर, गैलीलियो, हिन्दूपति महाराणा प्रताप तथा महर्षि दयानन्द सरस्वती आदि सत्यवक्ताओंका जो आदर मनुष्य-हृदयोंमें है, वह कदाचित् लॉर्ड चेम्सफ़ोर्ड आदि वायसरायोंका नहीं है।

मेरा अभिप्राय इन तमाम बातोंसे यही है कि पालिसी तथा हिपाक्रिसीको जहाँतक हो सके निर्मूल करनेकी चेष्टा करनी चाहिए, क्योंकि भारतवर्षमें ऐसी हिपॉक्रिसीको गृहस्थाश्रममें तो क्या राज्यमें भी कभी प्रधानता नहीं मिली है। मैंने इसी भावको इस पुस्तिकाका आरम्भ किया है। इस समय तो और

किसी देश या जातिपर विचार न करके केवल भारतीय शिक्षाप्रणालीके सम्बन्धमें ही विचार करूँगा; क्योंकि शिक्षा ही मनुष्य-जीवनको बना या बिगाड़ सकती है जैसा कि विस्तृत रूपसे ऊपर कहा जा चुका है। शिक्षाके सम्बन्धमें भी मैं केवल उन्हीं विद्यालयोंको आपके समक्ष उपस्थित करूँगा जिनका सम्बन्ध सर्कारसे नहीं वरन् जनतासे है।

मुझको बीकानेरमें रहते तथा आजीविका कमाते लगभग ५ वर्ष हो चुके। मेरा सदासे यह अटल सिद्धान्त है कि किसीका सच्चा हितैषी अथवा शुभचिंतक कोई तभी हो सकता है जब कि उसके गुण व दोष, पॉलिसी रहित हो, उसको स्पष्ट बतला दिये जावें। यह सच है कि सत्यका प्रकाश इस समय, जब कि पॉलिसी और हिपॉक्रिसीकी घटाएँ चारों ओर छायी हुई हैं, नहीं फैल सकता परन्तु यह विचार कर कि " Truth may languish but cannot perish."—"सत्य क्षण-भर दबाया या कमज़ोर किया जा सकता है, किन्तु उसका नाश नहीं किया जा सकता, और वह जल्दी या देरसे अवश्यमेव इन घटाओंको छिन्न भिन्न करेगा"—मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूँ कि बीकानेरी जनताको यह बतला दूँ कि वास्तवमें उनका रुपया व्यर्थ नष्ट हो रहा है और उस रुपयेसे अहिंसाका प्रचार होनेके बजाय हिंसाका प्रचार बढ़ता जा रहा है।

बीकानेरमें * पर्युषणोंके दिनोंमें सैकड़ों रुपये क़साइयोंको

* पर्युषण—यह जैनियोंका एक महा पवित्र पर्व है।

केवल इसीलिये दिये जाते हैं कि वे उन दिनोंमें बकरे आदि न काटें। यह प्रथा जब चली थी, इसका पूर्णरूपसे पालन होता था, और राज्यकी ओरसे, केवल इसलिये कि जैन जनता यहाँ विशेष है, इस हिंसाके रोकनेमें सहायता दी जाती थी;परन्तु मुझे विश्वस्त सूत्रसे ज्ञात हुआ है कि अब पर्युषणोंमें बकरे आदि बराबर कटते रहते हैं। ऐसी अवस्थामें, इन रुपयोंके देते रहनेका अभिप्राय यही हो सकता है कि इन्हीं रुपयोंसे और बकरे लाकर काट दिये जावें, अर्थात् अहिंसा-धर्मकी जगह हिंसा और जैन-धर्मकी जगह शाक्त-धर्मका प्रतिपादन किया जा रहा है, जो पूर्वजोंकी नीतिके सर्वथा विरुद्ध है। इसी तरहसे बीकानेरमें और भी बहुत सी कुप्रथाएँ चली आती हैं जिनका अभीतक कोई सुधार नहीं हुआ है। उदाहरणार्थ, यतियोंके आचार-विचार किसीसे छिपे नहीं हैं; क्योंकि उनके पतित होनेके प्रमाण-स्वरूप यहाँ एक भिन्न जाति ही पायी जाती है; परन्तु फिर भी यतियोंकी जो आवभगत बीकानेरी जैनियोंमें की जाती है, शोचनीय है अर्थात् अभीतक भोलेभाले पुरुष अपनी स्त्रियोंको यतियोंसे उपदेश लेनेकी आज्ञा दे देते हैं। और यदि कोई वीरपुत्र, स्वर्गीय श्रीयुत कालूरामजी घड़ियाकी भांति, मना करता है तो उसके घोर विरोधी हो जाते हैं। इसी तरहसे रामसनेही आदि साधुओंकी गति सुनी जाती है जिनका हाल आगे चलकर बयान किया जायगा।

ऐसे ही उपदेशोंसे मनुष्योंमें सद्भावोंका अभाव हो गया है काम,क्रोध,मद, लोभ,ईर्ष्या और हठ (ज़िद) हदसे ज़ियादा बढ़

रही है। छोटी छोटीसी बातोंपर खूब मुक़द्दमेबाज़ी होती है, हज़ारों रुपये व्यय हो जाते हैं। मुझसे एक मित्रने कहा था कि * सुजानगढ़में एक धनाढ्य वैश्यने १० इंच ज़मीनके लिये हज़ारों रुपये व्यर्थ नष्ट कर दिये। इसी तरह बालविवाह, वृद्धविवाह कन्या-विक्रय, सट्टेबाज़ी, नशेबाज़ी †, ताशबाज़ी आदि कुप्रथाओंका प्रचार भी दिन-पर-दिन बढ़ता जाता है और कुछ दिन पहले तो यहाँपर फूट-देवीने इतना रङ्ग जमा लिया था कि स्थानकवासियों, समेगियों (समविज्ञों) तथा तेरापंथियोंमें ‡ रोटी और बेटीका व्यवहार बन्द करनेका लोग उद्योग कर रहे थे,

---

*सुजानगढ़—यह श्रीबीकानेर-राज्यान्तर्गत एक निजामत (ज़िला) है जो राजधानीसे लगभग ७५ मील दक्षिण-पूर्वमें स्थित है।

† नशेबाज़ी—यद्यपि राज्यकी ओरसे पवित्र तथा महत्वपूर्ण आज्ञा बच्चोंको तम्बाकू पीनेसे रोकनेके लिये सन् १९१९ ई० में जारी की गयी थी तथापि कर्मचारियोंकी कर्तव्यपरायणताका यह हाल है कि आज पर्यन्त कोई चालान या मुकदमा होना सुना नहीं गया। हालांकि दस-पाँच नहीं वरन् पचासोंकी संख्यामें नित्य-प्रति नन्हे-नन्हे बालक बीड़ा-सिगरेट आदि पीते हुए आम रास्तेसे गुज़रते रहते हैं। क्या ऐसी पवित्र आज्ञाकी अवहेलना करना ही राजभक्तिका चिन्ह है! हाय! एक वह समय था कि राजाज्ञापालनके हेतु धन ही नहीं, किन्तु प्राणतक दे देते थे, और आज यह दशा है कि ऐसी पवित्र आज्ञाके पालनकी ओर ऐसी उदासीनता है। यदि कर्मचारिगण ज़रासा ध्यान दे दें तो लाखों रुपये इस कुव्यसनमें व्यय होनेसे बच जावें और बच्चोंके जीवनमें उत्तम परिवर्तन हो जावे। नियमके लिये परिशिष्ट नं० १४ देखिये।

‡ ये सब जैन-धर्मान्तर्गत भिन्न भिन्न सम्प्रदायोंके नाम हैं।

अदालतोंतक नौबत आनेवाली थी, परन्तु ख़ैर हुई कि दुर्घटना ने भयङ्कर रूप धारण नहीं किया।

ये सब बातें यहाँ क्यों हो गयी हैं? इन सबका मूल केवल अशिक्षाका प्रचार है जैसा कि ऊपर बतलाया जा चुका है। कोई मनुष्य केवल विद्यालयोंमें पढ़ने तथा ग्रेजुएट* बननेसे ही शिक्षित नहीं हो सकता; किन्तु सद्व्यवहार तथा सदाचार करनेसे ही हो सकता है। बीकानेरी परिस्थितिको दृष्टिमें रखते हुए शिक्षालयोंके दो विभाग किये जा सकते हैं। एक समाजके गुरु अर्थात् मुनिसमाज, और द्वितीय विद्यालय।

गुरुओंकी स्थिति यहाँ, किसी मतको ले लीजिये, प्रायः अच्छी नहीं है। जो मनुष्य प्रत्यक्षमें हमारे धर्मोपदेशक, गुरु तथा नेता बनकर प्रेमकी बड़ी बड़ी डींगें मारते हैं, उनकी रगोंमें यदि विचारकर देखा जावे तो काले-ख़ूनकी धारा बहती प्रतीत होती है, और समय पड़नेपर समाजके जीवनपर ज़हरीली गोलियाँ छोड़नेमें सबसे आगे रहते हैं। उदाहरणार्थ, आर्य्य-समाज एक ऐसी धार्मिक संस्था है, जिसने भारतवर्षमें ही नहीं, किन्तु सारे संसारमें हलचल मचा दी है; परन्तु यहाँका समाज उन्नति करनेके बजाय अवनतिकी ओर अग्रसर हो रहा है। भारतवर्षमें शराबखाने और जूए-घर आदि पर कांग्रेसकी ओरसे धरने देकर (पिकेटिङ्ग करके) मादक वस्तुओं तथा जूएके व्यसन छुड़ानेकी चेष्टा की गयी थी; परन्तु यहाँपर आर्य्यसमाजकी मेम्बरीसे विसर्जन-पत्र देनेके लिये पिकेटिङ्ग (Picketting) का व्यवहार किया

* वह मनुष्य जिसने विश्वविद्यालयमें उपाधि पायी हो।

गया है। जिस समाजमें मान्य गुरुदत्त एम० ए० तथा पं० लेख-रामजी आर्य्य मुसाफ़िर जैसे वीर और निर्भीक पुरुष हुए हैं, उसी समाजमें यहाँ ऐसे भी पुरुष हैं, जिनको ज़रा-सा हुल्लड़ होनेसे मूर्छा आ जाती है। वहाँ तो आर्य्य-समाजियोंके प्रेमकी यह गति है कि घर-बार छोड़ अपने भाइयोंके सहायतार्थ अपनेको आपत्तिमें फँसा लेते हैं, और यहाँ यह पॉलिसी है कि समाजके उद्देश्योंसे गिर चाटुकारीद्वारा अपनेको बचाकर अपने भाईके गलेमें फन्दा डाल देते हैं। इसी तरहसे यहाँपर "रामस्नेही" मतका, जिसे जयपुरके रामचरण नामक एक रामानन्दी साधुने शाहपुरा०में राज्याश्रय प्राप्त कर सं० १८२४ में स्थापित किया था, प्रचार है। इसमें "साधुओंके जूठन खाने" और "रामनाम" के महामंत्रका उद्देश्य था और गुरुसेवाका भाव वैष्णव-मतानुसार बहुत ज़्यादा बढ़ा हुआ था। परन्तु अब यह गति है कि पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियाँ बहुत ज़्यादा चेली होती हैं, और उनके चरित्रकी यह हालत है कि ऐसी चेलियाँ अपने पतियोंका केवल निरादर ही नहीं करतीं, किन्तु उनका सर्वस्व नष्ट करनेके लिये तैयार रहती हैं। इस मतका प्रचार खुवारों (सुनारों)† और सुनारोंमें विशेषकर पाया जाता है। सुना गया है कि खुवारोंकी बड़ी न्याड़ (महासभा) में पंचायत-द्वारा यह निश्चित हो चुका है कि स्त्रियाँ रामस्नेही‡साधुओंके

---

० शाहपुरा—मेवाड़में एक रियासत है।

†—बढ़ई, जिसका पेशा लकड़ीका व्यवसाय करना है।

‡ रामस्नेही साधुओंके विषयमें यहाँके [illegible] जिसने

संसर्गसे चरित्रहीन हो जाती हैं, इसलिये यदि कोई स्त्री 'रामद्वारे' (रामस्नेही-साधुके आश्रम) में जावे या अपने गुरुको अपने घर बुलावे, तो वह न्यात (बिरादरी) द्वारा दण्डित की जायगी। यदि वास्तवमें इन साधुओंकी यही दशा है तो सुनारोंमें भी ऐसी ही पंचायतकी आवश्यकता है। इसी तरहसे गोस्वामी-समाज भी पूज्य माना जाता है और उनके छुआछूतके लौकिक आचार बहुत अच्छे प्रतीत होते हैं; परन्तु उनमें भी कहीं कहीं प्रेमका, जो धर्मका मुख्य अङ्ग है, अभाव ही पाया जाता है। मैंने सुना है कि वे प्लेगके दिनोंमें, केवल इस भयसे कि प्लेग न लग जावे, एक मृत गोस्वामीका दाह-संस्कार न कर मकान-ही-में छोड़ करके चले गये और अन्य जातिवालोंने सम्मिलित होकर उसका दाह-संस्कार किया।

इसी तरहसे ओसवालोंके गुरु मुनिसमाजकी दशा है। "मुनि" शब्द महान् है, मुनिसे बढ़कर कोई पुरुष श्रेष्ठ नहीं हो सकता, और भगवान वीरके शब्दोंमें मुनि उस महापुरुषको कहते हैं, जो सांसारिक बन्धनोंसे मुक्त हो, पंच महाव्रत धारण कर भगवान वीरके आज्ञानुसार चले और सांसारिक जीवोंसे केवल

है :—" इन लोगोंने अपना पेट भरने और दूसरोंका भी जन्म नष्ट करनेके लिये एक पाखंड खड़ा किया है, सो यह बड़ा आश्चर्य हमें सुनते और देखते हैं कि नाम तो धरा रामस्नेही और काम करते हैं रॉडस्नेहीका। गइ। देखो वहाँ रॉड़ ही रॉड़ भक्तोंको घेर रही हैं। यदि ऐसे पाखण्ड न बचें तो भारतवर्षमें देशकी दुर्दशा क्यों होती? ये लोग अपने चेलोंको ... गिनते हैं और स्त्रियाँ भी लम्बी पड़के दण्डवत्-प्रणाम करती हैं। एकान्तमें भी स्त्रियों और साधुओंसे लीलाएँ होती रहती हैं।"

सदुपदेश देनेका ही सम्बन्ध रक्खे। परन्तु गौतम और सुधर्म आदि मुनियोंमें और हमारे वर्तमान मुनियोंमें बिलकुल विपरीतता है। वे सच्चे आत्मत्यागी, वैरागी, क्षमाशील, सत्यपरायण, अहिंसा-प्रचारक और कुरीतियोंके नाशक होते थे। वे सवारीमें चलने या रात्रिमें किसी वस्तुके खाने या पासमें रखनेके अत्यन्त विरोधी थे; परन्तु आज उसी समाजमें ऐसा कुचक्र चल गया है कि प्रायः वे "अपने सिद्धान्तोंके प्रतिकूल चलनेवाले हैं और धर्म-सिद्धान्तोंकी हत्या कर नरककी तय्यारी कर रहे हैं।" उनमें इतनी फूट है कि धर्मान्तर्गत भिन्न-भिन्न सम्प्रदायोंके मुनियोंके समक्ष मस्तक झुकानेका निषेध करते हैं। द्वेष, दम्भ तथा फूट आदिके कारण ही कहीं मूर्त्ति-मण्डन और कहीं मूर्त्ति-खंडन—कहीं मुंह-पत्ती बाँधने और कहीं न बाँधनेकी चर्चा सुनायी देती है। तात्पर्य यह कि प्रेमके बदले ईर्ष्या तथा द्वेष आदिका प्रचार कर रहे हैं और इन्हींसे समाजकी हानिके कारण बन रहे हैं। उनकी कर्त्तव्यपरायणताकी यह हालत है कि १०-१० वर्षके बालकोंको साधु बना लिया जाता है, जो "धर्म और ईश्वर" को तो क्या समझ सकते हैं, जब कि वे यह भी नहीं जानते कि "साधु" शब्दके क्या अर्थ हैं और हम "दीक्षा" क्यों ले रहे हैं! इसका परिणाम यह होता है कि वे अबोध बालक-साधु जब कभी घरसे निकले किसी अच्छी वस्तुको देखते हैं, तो ज़िद कर बैठते हैं कि हम अमुक वस्तुको लेंगे। उस समय उनका सिरदार साधु अथवा अन्य साधु, जो साथमें होता है, उस वस्तुके न ग्रहण करनेका ज्ञानपूर्ण

उपदेश देता है। जब उस बालक-साधुके कोमल हृदयपर उपदेशका कुछ असर नहीं होता तो उसको धमकाता और डाँटता है। यह समस्या अति जटिल और हृदय-विदारक है। पाठकगण स्वयं समझ लें कि ऐसे अबोध बालकको इस प्रकार रोकना तथा समझाना कितना अहिंसात्मक कार्य्य है, और ऐसे व्यवहारसे समाजका कितना उद्धार हो सकता है! एक बार मैंने स्वयं देखा है कि एक बालक-साधु, जिसकी अवस्था १०-११ वर्षकी थी, अपने पिताके साथ, जो साधु हो गया था, गोचरी करते हुए (भोजनार्थ भिक्षा माँगते हुए) जिस समय एक मालिनके सामनेसे, जिसके पास बेचनेके लिये बेर रक्खे हुए थे, गुज़रा और कहने लगा कि मैं बेर लूँगा, उस समय उस साधु-पिताने बहुतेरा समझाया कि तुम साधु हो गये हो, बेर नहीं खा सकते, परन्तु बाल-हठके कारण उसने साधु पिताकी एक न सुनी। अन्तमें उस साधु पिताको उस समय उसको धमकी और ताड़ना देनी पड़ी। इसी तरहसे ओसवाल (जैन) समाजकी भक्ति यतियोंमें भी है; परन्तु अब ये वास्तवमें यति नहीं हैं। यती ब्रह्मचारी होते थे और ये अनाचारी प्रतीत होते हैं। यती भिक्षापर निर्भर थे; परन्तु आधुनिक यतियोंके यहाँ प्रायः रसोइयाँ बनती हैं। यति परिग्रहत्यागी और पंच-महाव्रतधारी थे; परन्तु अब रुपयोंसे प्यार करनेवाले हैं और दासियोंका मोह रखनेवाले हैं। इसके विषयमें स्वर्गीय वीरपुत्र श्रीयुत फालूरामजी बड़ियाने, जो ओसवाल (जैन) जातिमें एक जगमगाते हुए तारे

और जिनके दिलमें जातिकी कुरीतियोंने अग्नि प्रज्वलित कर दी थी, "ओसवाल समाजकी वर्तमान स्थिति" नामक पुस्तकमें, जो दिग्दर्शन कराया है अथवा "सन्योदय" से जो उद्धृत किया है, उसके कुछ निबन्ध यहाँपर उल्लेखनीय हैं:—

"यतिनि यतिके वर्गमें तो पाप शासन काल है।
होवें भला क्योंकर नहीं ? जब बाल-मुण्डन चाल है॥"
दिनमें पहिनते श्वेत कपड़ा रातमें गुल-रङ्ग है।
फिर भ्रूण-हत्या कर्म्म हो तो भेष रक्षक ढङ्ग है॥"

"वास्तवमें हमारे गुरु कहलानेवाले यति आज पतितावस्थामें हैं।" "भगवान वीरकी आज्ञाका उल्लंघन करना तो इन्होंने एक प्रकारसे अपना कर्त्तव्य ही मान रखा है। देखनेमें आता है कि यति जी महाराज फाटका लड़ाते हैं, चमड़ेके जूते पहनते हैं और रेल तथा घोड़ेपर सवारी भी करते हैं।" "वे हमारे पूज्य यति आदर्श ब्रह्मचारी थे। परन्तु उन्हींके शिष्य कहलानेवाले वर्तमान कई यति व्यभिचारी दिखाई पड़ते हैं।······" "कहाँतक इनकी हालतका चित्र पाठकोंके सन्मुख खींचा जाय, यहाँपर आज यह कह देना अनुचित न होगा कि यति-समाज आज अपने कर्त्तव्य-पथसे बहुत नीचे गिर गया।" इन वीतराग प्रभुके सिद्धान्तोंके विरुद्ध चलनेवाले तथा उनकी आज्ञाओंको पद-दलित करनेवाले भेषधारियोंकी अन्ध-भक्ति बढ़नेसे ही आज यह दिखायी देता है कि प्रायः यतियोंके घरोंमें किसी न किसी जातिकी एक चेली अथवा दासी अवश्य है। इसी

तरहसे यतिनियोंकी भी यही दुर्गति हो रही है। इनमें भी व्यभिचारका अंश बढ़ा हुआ है। किसी किसीने तो समाजपर इतनी दया अवश्य की है कि इस भेषको न लजाकर पातरें (रण्डियाँ) में सम्मिलित हो भोग-विलास करने लगी हैं। जिस समाजके पथप्रदर्शक ऐसी यतिनियाँ अथवा ऐसे यति या साधु हों, वह समाज अथवा देश कैसे उठ सकता है? उसमें प्रेम, उदारता, सहनशीलता, सत्यता, कर्त्तव्यपरायणता तथा देश हितैषिताके भाव कैसे उत्पन्न हो सकते हैं? जिस समाजमें स्त्री और पुरुष दोनों ऐसे नाममात्र भेषधारियोंके अन्ध-भक्त हों वहाँ उच्चादर्श अथवा उच्च भावोंका होना केवल कल्पनामात्र रह जाता है।

यह गति तो गुरु तथा उपदेशकोंकी है, जिनके हाथमें समाजकी वर्तमान स्थिति रहा करती है। अब ज़रा विद्यालयोंका भी दिग्दर्शन कीजिये, जो समाजके भविष्यको बनाने अथवा बिगाड़नेवाले हैं। बीकानेरमें यों तो कई विद्यालय हैं, किन्तु मेरा अभिप्राय केवल जनताके विद्यालयोंसे है। इसलिये विशेषतः मैं राजकीय स्कूलोंको न लेकर केवल कुछ मुख्य विद्यालयोंको, जिनके व्ययका भार भोली-भाली जनताको उठाना पड़ता है, आपके समक्ष रखूँगा।

यहाँपर एक श्रीमोहता-मूलचन्द-विद्यालय है जो स्वर्गवासी बाबू मोहता मूलचन्दजी (बीकानेर) के स्मारक-रूपमें खोला गया है और इसका मुख्योद्देश्य यही है कि शिक्षाका प्रचार हो; परन्तु इसके व्ययको देखते हुए मानना पड़ेगा कि यह उतना सन्तोष-

दायक काम नहीं कर रहा है जितनी कि व्ययके लिहाज़से आशा की जा सकती है। यहाँपर इस समय कक्षा ८ तक पढ़ाई होती है, कुल १३ अध्यापक हैं और छात्रोंकी संख्या लगभग २७० है। सन् १९२२ ई० में इसकी पढ़ाई बहुत गिरी हुई दशामें पहुँच चुकी थी; परन्तु अब फिर उसका कुछ उन्नत होना आरम्भ हुआ है। मैंने सुना है कि एक समय बाबू कृपाशंकरजी प्राश, एम० ए०, (चीफ़ जस्टिस, बीकानेर स्टेट)के सभापतित्वमें जब इसका वार्षिकोत्सव हुआ और उसमें विज्ञान-शास्त्र (Science)की कक्षाका टूटना घोषित किया गया, तो उक्त सभापति महोदयने इसपर दुःख प्रकट करते हुए विद्यालयके संचालकोंसे प्रार्थना की थी कि सायंससे छात्रोंकी विचार-शक्ति सदा बढ़ा करती है। यद्यपि इसपर स्वर्गवासी श्रीयुत पं० कृष्णशंकरजी तिवारी, बी० ए०, से वादविवाद (Discussion) भी हुआ था, किन्तु सायंसकी आवश्यकता प्रमाणित हुई थी, परन्तु खेद है कि अबतक उसपर विचार नहीं किया गया। कदाचित् प्रबन्धकर्ता महोदय आर्थिक दशा अच्छी न होनेका कारण बतलावें, परन्तु यह ठीक नहीं कहा जा सकता; क्योंकि जहाँतक मुझे मालूम हुआ है उसमें बहुतसी छात्रवृत्तियाँ (वज़ीफ़े) छात्रोंको दी जाती हैं, किन्तु यह विचार नहीं किया जाता कि वास्तविक रूपमें वे उस वृत्तिके अधिकारी भी हैं या नहीं। यहाँ अधिकारीकी केवल यही कसौटी है कि वे ब्राह्मण हों; परन्तु यह कसौटी खरी नहीं है, क्योंकि इससे बहुतसे अधिकारी वंचित रह सकते हैं और अनधिकारी लाभ

उठा सकते हैं। इतना ही नहीं वरन् पुस्तकें भी ब्राह्मण छात्रोंको दी जाती हैं। पुस्तक लिखते समय यह ज्ञात हुआ कि अब यह हटा दी गयी है। यदि यह सच है तो बड़े सन्तोषकी बात अध्यापकोंमें सम भाव रखनेकी अत्यावश्यकता है। इस विद्यालयमें कक्षा ५ से कक्षा ८ तक लगभग ३५ विद्यार्थी हैं, जिनको ४ अध्यापक, जो लगभग २०५)मासिक पाते हैं, पढ़ाते हैं अर्थात् उच्च कक्षाओंमें प्रति छात्र ५।।≈) मासिक, छात्रवृत्ति तथा पुस्तकादिके अतिरिक्त, व्यय होता है। लोअर प्राइमरी कक्षाओंमें मय वाणिका आदिके लगभग २३५ छात्र हैं, जिनपर लगभग ३४१) मासिक व्यय होता है अर्थात् प्रति छात्र लगभग १।≈)।। मासिक व्यय छोटी कक्षाओंमें होता है। सुना जाता है कि वर्तमान मुख्याध्यापक या० ईश्वरदयालजी, बी० ए०, का कार्य प्रशंसनीय है। यदि ये महानुभाव चापलूसी तथा स्वेच्छाचारिताके शिकार न हो सदा प्रेमपूर्वक सम-भाव हो सत्य-कर्त्तव्य-पथपर दृढ़ रहे, तो आशा की जाती है कि पाठशालाका भविष्य शीघ्र ही उज्वल दिखायी देगा।

इसी तरहसे यहाँपर श्रीराम विद्यालय, बी० के० विद्यालय, श्रीकृष्ण विद्यालय और अगरचन्द भैरूँदानजी सेठिया स्कूल हैं। इन उपर्युक्त चारों विद्यालयोंका कार्य्य भी व्ययके अनुसार सन्तोषदायक नहीं कहा जा सकता और न उचित रूपसे इनमें कोई उन्नति करता हुआ प्रतीत होता है। इसका कारण केवल यही है कि उनके मालिकोंने उनके कार्य्यकी देखभाल स्वयं न करके

प्रायः एक एक व्यक्ति (सेक्रेटरी) को स्थायी रूपसे सौंप दी है, जो अपने निज कार्यों तथा आजीविकाके अतिरिक्त ऐसा समय नहीं बचा सकते जो पाठशालाओंकी देखभालमें समुचित लगाया जा सके। ऐसी अवस्थामें व्यवस्थाका अस्थायी तथा असन्तोष-जनक रहना असम्भव नहीं है। इसलिये मालिकोंको, जो देशोप-कारार्थ अपने पसीनेकी कमाई व्यय कर रहे हैं,उचित है कि इनके प्रबन्धकी ओर भी पूर्ण ध्यान दें और ऐसे व्यक्तियोंको, जो विद्या-प्रेमी हों तथा समय भी निकाल सकते हों, इनका भार सौंप दें। इन चारों उपर्युक्त विद्यालयोंमेंसे प्रथम तीन तो जैनेतर (अजैन) जातियोंकी ओरसे खुले हुए हैं और शेष चौथा (अगरचन्द भैरूँ-दानजी सेठिया स्कूल) एक जैनोंकी ओरसे खुला हुआ है। इन सब विद्यालयोंका संक्षिप्त वर्णन आगे परिशिष्ट नं० २में देखिये।

बीकानेर-राज्यान्तर्गत भिन्न भिन्न शहरों तथा खास बीकानेर शहरमें ओसवाल- (जैन)-समाजकी संख्या धनाढ्योंमें अन्य जातियोंकी अपेक्षा अधिक है और वह समाज अन्य समाजोंकी अपेक्षा अपनेको सभ्य भी समझता है, परन्तु प्रबन्धादिमें उसकी दशा अन्य जातियोंसे विशेष शोचनीय है। वह न तो स्वयं कामसे वाक़िफ़ होनेकी चेष्टा करता है और न पूर्ण-रूपसे प्रबन्धकी ओर ध्यान ही देता है। यही कारण है कि गत वर्षोंमें एक्सचेंज (exchange) का भाव गड़बड़ हो जानेके कारण बहुतसे धनाढ्योंके दिवाले निकल गये। इसका असर ओसवाल (जैन) समाजपर विशेष पड़नेका यही कारण है कि वे स्वयं कार्योंको न

देखकर अपने मुनीमों तथा अन्य आदमियोंके भरोसे ... चैन
आनन्द करते हैं। इनमेंसे बहुत तो ऐसे हैं जो अपने बच्चे
काम सिखलाना तथा विद्याध्ययन कराना भी अप्रतिष्ठा ...
हैं। इसीलिये आज कलकत्ते में जब कि साधारणतः
वाड़ियोंकी गणना मुख्य व्यापारियोंमें है, इनका मिल (मि
वालों तथा युरोपियनों (Europeans) की खुशामद करते
दिन बीता करना है। कोई सच्ची तिजारत इनके हाथमें नहीं है
काम न सीखनेके कारण ही न तो ये मिल खोल ...
और न अन्य कोई ऐसी तिजारत कर सकते हैं कि जिसमें
दूसरोंके अधीन रहना न पड़े। प्रायः इनकी निपुणता यदि है
तो केवल सट्टेबाज़ीमें या युरोपियनोंकी खुशामदमें। रेलमें
यात्रा करते हुए इन लोगोंके साथ प्रायः जो व्यवहार होता है
अथवा अन्य मनुष्योंके प्रति जो इनका व्यवहार है। उसके
देखनेसे प्रतीत होता है कि उनमें सच्चा स्वाभिमान नहीं है।
-ये कमज़ोरियाँ और हानियाँ कदाचित् श्रीमान् बा० मया भाई
टी० शाह, बी० ए०, भूतपूर्व हेड्मास्टर तथा वर्तमान असि-
स्टेन्ट मास्टर श्री जैन-पाठशाला (बीकानेर) के कथनानुसार
इसलिये हैं कि "जैन-समाजमें जाग्रतावस्था कम नहीं है और
जैन-जातिमें शिक्षित पुरुषोंकी संख्या ४६.५ और स्त्रियोंकी ३.४
प्रति सैकड़ा सन् १९११ में थी।.........और विद्योन्नति और
जागृति उदासर, कलकत्ता और ओसियाँ (तथा बीकानेर) आदि
पाठशालाओंके" कारण ही है और "ये सब जागृतिके वास्तवि

चिन्ह हैं।" यद्यपि ये वियोन्नतिके चिन्ह शाहजी महोदयके विचारानुसार उन्होंने किसी "योगकी नवीन सिद्धि" (पाश्चात्य रंग अर्थात् बी० ए० होनेके) द्वारा प्राप्त की होगी। वास्तविक रूपमें सरकारी रिपोर्टोंसे क्या जागृति प्रमाणित करनेका "साहस प्रशंसनीय है?" इसपर यदि विचार किया जाय तो ज्ञात होगा कि उन्होंने "अपना कर्त्तव्यपालन कागज़ोंके आधारपर किया है।" वास्तविक रूपमें जो दशा या कमज़ोरियाँ हैं उन्हें इसलिये नहीं दिखलाया कि वह स्वयं उत्तर देते समय उस श्रेणीके मनुष्योंमें थे जिनको भविष्यका रचयिता कहना, यदि वह कर्त्तव्य परायण होते, तो अनुचित न होता। विचारपूर्वक देखनेसे यह स्पष्ट प्रतीत होगा कि ये तमाम कमज़ोरियाँ और हानियाँ अशिक्षा तथा अध्यापकोंके कर्त्तव्यहीन होनेके कारण ही हैं जैसा कि मैं ऊपर कह चुका हूँ। उदासर, कलकत्ता और ओसियाँ आदिकी पाठशालाओंका, जिनसे मैं बिलकुल अपरिचित हूँ, उदाहरण न देकर आज केवल श्री जैनपाठशाला (बीकानेर) को ही पाठकोंके समक्ष रखकर आशा करता हूँ कि वे इसपर पूर्ण विचार करेंगे कि वास्तवमें उनके द्रव्यका सद्व्यवहार हो रहा है या नहीं।

श्रीजैन-पाठशाला (बीकानेर) का आरम्भ सन् १९०७ ई० में शान्तमुनि महाराज श्रीचन्द्रविजयजीके हाथसे हुआ था और उन्होंने "जैन समाजकी भावी सन्ततिके सुधारके हेतु आधुनिक अँग्रेज़ी शिक्षाके साथ साथ समग्र व्यावहारिक व अगाध जैन सैद्धान्तिक शिक्षाके दिये जानेके लिये" ही इसका श्रीगणेश

किया था और "अपने निरन्तर उपदेशसे कतिपय शिष्योंकी प्रवृत्ति मासिक चन्दा देनेकी ओर झुकाई और फल-स्वरूपमें (श्रीजैनपाठशाला तथा कन्या-पाठशाला)दो पाठशालाएँ स्थापित हुई जो आरम्भिक अवस्थामें कुछ सालतक केवल पोशाल रूपमें" और अब विद्यालयरूपमें है। परम प्रसिद्ध मुनि महाराज श्रीवल्लभ विजयजीके शिष्य पंन्यास श्रीसोहन विजयजी महाराजके उद्योग एवं अनुग्रहसे (श्रीमान् सेठ—सुमेरमलजी उदयचन्दजी, कालूरामजी लक्ष्मीचन्दजी कोचर, जैवन्तमलजी मङ्गलचन्दजी रामपुरिया, आसकरणजी हज़ारीमलजी कोचर, प्रेमसुखदासजी पूनमचन्दजी आनन्दमलजी कोठारी, तेजकरणजी चाँदमलजी, रावतमलजी भैरवदानजी कोठारी, नेमीचन्दजी अमाणीकी पत्नी, लिखमीचन्दजी शिप्पाणी, इन्द्रचन्दजी गोविन्दलालजी वैद,दानमलजी शंकरदानजी नाहटा, चौथमलजी अमोलखचन्दजी सेठिया, जसकरणजी आसकरणजी नाहटा, जेठमलजी सुराना, धनसुखदासजी मेघराजजी लूणियाँ, मुन्नीलालजी सिरोहिया, मगनमलजी गणेशलालजी कोठारी, करमचन्दजी आसकरणजी सेठिया, हस्तमलजी लक्ष्मीचंदजी डागा, उदयचन्दजी ताराचन्दजी कोचर और मोहता लूणकरणजी कोचर आदि) उदार सज्जनोंने अनवरत उद्योग कर विद्यालय बनाया और लगभग डेढ़ लाख रुपयेका स्थायी फ़ंड इकट्ठा कर उक्त दोनों पाठशालाओंकी "स्थितिकी आशङ्का अंशतः निर्मूल" कर दी। परन्तु खेदसे कहना पड़ता है कि उक्त मुनिजी महाराज तथा श्रीमानोंने इसके प्रबन्धकी ओर

पूर्णरूपसे कभी ध्यान नहीं दिया और इसकी बागडोर बा० शिव-बख्शजी साहब कोचरके हाथमें पहले उपमंत्री और फिर मंत्रीकी हैसियतसे दे दी, जो स्वेच्छाचारिता तथा स्वच्छन्दतामें दक्ष हैं और उन (कोचर महाशय) की सत्य विडम्बना भी किसीसे छिपी नहीं है। उक्त श्रीमानोंने इन पाठशालाओंके जन्मदाता शान्तमुनि महाराज श्रीचन्द्र विजयजी तथा इसके पालनकर्त्ता पंन्यास श्री सोहन विजयजीके उद्देश्योंकी पूर्तिकी ओर कभी ध्यान नहीं दिया, और यही कारण है कि कभी पाठ-शालामें श्रीयुत बा० गोपालसिंहजी बैद तथा स्वर्गवासी श्रीयुत बा० कालूरामजी बर्डियाका प्रबन्ध न हो सका। श्रीयुत बा० गोपालसिंहजी बैद्ने तो विद्वान् होते हुए भी पाठशालामें कभी दिलचस्पी नहीं ली; पर श्रीमान् बर्डियाजीने तो पाठशालाके प्रबन्ध, पढ़ाई तथा अध्यापकोंके कर्त्तव्योंके लिये कई बार आन्दो-लन किया। उन्हीं आन्दोलनोंके कारण उक्त कोचर महाशयजी इतने रुष्ट हो गये कि श्रीमान् बर्डियाजीके देहान्त होनेपर, उनके मामा होते हुए, भी उनके न्यारेमें (अर्थीके साथ) तथा मृतक-संस्कारमें सम्मिलित नहीं हुए और न उनकी बीमारीमें, जो लगभग एक मासतक रही, कभी उनको देखना या उनका हाल पूछना पसन्द किया! परन्तु उक्त श्रीमान् बर्डियाजीके इतने ज़ोरशोरके आन्दोलनपर भी प्रबन्धकारिणी तथा जैन-समाजने कुछ ध्यान न दिया।

श्रीमान् स्वर्गीय बा० कालूरामजी बर्डिया कदाचित् बीकानेरी

जनतामें प्रथम पुरुष थे, जो ऑल-इण्डिया-कांग्रेस-कमेटी तथा कांग्रेसकी सबजेक्ट्स कमेटीके मेम्बर चुने गये थे। मेरे विचारमें उक्त बड़ियाजीने ही पार्टियोंके विरुद्ध, उनके चरित्रहीन होनेके कारण, आवाज़ उठायी थी। यह उन्हींका साहस था कि उन्होंने पाठशालाकी पढ़ाईके विषयमें यह आक्षेप किया था कि श्रीजैनपाठशालामें ऐसी पुस्तकें, जिनमें हमारे भारतीय नेता शिवाजी आदिको चोर तथा लुटेरा आदिके नामसे सम्बोधन किया है, नहीं पढ़ानी चाहिये, और यह भी सुना गया है कि कुछ दिनोंके लिये ऐसी पुस्तकोंको रोका भी गया था, परन्तु ये बातें उक्त कोठार महाशयकी सम्मतिके, जो अपने समाजमें आधुनिक पॉलिसीके अवतार गिने जाते हैं, सर्वथा विरुद्ध थीं; इसलिये श्रीमान् बड़ियाजीका आन्दोलन स्थायी रूपमें परिणत न हो सका। और फिर यही पुस्तकें जिनके श्रीमान् बड़ियाजी पूर्ण विरोधी थे, और प्रत्येक मनुष्य—जिसमें देश या जातिका कुछ भी प्रेम है—ऐसी पुस्तकोंका अवश्य विरोध करेगा, पाठशालामें नियत कर दी गयीं। यह बड़ियाजीका ही प्रेम था कि उन्होंने कोठार महाशयको समझानेकी चेष्टा की थी कि बा०बहादुरलाल-जी,बी० ए०,के विषयमें झूठी रचना करके यह उनकी मनध्याद

१ रोके

...। होनेपर स्वयं ही पाठशालाके कोठार

...न्द जायगा परन्तु कोठार महाशयने

...। पाठशालाका हिताहित न विचार-

...। ध्यान न दिया, जिसका परिणाम

यह हुआ कि कोचर महाशयकी ज़िदके कारण व्यर्थ ही बर्डिया-जीके कथनानुसार ख़र्चा मुक़दमा पाठशालाको भुगतना पड़ा। इसी तरह श्रीयुत बा० अभयराजजी नाहटाके विचारोंपर भी कोई ध्यान नहीं दिया गया और सम्भव है कि कोचर महाशयकी स्वेच्छाचारिताके कारण ही उनको निरुत्साह होकर पाठशालामें जो समय लगाते थे बन्द करना पड़ा हो।

कोचर महाशयकी इस स्वेच्छतावरितापर प्रबन्धकारिणी तथा जैन-समाजके इस ओर ध्यान न देनेका फल यह हुआ कि पाठशालाका कार्य"प्रशंसनीय और संतोषजनक" कोचर महाशय-के कथनानुसार नहीं कहा जा सकता। इसका दिग्दर्शन पूर्ण रूपसे आगामी परिशिष्ट न०२ से ज्ञात होगा। परन्तु इस समय मेरे सामने १६ वर्षों (१९०७-२३) की पॉलिसीयुक्त ग़लत रिपोर्ट मौजूद हैं जो जहांतक मैं समझता हूँ केवल इसीलिये निकाली गयी है कि मेरे आन्दोलनसे कोचर महाशयके प्रबन्धके विषयमें जो अरुचि जैन-जनताको हुई है उसको साफ़ करे। परन्तु इसमें भी कोचर महाशय अपनी चालबाज़ीसे बाज़ न आये अर्थात् झूठी बातोंसे अपनी स्वेच्छाचारिताको छिपानेकी चेष्टा और अपने मुँह मियाँमिट्ठू बनकर पाठशालाके कार्यकी प्रशंसा की है और उन्नति बतलायी है। इसका मुख्य आशय केवल यही है कि जनता उनकी स्वच्छन्दता आदिपर ध्यान न दे प्रत्युत उनके गुणगान करने लगे। परन्तु इस अनधिकार चेष्टासे अब, जैन-समाजकी आँखोंमें धूल नहीं डाली जा सकती। क्योंकि जनता बड़ी बड़ी

पॉलिसियोंको समझने लगी है, और जैन-समाज भी कुछ कुछ इधरकी और ध्यान देने लगी है। मैं उदाहरणार्थ कुछ बातें पेश करके बतलाऊँगा कि कोचर महाशयने अपने कर्त्तव्यपालनमें जैनसमाजको, केवल इस कारणसे कि उनके प्रबन्धके विषयमें कोई आशङ्का न हो, सत्यभ्रष्टतासे बहलानेकी कोशिश की है जो सर्वथा निर्मूल है

रिपोर्टपर एक रगड़

आप वार्षिक रिपोर्टमें लिखते हैं कि "उच्च शिक्षाका अभाव, सामान्यतः उसके लिये घृणा, अल्प वयस्क बालकोंको व्यवसायमें डाल देनेकी प्रथा और साम्प्रदायिक मतविभिन्नता आदि देशकालीन इन विकट परिस्थितियों" के कारण है और "आधुनिक विचारोंके पूर्णतः अभावके कारण पाठशालाओंके प्रबन्धकर्त्ताओंने देश, समाज और धर्मोंप्रतिके निज उद्देश्योंको सम्मुख रखकर पठन-क्रम आदि नियत किये थे। उन्हें पूरी तरह न समझकर साधारण जैन-जनताने अपनी मनमानी अल्प आवश्यकताओंपर ही ध्यान रखकर इन संस्थाओं (श्रीजैन-पाठशाला और कन्या पाठशाला) में अपनी अपनी संतानोंको शिक्षा दिलानेके ... पूरी सहायता नहीं दी" और "यहांकी जनतामें विशेषकर ... अभाव होनेका कारण छात्रोंकी अनुपस्थिति प्रतीत होती है। इस त्रुटिके निवारणार्थ अनेकशः (उदाहरणार्थ, स्थानीय श्री डूंगर कॉलेज, वॉल्टर नोबुल तथा संसारके अन्य सभ्य स्कूलोंकी अपेक्षा हाई स्टण्डर्डद्वारा पठन-पाठनमें असुविधा करने, छात्रोंको डिग्रे

करने अथवा तरक्की देनेके बजाय नीची कक्षामें उतार देने अथवा छात्रोंको उनके चरित्रोंके दुरुस्त करने तथा दूसरे स्कूलों-में न जानेके लिये बाध्य करनेके लिये बहिष्कार आदि उपायों) के विफल होनेपर गत वर्षसे एक मासिक पारितोषिक भी नियत किया गया है।" इससे बतलाया गया है, कि अन्य पाठशालाओं-की अपेक्षा इस पाठशालामें छात्र क्यों कम हैं। परन्तु वास्तवमें यह कारण छात्रोंके कम होनेका नहीं है, क्योंकि पाठशाला केवल जैन विद्यार्थियोंको ही नहीं वरन जैनेतरको भी पढ़ाती है और अब पाठशालाकी स्थिति ऐसी जगहपर है जहाँ पड़ोसी जैनी नहीं वरन जैनेतर अधिक हैं, और यदि कोचर महाशयके कथनानुसार जैन-समाजमें विद्योत्साह नहीं है तो भी जैनेतरों (अन्य जातियों) में तो उसका अभाव नहीं कहा जा सकता, क्योंकि कॉलेजमें तथा अन्य पाठशालाओंमें परिशिष्ट नं०२,४के अनुसार छात्र अधिक हैं। और जैन-समाजमें भी विद्याका अभाव कोचर महाशयके अनुयायी साहबोंके मतानुसार नहीं कहा जा सकता क्योंकि जैन-जातिमें "देखिये सौवमें सोंठ" शिक्षित पुरुषोंकी संख्या प्रति सैकड़ा ४६ ५ और स्त्रियोंकी ३ ६ थी जब कि हिन्दू जातियोंकी संख्या १० और ७ क्रमानुसार प्रति सैकड़ा सन् १९११ ई० में थी। क्या कोचर महाशयका कथन इसी आधारपर है? हाँ, शिक्षाका, जिससे जागृति हो सकती है, अभाव अवश्य कहा जा सकता है। जहाँ ऐसी संस्थाओंके प्रबन्धकर्त्ता, जिनमें देशके नवयुवक अथवा नवयुवतियाँ ढाली जाती हों, स्वच्छन्दतापूर्वक

विचरते हों वहाँ शिक्षाका अभाव होना कोई आश्चर्यजनक नहीं है। कदाचित् इस रिपोर्टके बनाते समय शाहजीसे परामर्श नहीं किया गया जो बेचारे विद्या (मर्दुमशुमारीकी रिपोर्ट-संख्या) और शिक्षाको एक ही समझे बैठे हैं। रहा यह कि "धार्मिक विषयमें मतविभिन्नता होनेके कारण पाठशालापर असर पड़ा है" यह भी सत्य नहीं कहा जा सकता, क्योंकि जिस बीकानेरमें ईसाई स्कूल खोलकर अछूत-जातिके छात्रोंको एकत्र कर सकते हैं, वहाँ छात्रोंका अभाव कैसे कहा जा सकता है ? और यदि थोड़ी देरके लिये विद्याका अभाव मान भी लिया जाय तो उसके भी मूल कारण कौंसर महाशय (मंत्रीजी) ही कहे जा सकते हैं, क्योंकि विद्याका उत्साह यदि बालकोंमें किया जाय तो यह प्रेम ऐसा नहीं है जो अंकुरित होकर पल्लवित न हो। परन्तु यहाँ तो स्वेच्छाचारिता तथा स्वच्छन्दताके आगे प्रेम टिक ही नहीं सकता और छात्रोंको उनके बहिष्कार तथा Degradation (कक्षासे नीचे उतार देने) आदिद्वारा उत्साहहीन करनेकी चेष्टा की जाती है—कदाचित् यही समाज-हितकर पॉलिसी हो।

इसी रिपोर्टमें आप लिखते हैं कि "प्राचीन कालमें और विशेषकर वर्तमानमें भी केवल उच्च धार्मिक विचार (उदाहरणार्थ, अध्यापकोंपर झूठे लांछन लगाना, उनसे साथ चालबाज़ी करना, ७ स्वार्थ-सिद्धिके लिये झूठ बोलना, पुराने नौकरोंको बातोंपर निकाल देना, स्पष्ट वक्ताओंका निरादर उनके सद्भावों तथा सदुपायोंको स्वेच्छा-

चारित्रके अधीन कर देना, चापलूसोंको अपनाना और छात्रोंका अनुचित बहिष्कार करना आदि आदि) ही प्रत्येक जातिके व्यक्तियोंके सङ्गठन एवं उन्नतिके मूल कारण माने गये हैं और माने जाते हैं, (इसीलिये मंत्री महोदय अर्थात् कोचर महाशयकी 'तुच्छ तुच्छ बातोंपर मतभेद होनेके कारण प्रबल ईर्षा व द्वेषाग्नि गुप्त वा प्रकटरूपमें' भभक उठती है)''' '''''यह कहते हुए मुझे अत्यन्त विषाद है, कि हमारी जैन-समाज भी मतविभिन्नतारूपी नागिन की दंष्ट्रामें बैठी हुई अपने श्वास-प्रश्वासद्वारा अपना विषैला प्रभाव सर्वत्र फैला रही है और यही एक मुख्य कारण है जो संस्थाओं (श्रीजैन-पाठशाला तथा कन्या-पाठशाला) की अभीष्ट उन्नतिमें बाधक हुआ है।" कोचर महाशयके इन विचारोंसे पाठक समझ सकते होंगे कि कैसी सत्य-विडम्बनासे काम लिया गया है और विषादका कैसा अभिनय दिखाया गया है। "नागिन" वाली उपमाने तो कविवर कालिदासजीको भी मात कर दिया। कदाचित् वह इसी भयसे जीवित न रह सके, क्योंकि जैन-समाजमें कोई ऐसा विषैला प्रभाव नहीं दिखायी देता जो जैनेतरों (अन्य जातियों)में कोई बाधा करे। सम्भव है कि कोचर महाशयके गूढ़ विचारोंमें वैदिक धर्मावलम्बियों (आर्य्य समाजियों)का यह आक्षेप हो कि मूर्त्ति-पूजाका विषैला प्रभाव हिन्दुओंपर जैनियोंका पड़ा है अन्यथा हिन्दुओंमें कभी मूर्तिपूजा न थी, परन्तु मैं इस रिपोर्टमें यदि प्रसङ्ग हो है तो नहीं समझ सका कि गङ्गाजीके रास्तेमें पीरोंके गीत क्यों गाये गये अथवा

मन्दिरोंमें कुरानशरीफ़ क्यों पढ़ी जाने लगी ? कदाचित् कोचर महाशयके विचारोंपर रिपोर्ट लिखते समय एकताका प्रतिबिम्ब जा पड़ा हो। इसी रिपोर्टमें कोचर महाशय (मंत्रीजी) एक जगह और लिखते हैं कि "इस संस्थाके खोलनेका दूसरा उद्देश्य जो वणिकों (वाणिज्य) की सम्पूर्ण शिक्षा देना निर्धारित किया है, उसमें प्रबन्धकारिणी भलीभांति फलीभूत हुई है, क्योंकि (कोचर महाशयके अनुभवानुसार) पठन-क्रम इस प्रकार रखा गया है कि अँग्रेज़ीकी चतुर्थ कक्षातक इस विषयकी पूर्ण शिक्षा (जो कालेजों तथा अन्य महाविद्यालयोंमें वर्षों पढ़ने तथा सहस्रों रुपये व्यय करनेपर भी अधूरी रह जाती है वह यहां अल्प ही कालमें थोड़े परिश्रमसे बिना किसी प्रकारके व्यय आदिके

है समाप्त हो जाती है (इसलिये संसारके चाहिए कि वे अपने अपने बच्चोंको व्यापार- शीघ्र कोचर महाशयकी संरक्षिनामें भेज दें— स दोनोंकी विशेष बचत है। ऐसा शुभा- आता। शीघ्र ध्यान दे लाभ उठाइये वरन् सदाके लिये पछताना रह जायगा, किन्तु क्या जब चिड़ियाँ चुग गयीं खेत")। अतः शिक्षा प्राप्त कर चुके हैं, वे अपने भलीभांति चलानेयोग्य होते गये हैं। अतः शयके यहांसे या ना कारखानोंमें शीघ्रातिशीघ्र

भर्ती करके व्यापारिक दशाको उन्नत कर संसारमें व्यापारका सदा स्थायी आदर्श स्थापित करें और विशेष जाननेके लिये कोचर महाशयसे सीधी लिखा-पढ़ी अर्थात् Direct Communication करें)। पाठकगण विचार सकते हैं कि कोचर महाशयने किस विचित्रतासे यहांपर अपने अनुभवका गुप्तरूपसे नाटक कर अपनी जनताको मोहित करनेकी चेष्टा की है।

कोचर महाशय (मंत्रीजी) ने अध्यापकोंके पाठशाला छोड़ते रहनेका कारण "छात्र-संरक्षकोंका सङ्कीर्ण विचार तथा उच्च शिक्षाकी ओर उनकी उदासीनता" बतलाया है; परन्तु यह भी सत्य नहीं है, क्योंकि प्रायः अध्यापक कोचर महाशयकी स्वेच्छाचारिता तथा स्वच्छन्दताको अपने स्वाभिमानके कारण सहन न कर छोड़ते गये और यही व्यवस्था अध्यापिकाओंकी भी रही है, जिसके प्रमाण पं० रमाशंकरजी विशारद और बा० भगवत सिंहजी विशारदके त्यागपत्र, बा० बहादुर लालजी बी० ए०के मुक़दमे और श्रीमती भगवती देवीके पत्र-व्यवहारसे पूर्ण रूपसे मिलते हैं। और स्वेच्छाचारिता तथा स्वच्छन्दता ही संस्थाओंकी क्षतिका मुख्य कारण रही है और इसी कारणसे अबतक यह संस्था हाई-स्कूल न बन सकी अथवा "बीकानेरमें जैन-समाज एक आदर्श-रूपको धारण करती (यदि कोचर-शाह जैसे आदर्श पुरुष तथा मैंबरान जैसे विचारोंके परामर्शदाता ऐसी पवित्र संस्थाओंके संचालक न होते) और यह रिपोर्ट भी अपना एक निराला ही ढंग (अर्थात् असत्य विचारोंसे जनताको धोखा देनेका भाव) न

रखती। शोक है कि तार आदि लिखने-पढ़नेके कार्यमें कुछ कुशल होते ही (कोचर-शाहके व्यवहारोंसे तंग आकर) छात्र संस्थाको छोड़ते रहे हैं जो परिशिष्ट नं० ३ (और इस पुस्तिकाके परिशिष्ट नं० ६ के मिलान करनेसे) स्पष्ट विदित हो जायगा।

मैंने ऊपर बतलाया है कि जातीय संस्थाओंमें जातीयताका भाव क़ायम रखते हुए बालक तथा बालिकाओंकी पढ़ाई तथा शिक्षा होनी चाहिए जो प्रायः नहीं मिलती है। यही अभाव इन दोनों पाठशालाओंमें पाया जाता है। महात्मा गांधीजीने आधुनिक स्कूलों तथा कालेजोंके बहिष्कारकी घोषणा इसी विचारको लेते हुए की थी कि इन विद्यालयोंमें नवयुवकोंके अन्दर राष्ट्रीयता अथवा जातीयताका भाव नहीं डाला जाता, वरन् दासता(गुलामी) का संचार उनकी रग रगमें हो जाताहै। इसका परिणाम यह होता है कि नवयुवक पढ़ाई समाप्त करते ही किसी कार्यको पसन्द न कर नौकरीकी खोजमें भटकते फिरते हैं और इसके न मिलनेपर बहुतोंने तो आत्मघात कर लिया है और बहुतसे भूखों मरते हैं। यही बात यहां श्रीजैन-पाठशालामें भी पायी जाती है। इस पाठशालामें सिवाय मामूली वाणिका-
र कोई काम वाणिज्य (Commerce) अथवा कलाकौशल-
विशेष रूपसे नहीं सिखाया जाता। इसीलिये
कोंके संरक्षक इस विचारसे कि उनके लड़के केवल
सीखकर कहीं नौकरी की शृंखलाओंमें चलते
के व्यापारको तिलांजलि दे कोचर-शाहकी तरह न

जकड़ जावें, सम्भव है कि अपने लड़केको पाठशालासे उठा लेते हों। यदि यह पाठशाला प्रेम-महाविद्यालय (वृन्दावन) आदिका अनुकरण कर जातीयताका ध्यान रखते हुए पठन-पाठन कराती, तो निस्सन्देह इसमें विशेषकर जैनसमाजके बालक, जो व्यापारमें आजकल अग्रगण्य होनेकी चेष्टा कर रहे हैं, आते और पठन-पाठन न त्यागते; परन्तु इस उद्देश्यकी भी अबतक पूर्ति नहीं की गयी है। इसका मूल कारण केवल बोम्बर महाशयका प्रबन्ध है।

एक मुख्योद्देश्य इन पाठशालाओंमें धार्मिक शिक्षाका है "परन्तु अभीष्ट योग्यता किसीको प्राप्त नहीं हुई, जिसका कारण योग्य धर्म-शिक्षकोंके न मिलनेके सिवाय" हिन्दी व संस्कृतकी अज्ञानता बतलायी जाती है। यह कारण भी मान्य नहीं हो सकता। क्योंकि मिशन, दयानन्द, सनातनधर्म तथा मुसलिम आदि विद्यालयोंमें प्रारम्भिक कक्षाओंके छात्र अंग्रेज़ी, हिन्दी, संस्कृत और अरबी आदिके ज्ञाता नहीं होते, परन्तु फिर भी धार्मिक शिक्षाका भाव उनमें अवश्य पाया जाता है। यहाँ इसके अभावका कारण भी यही उक्त स्वेच्छाचारिता और सज्जन पुरुषोंकी अवहेलना है।

रिपोर्टके विषयमें केवल एक दो बातें और दिखलाऊँगा जिससे यह विदित हो जावे कि "फैक्टस ऐण्ड फ़िगर्स (Facts and figures)" [illegible] गणना अंग्रेजोंद्वारा आधुनिक पॉलिसीके अनुसार इसलिये की गयी है कि [illegible] पाठशाला-

की प्रावन्धिक दशाका वास्तविक स्वरूप दिखायी न दे और जनत अब भी उसी भ्रममें रहकर, जिसमें अवतक थी, प्रवन्धकर्त्ता कोचर महाशयकी भूरि भूरि प्रशंसा करती रहे। उदाहरणार्थ मैं पिछले वर्षोंको न लेकर केवल अपनी मौजूदगी (१६२१—२३, का दिग्दर्शन कराता हूँ जिनको जनतामें बहुतसे लोग, जिनका पाठशालासे सम्पर्क रहा है, भूले न होंगे। आप (बा० शिव-बख्शजी साहिब कोचर, मंत्री) पाठशालाकी १६ वर्षीय (१६०७—२३) रिपोर्टके परिशिष्ट नं० ३में यह स्वीकार करते हैं कि सन् १६२१ ई०में कक्षा ८ थी और उसमें भंवरलाल कोचर, भीखम-चन्द कोठारी और लालचन्द भादाणी ये तीन छात्र थे किन्तु उसी रिपोर्टके परिशिष्ट नं० ४ तथा ५ में अपने इस कथनको नितान्त निर्मूल बतलाते हैं अर्थात् उपर्युक्त कक्षा तथा छात्रोंका पूर्णतः अभाव दिखलाते हैं। ये तीनों उपर्युक्त छात्र पुरानी रीत्य-नुसार स्थानीय श्रीडूँगर कॉलेजमें सन् १६२१ ई०की परीक्षामें भेजे गये थे, किन्तु सब अनुत्तीर्ण हुए अर्थात् शून्य प्रति सैकड़ा परीक्षा-फल रहा। इसपर पाठशालाकी ओरसे श्रीमान् बा० सम्पूर्णानन्दजी साहिब बी० एस-सी, एल० टी० लेट हेडमास्टर श्रीडूँगर कॉलेजसे पुनः परीक्षा (Re-Examination) लेनेकी प्रार्थना की गयी। उक्त महोदयने, जो शान्ति, कर्त्तव्यपरायणता तथा देशहितैषिताकी साक्षात् मूर्त्ति हैं, फिर देखभालकर बड़ी कठिनाईसे एक छात्रको अपनी दयालुतासे उत्तीर्ण किया। यह महाशयकी पॉलिसी तथा सत्यताका नमूना है। यहांपर

आपने किस चातुरीसे काम लेकर जनताको मूर्ख बनानेकी चेष्टा की है ! क्या ऐसी वीरता इनके अतिरिक्त और कोई दिखा सकता है ! इसके सिवा निम्नांकित कोष्ठकोंसे कोचर महाशयके कथनानुसार "बा० मथाभाई टी० शाह बी० ए० जैसे योग्य मुख्याध्यापक और पं० रामेश्वरदयालजीकी नियुक्तिसे" पाठशालाकी जो उन्नति हुई है, विदित होगी और यह भी प्रकट हो जायगा कि ऐसी पॉलिसीके द्वारा "प्रबन्धकारिणीका उद्देश्य अधुना अवश्य ही फलीभूत होगा" या नहीं:—

परीक्षा-फल सन् १९२२ ई०

फोनर महाशय के लेखानुसार परीक्षा-फल					वास्तविक परीक्षा-फल				
कक्षा	संख्या	उत्तीर्ण	अनुत्तीर्ण	प्रतिशत	कक्षा	संख्या	उत्तीर्ण	अनुत्तीर्ण	प्रतिशत
७	५	४	१	८०	७	५	१	४	२०
३	७	६	१	८५.७	३	७	५	२	७१.४
२	१७	१६	१	९४.२	२	१७	१२	५	७०.६
१	१५	१३	२	८६.६	१	१३	१०	३	७६.९

परीक्षा-फल सन् १९२३ ई०

कक्षा	संख्या	उत्तीर्ण	अनुत्तीर्ण	प्रतिशत	कक्षा	संख्या	उत्तीर्ण	अनुत्तीर्ण	प्रतिशत
७	६	३	३	५०	७	६	०	६	*—०
६	२	२	०	१००	६	२	१	१	५०
५	५	३	२	६०	५	५	०	५	०
४	५	५	०	१००	४	५	४	१	८०
२	१४	८	६	५७.१	२	११	४	७	३६.४

*—सन् १९२३ ई० की परीक्षामें कक्षा ७ के ६ परीक्षार्थियोंमेंसे कोई भी उत्तीर्ण नहीं हुआ, बल्कि न्यायी तथा विचारशील कौंचर महाशयने छात्रोंको डिमेड कर दिया। ऐसी अवस्थामें परीक्षा-फल शून्यके स्थानमें माइनस शून्य (—०) अवश्य ही प्रतिशत कहा जायगा। यह कार्रवाई स्वयं स्वेच्छाचारी कौंचर महाशयने शाहजीकी कार्रवाईके पश्चात् की है। शाहजी "डिग्रेडेशन" के पक्षमें कदापि न थे, बल्कि वह तो अध्यापकोंसे परामर्श लेकर कतिपय छात्रोंको "प्रोमोशन" देनेका निश्चय कर चुके थे। सचमुच यह कर्त्तव्य मुख्याध्यापक (शाहजी)'का था, न कि मंत्रीजी (कौंचर महाशय) का। किन्तु शाहजी करते तो क्या करते—यहांपर तो "अन्धोंमें काना (जिसके एक नेत्र हो) राजा" के अनुसार कौंचर महाशय ही सब कुछ हैं। ऐसा सम्मान शाहजीके अतिरिक्त, कोई दूसरा, जिसमें लेशमात्र भी स्वाभिमान होगा, कदापि स्वीकार नहीं कर सकता। सच है, "पेट सब कुछ करा देता है"—जिसने पेटकी सुनी उसने मान-मर्यादा सब कुछ खोया।

परीक्षा-फल सन् १६२२ ई०

कक्षा	क्रम-संख्या	नाम विद्यार्थी	फल	कक्षा	क्रम-संख्या	नाम विद्यार्थी	फल
७	१	शिवकृष्ण स्वामी	उत्तीर्ण	५	१	सूरजमल बोथरा	उत्तीर्ण
"	२	हरीसिंह राजपूत	अनुत्तीर्ण	"	२	मोहनलाल रांका	"
"	३	चाँदमल दर्ज़ी	"	"	३	मंगलचन्द कोचर	"
"	४	जेसराज सुनार	"	४	१	आनन्दचन्द मालू	"
"	५	फ़तहचन्द कोचर	"	"	२	[illegible] मालू	"
६	१	भँवरलाल वैद	उत्तीर्ण	"	३	मोहनलाल राजपूत	"
"	२	मोतीलाल वैद	"	"	४	श्रीकृष्ण पुगलिया	"
	३	मुकुन्दलाल कोचर	"				

कक्षा	क्रम सं०	नाम विद्यार्थी	फल	कक्षा	क्रम सं०	नाम विद्यार्थी	फल
३	१	रतनलाल सुराना	उत्तीर्ण	२	१२	कालूराम उर्फ गुलाबचन्द सुराना	उत्तीर्ण
,,	२	जेसराज कोचर	,,		१३	भीखमचन्द बैद	अनुत्तीर्ण
,,	३	भँवरलाल कोचर	,,	,,	१४	छगनमल पारख	,,
,,	४	जीवनलाल कोचर	,,	,,	१५	केशरीचन्द पारख	,,
,,	५	राधाकृष्ण सोनार	,,	,,	१६	चम्पालाल कोचर	,,
,,	६	रेखचन्द सेठिया	अनुत्तीर्ण	,,	१७	जेठमल सेठिया	,,
,,	७	राजमल कोठारी	,,	,,			
२	१	शिखरचन्द कोठारी	उत्तीर्ण	१	१	मोहनलाल कोचर	उत्तीर्ण
,,	२	भँवरलाल बोथरा	,,	,,	२	अनन्तलाल सिरोहिया	,,
,,	३	कन्हैयालाल बोथरा	,,	,,	३	भँवरलाल कोचर (१)	,,
,,	४	बंशीलाल कोचर	,,	,,	४	भँवरलाल कोचर (२)	,,
,,	५	रिखबचन्द कोचर	,,	,,	५	धनराज भणशाली	,,
,,	६	मानमल कोचर	,,	,,	६	नथमल लूणिया	,,
,,	७	धनराज कोचर	,,	,,	७	छगनमल सेठिया	,,
,,	८	कर्मचन्द कोचर	,,	,,	८	कृष्णलाल पुरोहित	,,
,,	९	पानमल सिरोहिया	उत्तीर्ण	,,	९	अमोलखचन्द कोचर	,,
,,	१०	रिखबचन्द सेठिया	,,	,,	१०	गिरधरलाल मेरक	,,
,,	११	रतनलाल चोरड़िया	,,	,,	नं०	११, १२ तथा १३	अनुत्तीर्ण

कक्षा	क्रम संख्या	नाम विद्यार्थी	फल	कक्षा	क्रम संख्या	नाम विद्यार्थी	फल
८	१	शिवकृष्ण स्वामी*	अनुत्तीर्ण	५	४	माणिकचन्द खज़ांची	अनुत्तीर्ण
७	१	हरीसिंह राजपूत	"	"	५	जेसराज वैद	"
"	२	चाँदमल दर्ज़ी	"	४	१	राधाकृष्ण सोनार	उत्तीर्ण
"	३	मुकुन्दलाल कोचर	"	"	२	जीवनमल कोचर	"
"	४	भँवरलाल वैद	"	"	३	जेसराज कोचर	"
"	५	जेसराज सुनार	"	"	४	रतनलाल सुराना	"
"	६	चतुर्भुजसिंह राजपूत	"	"	५	भँवरलाल कोचर	अनुत्तीर्ण
६	१	सूरजमल बोथरा	उत्तीर्ण	३	१	शिखरचन्द कोठारी	उत्तीर्ण
"	२	मोहनलाल सेवक	अनुत्तीर्ण	"	२	रिखबचन्द सेठिया	"
५	१	अगरचन्द नाहटा	"	"	३	मानमल कोचर	"
"	२	भँवरलाल नाहटा	"	"	४	पानमल सिरोहिया	अनुत्तीर्ण
"	३	सोहनलाल राजपूत	"	"	५	रिखबचन्द कोचर	"

* शिवकृष्ण स्वामी— इसका नाम कक्षा ८ में नाममात्रको लिखा था, किन्तु पढ़ाई आदि कक्षा ७ के साथ सालभर-तक की गयी, कोई नयी बात नहीं पढ़ायी गयी। परीक्षामें, यह सोचकर कि कक्षा ७ तो प्रथम श्रेणीमें पास कर चुका हूँ, सम्मिलित नहीं हुआ। धमकाये जानेपर, कि परीक्षामें सम्मिलित न होनेसे पाठशालासे निकाल दिया जायगा, बेचारेको मजबूरन सम्मिलित होना पड़ा। सब विषयोंमें उत्तीर्ण हुआ, केवल एक नम्बरसे धार्मिक विषयमें अनुत्तीर्ण रहा। इतिहास तथा भूगोलमें सम्मिलित न हो सका था। अतः उचित था कि इनमें परीक्षा ले इसको तरक्की दे दी जाती, किन्तु ऐसा नहीं हुआ, बल्कि शाहजी के ता० १२-४-२३ के नादिरशाही आर्डरद्वारा पाठशालासे सदाके लिये बहिष्कृत कर दिया गया। छात्रके साथ ऐसा व्यवहार कहाँतक उचित है, पाठक स्वयं विचार करें। यह लड़का इस समय स्थानीय श्री डूंगर कालेजकी ९ वीं कक्षामें पढ़ रहा है। अतः मेरे उपर्युक्त कथनके सत्यासत्यकी जाँच वहाँके हेडमास्टर साहिबके समक्ष इस लड़केसे स्वयं कर सकते हैं।

इन उपर्युक्त कोष्ठकों तथा कोचर महाशयकी १६ धर्षीय रिपोर्टके परिशिष्ट नं० ३, ४ तथा ५ (इसी पुस्तिकाके काण्ड ७ के अन्तर्गत परिशिष्ट नं० १०—अ, ब, स देखिये) को ध्यानपूर्वक देखनेसे ज्ञात होगा कि कोचर महाशयने सफ़ेद झूठ ही नहीं, किन्तु कहीं कहीं तो अपरिमित झूठ (कक्षा ७ के—.० प्रतिशत परीक्षा-फलको ५० प्रतिशत तथा कक्षा ५ के ० प्रतिशतको ६० प्रतिशत बनाकर) किस हिम्मतके साथ लिखकर भोली-भाली जनतापर "मदारीवाली लकड़ी" फेरनेकी अनधिकार चेष्टा की है और इसी फलपर शाहजी तथा पं० रामेश्वर दयालजीकी भूरि भूरि प्रशंसा की गयी है तथा इसी* फलपर शाहजीके वेतनमें १०) मासिककी वृद्धि की गयी है और पं० रामेश्वरदयालजीके वेतनमें ५) की वृद्धि की गयी थी, परन्तु इन्होंने उसे लेनेसे कदाचित् इसलिये इनकार कर दिया कि शाहजीकी अपेक्षा इतना कम लेनेमें अपमान होता था। यद्यपि यह इनकार पॉलिसीपर निर्भर था तथापि "बिनु औसर भयते रह जोई। जानेहु अधम नारि जग सोई" के अनुसार इनको इस विषयमें केवल यही कहा जा सकता है कि इन्होंने अनधिकारी होना स्वीकार किया जिसके लिये उन्हें अनेकानेक धन्यवाद है। क्या ऐसे ही कर्त्तव्यपरायणों-

* पाठशालाभरमें सबसे असन्तोषदायक कार्य क्रमशः पं० रामेश्वर-दयालजी तथा शाहजीका था। इनका दोनों महाशयोंके द्वारा परीक्षा-फल कहीं कहीं ० तथा—०प्रतिशत हुए हैं। वेतनवृद्धि भी, ? वोकलमोंके द्वारा, वार्षिक-परीक्षाके समय नहीं, किन्तु कई मास पश्चात् की गयी है। कहिये, कैसा न्यायका नमूना है!

पर प्रबन्धकारिणीको आशा दिलायी गयी है कि "उसका उद्देश्य अधुना अवश्य ही फलीभूत होगा" ! सत्य है, "समान व्यसनेषु मैत्री" अथवा "चोर चोर * मौसेरे भाई"की कहावत अनुचित तथा अप्रासङ्गिक नहीं कही गयी है।

इस १६ वर्षीय रिपोर्टमेंसे जनताके सत्यासत्य निर्णय करनेके लिये ही कुछ बातोंको मैंने यहाँ उदाहरणार्थ दिखलाया है और लगभग ३ वर्षका अन्तिम परीक्षा-फल भी दिखलाकर पिछले सालोंका हाल इसलिये नहीं लिखा कि पाठक "स्थाली पुलाक" न्यायसे स्वयं जाँच कर सकेंगे कि जब राष्ट्रीय टकसालोंमें, जहाँपर नवयुवकोंको सच्चरित्रताके साँचेमें ढाला जाता है, सत्य और कर्त्तव्यपरायणताकी मात्रा इतनी अधिक हो, तो "चु कुफ़ अज़ काबा बर ख़ेज़द कुजा मानद मुसलमानी" अर्थात् जब कावामें कुफ़ होने लगे तो मुसलमानी और किस जगह रह सकती है, के अनुसार यह विचारणीय है कि अन्य समाजका क्या हाल हो सकता है और शाहजीके लेखानुसार "एक निःस्वार्थ कर्त्तव्यपालन करनेवाला अवैतनिक मंत्री, स्वभावतः न्यायशील आदर्श सज्जन" कहाँतक कहा जा सकता है—इसके बतलानेकी आवश्यकता नहीं ! यह बात दूसरी है कि "उष्ट्राणांच विवाहेषु गीतं गायन्ति गर्दभाः । परस्परं प्रशंसन्ति अहोरूपमहो ध्वनिः ॥" अर्थात् "मैं तेरे गीत गाऊँ और तू मेरा राग अलाप" को चरितार्थ कर "आत्म-शुद्धि" की जावे ।

* मौसेरे भाइ अर्थात् मासी (मौसी) का लड़का ।

इसके अतिरिक्त इसी पाठशालाके विषयमें मैंने "सत्य-प्रकाश" के हेतु जो आन्दोलन किया है अथवा इस आन्दोलनमें मेरा जो पत्र-व्यवहार कोचर-शाहसे हुआ है उसने भी इनके सत्यपरायण, कर्त्तव्य पालक, न्यायशील,ज्ञानी और दयालु आदि होनेका हाल मालूम होता है। इसलिये मैंने क्रमानुसार सब निज अनुभूत बातें जनताके विचारार्थ अक्षरशः नक़ल कर दी हैं। विचारपूर्वक देखनेसे यह स्पष्ट ज्ञात होगा कि यह सब धींगाधींगी केवल सत्याभाव तथा पॉलिसीके प्रादुर्भावहीके कारण है और इन सबका मूल कारण केवल अशिक्षाका प्रचार है।

भी अति आवश्यकीय कारणोंसे। जिस वक्त मेरा स्वास्थ्य इतना खराब हो गया था कि चलना फिरना दुश्वार हो गया था, उस समय भी निरन्तर नियमानुसार सेवा करता ही रहा। आपने स्वयं मेरी दशापर तरस खाकर कहा था कि षाण्मासिक परीक्षाके बाद आप छुट्टी लेकर अवश्य आराम करें। इतना कह देना और भी उचित समझता हूं कि इतने दिनोंकी सेवामें केवल एक दिन ता० २५-७-२१ को ४ मिनट पाठशालामें लेट आया हूं। जिसका कारण यह था कि स्कूल-घड़ी फास्ट थी, किन्तु इस लेटके लिये भी अति दुःखी हूँ और अबतक वह बहुत दिनोंतक याद रहेगा।

परीक्षा-फल तथा आचार-व्यवहार आदिके विषयमें लिखना व्यर्थ है, क्योंकि ये सब बातें रेकर्डमें स्पष्ट दर्ज हैं—यदि कोई न देखे तो इसके लिये मैं क्या करूं ? मैंने आरम्भ क्लाससे लेकर छठे क्लास तककी शिक्षा इस पाठशालामें भिन्न भिन्न समयोंमें दी है जिनके फल, परीक्षाफल,रजिस्टरमें दर्ज हैं, कहनेकी आवश्यकता नहीं; किन्तु अब मैं इतना आपसे पूछता हूँ कि क्या ... गत परीक्षाफलमें हिन्दी (सी) क्लासका फल देखा है ? ... क्लासको हेडमास्टर साहिबने मुझे कम्पेल् (Compel) ... दिया था। इसमें कुल १७ लड़के शरीक-इम्तिहान थे ... १३ कामयाब हुए, और इन्हींमेंसे १० लड़के डबल परीक्षा ...नमें ६ तो पूर्णतः पास थे और एक प्रोमोटेड हुआ ...प्राप्त अंकोंका ज्ञान आप परीक्षाफल-रजिस्टरसे कर

कारड २

* आन्दोलनका प्रारम्भ *

(१)

पत्र नं० ८०,   ध्यानसे विचार करें !

श्रीमान् बा० शिवबख्शजी साहिब सेक्रेटरी,

श्रीजैनपाठशाला, बीकानेर।

ता० १८—५—२३

महाशयजी,

कल ता० १७-५-२३ को आपके नो० नं० ४०१ से आगाह हुआ। विदित हो कि मुझे पाठशालाकी सेवा करते हुए लगभग ३ वर्ष हो रहा है। जैसी मैंने सेवा की है यह पाठशाला रेकर्डसे विदित है। अगर देखनेवाले पदाधिकारी उसपर ध्यान न दें तो उसमें मेरा क्या दोष है! इतने दिनोंमें मेरा ३ मास छुट्टीका हक़ है जिसमेंसे मैंने केवल १ मास १८ दिनकी छुट्टी ली है। यदि इत्तफ़ाक़िया छुट्टीकी ओर ध्यान दें तो मुझे ४० दिनकी छुट्टी लेनी [illegible] थी, जिनमेंसे मैंने केवल लगभग ३ दिनकी छुट्टी ली है, सो

ही अति आवश्यकीय कारणोंसे। जिस वक्त मेरा स्वास्थ्य इतना खराब हो गया था कि चलना फिरना दुश्वार हो गया था, उस समय भी निरन्तर नियमानुसार सेवा करता ही रहा। आपने स्वयं मेरी दशापर तरस खाकर कहा था कि षाण्मासिक परीक्षाके बाद आप छुट्टी लेकर अवश्य आराम करें। इतना कह देना और भी उचित समझता हूं कि इतने दिनोंकी सेवामें केवल एक दिन ता० २५-७-२१ को ४ मिनट पाठशालामें लेट आया हूं। जिसका कारण यह था कि स्कूल-घड़ी फास्ट थी, किन्तु इस लेटके लिये भी अति दुःखी हूँ और अबतक वह बहुत दिनोंतक याद रहेगा।

परीक्षा-फल तथा आचार-व्यवहार आदिके विषयमें लिखना व्यर्थ है, क्योंकि ये सब बातें रिकर्डमें स्पष्ट दर्ज हैं—यदि कोई न देखे तो इसके लिये मैं क्या करूं ? मैंने आरम्भ क्लाससे लेकर छठे क्लास तककी शिक्षा इस पाठशालामें भिन्न भिन्न समयोंमें दी है जिसके फल, परीक्षाफल,रजिस्टरमें दर्ज हैं, कहनेकी आवश्यकता नहीं, किन्तु अब मैं इतना आपसे पूछता हूँ कि क्या आपने गत परीक्षाफलमें हिन्दी (बी) क्लासका फल देखा है ? इस क्लासको हेडमास्टर साहिबने मुझे कम्पेल् (Compel) करके दिया था। इसमें कुल १७ लड़के शरीक-इम्तिहान थे जिनमें १२ कामयाब हुए, और इन्होंमेंसे १० लड़के इक्का परीक्षा दिये थे जिनमें ६ तो पूर्णतः पास थे और एक प्रोमोटेड हुआ था। इसके साथ अंकोंका हाल आप परीक्षाफल-रजिस्टरसे कर

काण्ड २

* आन्दोलनका प्रारम्भ *

(१)

पत्र नं० ८०, ध्यानसे विचार करें!

श्रीमान् बा० शिवचन्द्रजी साहिब सेक्रेटरी,

श्रीजैनपाठशाला, बीकानेर।

ता० १८—५—२३

महाशयजी,

कल ता० १७-५-२३ को आपके नो० नं० ४०१ से आगाह हुआ। विदित हो कि मुझे पाठशालाकी सेवा करते हुए लगभग ३ वर्ष हो रहा है। जैसी मैंने सेवा की है वह पाठशाला रेकर्डसे विदित है। अगर देखनेवाले पदाधिकारी उसपर ध्यान न दें तो उसमें मेरा क्या दोष है? इतने दिनोंमें मेरा ३ मास छुट्टीका हक़ है जिसमेंसे मैंने केवल १ मास १८ दिनकी छुट्टी ली है। यदि इत्तफ़ाक़िया छुट्टीकी ओर ध्यान दें तो मुझे ४० दिनकी छुट्टी लेनी चाहिये थी, जिनमेंसे मैंने केवल लगभग ३ दिनकी छुट्टी ली है, तो

। अति आवश्यकीय कारणोंसे । जिस वक्त मेरा स्वास्थ्य इतना
राब हो गया था कि चलना फिरना दुश्वार हो गया था, उस
मय भी निरन्तर नियमानुसार सेवा करता ही रहा। आपने
यं मेरी दशापर तरस खाकर कहा था कि षाण्मासिक परीक्षाके
ाद आप छुट्टी लेकर अवश्य आराम करें। इतना कह देना और
भी उचित समझता हूं कि इतने दिनोंकी सेवामें केवल एक दिन
ता० २५-७-२१ को ४ मिनट पाठशालामें लेट आया हूं। जिसका
कारण यह था कि स्कूल-घड़ी फ़ास्ट थी, किन्तु इस लेटके
लिये भी अति दुःखी हूँ और अबतक यह बहुत दिनोंतक याद
रहेगा।

परीक्षा-फल तथा आचार-व्यवहार आदिके विषयमें लिखना
व्यर्थ है, क्योंकि ये सब बातें रेकर्डमें स्पष्ट दर्ज हैं—यदि कोई न
देखे तो इसके लिये मैं क्या करूं? मैंने आरम्भ क्लाससे लेकर
छठें क्लास तककी शिक्षा इस पाठशालामें भिन्न भिन्न समयोंमें
दी है जिसके फल, परीक्षाफल,रजिस्टरमें दर्ज हैं, कहनेकी आव-
श्यकता नहीं; किन्तु अब मैं इतना आपसे पूछता हूँ कि क्या
आपने गत परीक्षाफलमें हिन्दी (की) [illegible] फल देखा है?
इस [illegible] (Compel)
[illegible] इम्तिहान थे
[illegible] इनका परीक्षा
[illegible] प्रोमोट हुआ
[illegible] रजिस्टरसे कर

सकते हैं। सुनते हैं कि यह आपकी पाठशाला लगभग १४ वर्षोंसे क़ायम है। क्या आप उपरोक्त परीक्षाफलसे बढ़कर सन्तोषदायक फल इन १४ वर्षोंमें बतलानेकी कृपा करेंगे? इतना ही नहीं, मैं तमाम स्टेटके स्कूलोंमेंसे पूछता हूँ कि कहीं इससे बेहतर नतीजा आपने कभी देखा है क्योंकि आप इन्स्पेक्टर ऑव स्कूल्स भी रह चुके हैं?

आजतक मैंने कभी भी इन बातोंको नहीं कहा था, आज अन्यायके कारण अन्तिम दिन उपस्थित होनेसे कहे बिना रहा नहीं गया। मैं बराबर सन्तोष तथा शान्तिपूर्वक काम करता गया, सो आज इन कर्मोंका फल तथा इनाम मुझे उक्त नोटिस द्वारा दिया गया है। जब मैं आपकी सेवामें आया तो मैंने साफ़ साफ़ कह दिया था कि जबतक सेवा करूँगा, सच्चे दिलसे करूँगा, आजतक कोई भी भारी दोष नहीं बतलाया गया। मुझे आपके न्यायपर आश्चर्य और हैरत है। परीक्षाफल आदिको जाने दीजिये, यदि सीनियरिटीपर ध्यान दें तो मेरा नम्बर पाठशालामें दूसरा है। सब जगह सीनियरिटीपर विशेष ध्यान दिया जाता है, किन्तु यहाँकी लीला तो विलक्षण ही है। यह मैं जानता हूँ कि जब रिडक्शनकी व्यवस्थाकी आवश्यकता है तो अवश्य ही रिडक्शनकी शरण लेनी चाहिये। आज तो संसारमें रिडक्शन कार्य ज़ोरोंपर चल रहा है, आपने किया तो क्या अनुचित किया! किन्तु ज़रा सोचिये कि आपहीके नोटिस जैसी कार्रवाइयाँ हो रही हैं?

इतने दिनोंकी सेवाका फल आज जेनरल नोटिसद्वारा दिया गया है,जिस नोटिसको आम तौरसे तमाम लड़के उलट-पुलटकर देखा करते हैं, जिसका सबूत यह है कि मैंने हेडमास्टर साहिबको दिखला दिया है कि लड़कोंका देखना अनुचित है। यदि आपको ऐसा ही नोटिस देना था, तो आपको उचित था कि प्राइवेट नोटिसद्वारा सूचना देते, बल्कि सर्वोत्तम तो यह था कि एकान्तमें मुझसे कहते और मैं प्रसन्नतापूर्वक आपकी नीतिकी भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए हट जाता। आपने कभो बाततक न चलायी और मुझे भी ऐसे बर्तावकी स्वप्नमें सम्भावना कदापि न थी, किंतु आज तो विपरीत ही तथा विलक्षण ही गुल खिला। भला ऐसी अस्थिर तथा अचानक घटनासे कौन नहीं अवाक् रह जायगा? आप तो सदा प्रेम तथा संगठन संगठन चिल्लाया करते थे, सो कर्त्तव्यपरायण सेवक पर ऐसा गुपचुप वज्र-प्रहार! क्या आपके विचार तथा न्यायसे मेरी ही पोस्ट रिडक्शनमें सोलह आने वाला प्रमाणित हुई थी? धन्य है आपको तथा आपके न्यायको! वाह रे न्याय वाह!! आपको इस इंसाफ़पर सद आफ़रीं है!!!

पूज्यवर महोदयजी! आपने जैसा बर्ताव गत वर्ष लेट धर्म मास्टर बा० गिरधरदेवचन्दजी दोसांके साथ किया है उससे मैं तो क्या आप स्वयं भी कभी कभी दुःखी होते होंगे। इन सज्जन महोदयकी सज्जनता आपके सम्मुख बयान करना "भैंसके आगे

बेन* बजाये भैंस बैठी पगुराये†" की कहावत की याद दिलाती है। भला जब आपने उनके साथ ऐसा बर्ताव किया तो दूसरेको कब छोड़नेवाले? मैं भूला था, मेरी ही ग़लती थी जो मैंने विश्वास किया। आजतक आपने नहीं मालूम कितने निरपराधियोंका गला घोंटा और नहीं मालूम कितनेके घोंटने बाक़ी हैं। मैं इतना कार्य करनेपर भी सदा डरता ही था सो आज आपके बर्ताव, स्वभाव तथा न्यायका दौरा मेरे सिरपर भी आ ही पड़ा। सच है, भला "चूहेकी मा कबतक ख़ैर मनावेगी।" ग़ैरोंसे कभी कभी आपकी नीति आदिके विषयमें मैं सुना करता था, किन्तु कर्त्तव्य-पालनके अभिमानमें पड़ भूल जाता था। वाह रे न्याय और इंसाफ़! कहावत है कि "साँचको आँच क्या?" किन्तु आपने तो इस प्राचीन कहावतको भी तोड़कर अपने ग़लती साबित कर दिया। क्यों न करें? कहा है कि—"परम स्वतंत्र न सिरपर कोई, भावै मनहि करै सोइ सोई।"

महाशयजी! *मैं इसलिये नहीं रो रहा हूँ कि आप दया करके मुझे पुनः सेवामें रख लेवें—रोना मुझे न्याय और अन्यायके भ्रमका है।* यदि आज न्याय हुआ होता तो मैं चूँ तक न करता, क्योंकि मुझे भी न्याय प्रिय है और उसका थोड़ा-बहुत भक्त भी हूँ। *क्या आप कृपा कर अपने न्याय और इन्साफको समझाकर*

* वीणा, तम्बूरा, बाजा विशेष, जिसे नारद और सरस्वती आदि बजाते हैं।

† पगुराना, जुगाली करना, चबाये हुए को पुनः चबाना।

मेरे दुःखी हृदयको शान्ति देंगे ? ऐसे निष्ठुर और निर्दय व्यवहारको आजतक मैंने कभी भी नहीं देखा। बलिहारी है इस रीति और नीतिको ! मुझे दुःख है केवल अन्यायका और कुछका लेशमात्र भी रंजोगम नहीं। अधिक कहाँतक कहूँ, आश्चर्यमें पड़ विस्मित हो गया हूँ। मैं, इसलिये, आपको अपना मित्र समझकर चेतावनी दे रहा हूं कि अब भी ध्यान दे आइन्दाके लिये सुधर जायें और नाहकमें किसीके गलेके काँटे अब न बनें "कबीरदास कबसे नहो-जबसे ज्ञान हो जावे तबसे सही।" यदि अब भी चेत जावें तो खैर है।

महाशयजी ! इस संस्थाने आपको बड़ी रकम और सर्वाधिकार आपको सर्व योग्य समझकर दी है। सावधान, आप विचारकर काम करें। आप निश्चय जानिये, आपको ईश्वरके सामने कौड़ी कौड़ीका हिसाब चुकाना होगा। वहाँपर आपका सिवाय पाप और पुण्यके कोई भी मित्र न बनेगा।

पाठशालाके मेम्बरो और अन्य शुभचिन्तक महोदयो ! मेरी इस प्रार्थनापर अवश्य ध्यान दे शान्ति दें। आप लोग "अहिंसा परमो धर्मः" के उपासक हैं। इसका उचित समय दे मोटिङ्ग-द्वारा यह सिद्ध कर दिखला देवें कि मेरे साथ अन्याय कदापि नहीं हुआ है। मुमकिन है कि मैं गलती समझ रहा होऊँ। मैं इस महान् पुनीत कार्यके लिये आप लोगोंका सदा आभारी रहूँगा और समझूंगा कि आप लोग सच्चे अहिंसक वीर हैं।

चैलेंज

सुनते हैं कि नोटिसके बाद लोग काम कुछ भी नहीं करते। क्या इस शुभावसरपर मेरे ऊपर सिद्ध कर दिखलानेकी कृपा करेंगे! मैंने इसीलिये ता० १५-६-२३तक ठहरनेका निश्चय किया है कि मेरी त्रुटियोंका पता लग सके, वरन् इस अन्यायके आगे आज ही क़ितअ-तअल्लुक़ कर लिया होता। इतनी बड़ी संस्था है और मैं अकेला निर्बल सेवक हूँ; देखें तो कौन बाज़ी मारता है?

आशा है कि शान्तिपूर्वक उत्तर तथा उपदेश देकर कृतार्थ करेंगे। वाहरे न्याय वाह! इसीपर भारत फूला नहीं समाता! अति दुःखी हू, किन्तु आपके न्यायका निर्णय ईश्वरपर छोड़ ईश्वरसे पार्थी हूँ कि आपको ईश्वर दीर्घायु करे, न्याय तथा सद्विचारकी शक्ति दे और अन्यायसे घृणा करनेकी सुबुद्धि दे।

इतना और कहना उचित समझकर अब यहीं रुक जाता हूं कि हमारे हेडमास्टरजीका विशेष दोष नहीं है। यदि कभी कुछ असन्तुष्ट हुआ भी तो उनके अभीनवी होनेके कारण हुआ। मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि हेडमास्टर साहिब अपने दोषोंको शीघ्र प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार कर लेते हैं—कई बार इन गुणोंके देखनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था।

अभी ता० १४ ५-२३की बात है कि हेडमास्टर साहिबने मेरे ऊपर कुछ दोष लगाया था, किन्तु मैंने जब उन्हें प्रार्थनाद्वारा . . ., तो उन्होंने शीघ्र अपनी ग़लती स्वीकार कर ली और पूरे . . . मुझे निर्दोषी पाया। कानके प्रेमी बनकर दोषी ठह-

रहे थे, किन्तु उन्हें मालूम हो गया कि महज़ कानकी सुनीपर ध्यान देनेवाला सर्वदा शर्मिन्दा होता है।

अधिक व्यवस्था आप गुमाश्ता पूछ सकते हैं। आपके अवलोकनार्थ नोटिसकी नकल नीचे लिखी हुई है —

⊛ नोटिस नं० ४०१

बा० श्यामलोटन प्रसादजी,

आपका स्थान कमी (Reduction) में आनेके कारण आपको आनरेरी सेक्रेटरी साहिबकी आज्ञानुसार एक मासकी नोटिस पाठशालाके नियमानुसार दी जाती है। ता० १७-५-१९

Sd M. T. Shah,

—श्रीजैन-पाठशाला,—बीकानेर।—

महाशयजी ! आप स्वयं विचार देखें कि उपरोक्त नोटिसद्वारा कैसा प्रेम टपक रहा है ! ज्ञात होता है कि नोटिस क्या है शान्ति-भवन है।

महाशयजी ! मैं केवल न्याय चाहता हूँ। न्याय द्वारा निर्धारित दोषोंके लिये सहर्ष जेल जानेको तैयार हूँ—यह मैं सर्वदासे कहता आया हूँ और आज भी वही कह रहा हूँ। यह प्रत्येक धर्मों तथा संस्थाओंसे निर्विवाद सिद्ध है कि *न्यायके आगे माता-पिता, भाई-बन्धु कोई चीज नहीं है। न्याय ही सब कुछ है।*

यह सब जानते हैं कि "पाप बड़ा दुख देता है, बरस पाँच अरु सात। द्वादस बरसके बीचमें,लिये रसातल जात॥"

यह पत्र मैंने इसलिये नहीं लिखा है कि आपके आत्माको चोट पहुँचे, बल्कि आपके आत्म-शुद्धिके लिये अपना कर्त्तव्य समझ लिखा है। आशा है, विचारकर मुझे भी शान्ति प्रदान करेंगे। इतनी स्पष्टतासे सिवाय शुभचिन्तकके दूसरा कदापि नहीं लिख सकता।

व्यवहार" का परिचय दिया है, वह इस पुस्तकाके काण्ड ७ के अन्तर्गत परिशिष्ट न० १ में स्पष्ट विदित हो जायगा।

सच्चा राजभक्त, देशभक्त तथा शुभचिन्तक वही व्यक्ति है, जो सत्य-रहे, अपने कर्त्तव्योंका पालन करे। यह वही भारत है, जहाँपर र देकर सत्यकी रक्षा करते थे। किन्तु हाय ! आज "पॉलिसी देवी" वन लोग कौड़ी-कौड़ीपर असत्य बोलनेके लिये कटिबद्ध हैं।

जिस विचारसे आपने निरपराधो हेड धर्म मास्टरको यहाँसे हटाया था उसकी पूर्ति आजतक हुई ?

आपका शुभचिंतक आज्ञाकारी सेवक,
रामलौटन प्रसाद, असिस्टेन्ट मास्टर।

मेरे उपर्युक्त हिन्दी-पत्र नं० ८०का फोचर महाशयने, जिनको यदि "बड़ा साहब"कहा जाय तो अनुचित न होगा, निम्नलिखित उत्तर अङ्गरेजी भाषामें दिया है, जो वैसा हो नक़ल किया जाता है जैसा कि शाह जी महोदयने मुझे लिखाया है :—

(२)

पत्रोत्तर

I have gone through this very carefully and far from being angry at that he has thought fit to hurl at me. I rather pity him for the same Still I am sorry I cannot but stick to what I have decided In view of the present circumstances of the Pathshala I cannot afford to spend unnecessarily such a high sum [i e Rs. 40] every month [because the self—conceitedness has compelled the Secretary to increase unnecessary expenses in the guise of reduction by appointing the new Head Master on Rs 150] I, therefore, am compelled to make a reduction-whether it may be palatable or not to anybody [because it was done in the name of the so-called duty] and in doing that I must [though I ought not to] see and keep only those who are useful [flatterers] to me from point of view the institution I have not at all violated the rules of the Pathshala [although the the general principle . th senior and

conscientious teachers showing good results should be promoted] but followed the same strictly in that I have given him a month's notice as therein laid down. What more he expects ? [Nothing but what Prahlad and Vibhishan had received from their elders or India has received in recognition of her war services]. I do not wish to criticize his work, otherwise I know [just as Ravana and Hiranyakashipu knew about Vibhishan and Prahlad] what his shortcomings [i. e. duty, punctuality, straightforwardness and free from flattery] are. Please inform or rather show him this.

As for his note for Dharma Teacher, I pity rather again that he is not properly acquainted with the facts.

I had tried to introduce in the Provident Fund Rules, thereby affording some bonus to those retiring with no fault of theirs but it seems for that the day is yet far off, for unless a certain standard is permanently fixed upon, I can not launch upon this costly scheme [i. e. reducing a teacher of Rs. 40 p. m. and appointing a new Head Master instead]. Of his case show generously he was treated in view of his peculiar circumstances [being dutiful in Kaliyuga]. Besides it is no business of him to plead for him [because a man should not sympathise with others who might have been treated unjustly and malignantly] If the Pathshala has not been able to fill up the vacancy caused his services have been dispensed with can he say the Pathshala suffered on that account ? [Certainly !]

23. } Sd Shivabax [Kochar Secretary,
Shri Jain Pathshala, Bikaner]

इस उपर्युक्त अंग्रेज़ी पत्रका, जो मेरे पत्र नं० ८० ता० १८-५-२३ के उत्तरमें है, सारांश यह है:—

मैंने इसपर बहुत अच्छी तरह विचार किया है और जो कुछ उसने मुझपर आक्षेप करने उचित समझे, उसके लिये मैं अप्रसन्न नहीं हूँ, बल्कि मुझे करुणा आती है; तथापि मुझे खेद है कि जो कुछ मैं कर चुका हूँ उसके अतिरिक्त अब मैं कुछ कर नहीं सकता। पाठशालाकी वर्तमान स्थितिको देखते हुए मैं इतनी ज़ियादा रक़म [अर्थात् ४० रुपये] मासिक व्यर्थ व्यय नहीं कर सकता [क्योंकि स्वेच्छाचारिताने मंत्री महोदयको कमी और व्यर्थ व्ययकी आड़में १५०) मासिकका नया मुख्याध्यापक बढ़ाकर खर्चा बढ़ानेको बाध्य किया है। इसीलिये तो ४०) मासिककी कमी करके १५०) मासिकका टैक्स बढ़ा दिया गया है]। इसलिये मैं कमी करनेके लिये बाध्य हुआ हूँ, चाहे वह किसीको अच्छी लगे या बुरी [क्योंकि कर्तव्यपालनके नामसे यह अभिनय किया गया है] और इस कार्यके करनेमें मुझे आवश्यक है [यद्यपि कर्तव्य नहीं] कि केवल उन्ही व्यक्तियोंको रक्खूं जो पाठशालाके विचारसे मेरे लिये लाभदायक [अर्थात् मेरी चापलूसी और खुशामद करनेवाले] हों। मैंने पाठशालाके किसी नियमका उल्लंघन [अर्थात् पालन] नहीं किया [क्योंकि सिद्धान्त उन अध्यापकोंकी, जो सीनियर, समझदार तथा विवेकी हैं और जिनके सदा अच्छे नतीजे रहा करते हैं, तरक्की करनेकी आज्ञा देते हैं और मैंने ऐसोंको सिर्फ़ कम किया है] परन्तु मैं उसीपर

अर्थात् एक मासके नोटिसपर, जो मैंने उसको दिया है, आरूढ़ है। भला इससे अधिक वह और क्या आशा करता है! [सिवाय इसके, कि जो प्रह्लाद और विभीषणको उनके गुरुजनोंसे अथवा भारतको उसकी युद्धसेवाकी यादगारमें सर्कारसे मिला था, और कुछ भी नहीं चाहता।] मैं उसके कामकी विवेचना करना नहीं चाहता अन्यथा मैं जानता हूँ [ठीक उसी तरहसे जिस तरह रावण और हिरण्यकशिपु विभीषण और प्रह्लादको यावत् जानते थे] कि उसमें क्या त्रुटियाँ [अर्थात् कर्त्तव्यपरायणता, मुस्तैदी, निर्भीकता तथा चापलूसीरहित] हैं। कृपया आप [शाहजी] उस [रामलौटन प्रसाद] को सूचित कर दें अथवा इस पत्रको दिखला ही दें।

अब रहा धर्मशिक्षकके विषयका नोट—इसके लिये भी मुझे करुणा आती है कि वह [रामलौटन प्रसाद] पूर्णतः मुआमिलोंसे अनभिज्ञ है।

मैंने "प्रॉविडेण्ट-फ़ण्ड" के नियमोंको जारी करनेकी चेष्टा इसलियेकी थी कि उन लोगोंको जो पाठशालासे निर्दोष स्वयं चले जावें कुछ "बोनस" अर्थात् इनाम एकराम मिल जावे परन्तु प्रतीत होता है कि वह दिन अभी बहुत दूर है, क्योंकि जबतक कोई स्थायी व्यवस्था निश्चित न हो जावे मैं ऐसे बहुमूल्य स्कीम (४०) मासिकके अध्यापकको कम करके १५०) मासिकका मुख्याध्यापक नियुक्त करने) को छेड़ना नहीं चाहता। उसके धर्म-शिक्षकके बारेमें उसके साथ उसकी विचित्र व्यवस्था

[कलियुगमें कर्त्तव्यपरायणता]को देखते हुए उसके साथ दयाका बर्ताव किया गया है। इसके अतिरिक्त उस [अर्थात् रामलौटन प्रसाद] का कर्त्तव्य नहीं है कि वह उस [धर्म-शिक्षक] के लिये पैरवी करे [क्योंकि मनुष्यको ऐसे मनुष्यके साथ, जिसके साथ अन्याय अथवा क्रूरताका व्यवहार किया गया हो, सहानुभूति न करनी चाहिए]। यदि पाठशालाने किसी रिक्त स्थानकी पूर्ति नहीं की तो क्या वह कह सकता है कि पाठशालाको उसके कारण हानि हुई! [अवश्यमेव!]

ता० २१-५-२३ } द० शिवबक्श [कोचर, मंत्री, श्रीजैन-पाठशाला, बीकानेर]

---

(३)

पत्र नं०८१, ता०२४-५-२३

श्रीमान् बा० शिवबख्शजी साहिब सेक्रे०
श्रीजैनपाठशाला, बीकानेर।

महाशयजी,

मेरे पत्र नं० ८० ता०१८-५-२३का उत्तर आपके यहांसे ता० २१-५-२३को मिला। उत्तरसे पूर्ण आगाह हुआ।

प्रत्युत्तरमें सादर निवेदन है कि जो उत्तर आपने दिया है *वह विशेषतः तथा अधिकांश मेरे पत्रसे बिलकुल सम्बन्ध नहीं रखता।* इससे यह कह सकता हूँ कि उत्तर सन्तोषदायक नहीं है।

नोट—इन उपर्युक्त पत्रोत्तरके अन्तर्गत जो शब्द इन [ ] कोष्ठोंके भीतर हैं वे मेरे (अर्थात् लेखक—रामलौटन प्रसाद—के) हैं।

जब कभी आपसे मिलनेका सौभाग्य प्राप्त होता था, उस समय जो जो वार्तालाप होते थे उससे प्रेम ही विदित होता था और जो कुछ मैं कहता-सुनता था वह सत्य ही था।

अब मालूम होता है कि आप कानके गुलाम हो गये हैं, वरन् ऐसी आशा मुझे आपसे कदापि न थी। महाशयजी! मैं सत्य सत्य कहता हूँ कि *मैं आपका सच्चा शुभचिन्तक हूँ* और यह *अन्तिम वाक्य है कि मैं "सत्य" के लिये तथा "न्याय" के लिये मरूँगा।*

"अन्तर अँगुरी चारिको, साँच झूठमें होय।
सच मानै देखी कही, सुनी न मानै कोय॥"

आपका आज्ञाकारी सेवक,
रामलोटन प्रसाद, असिस्टेण्ट मास्टर।

नोट—सादर निवेदन है कि इसका *उत्तर कलतक अवश्य* देनेकी कृपा करें। ह० रामलोटन प्रसाद।

इस उपरोक्त नं० ८१ ता०२४-५-२३का उत्तर, कोचर महाशय (मंत्री, श्रीजैनपाठशाला) की आज्ञानुसार "आत्मीय शुद्ध भावोंसे इस संस्थाके कार्यकर्त्ता" शाहजी महोदय (हेडमास्टर) ने अंग्रेज़ी भाषामें यों दिया है:—

(४)

I am directed by the Secretary to inform you that the *remarks* made by him *on your letter No. 83* 18-5-23 *are quite sufficient as an answer* to the mentioned letter no 80. He further affirms his statement that [illegible]der the circumstances the *reduction is necessary* and

he is compelled to do it, whether it may be palatable to you or not Hence you are requested *not to write any such letters in future as he has no time to reply to them.*

Sd M T Shah,
[Headmaster, Shri Jain Pathshala,
Bikaner]

26-5-23

इस उपर्युक्त अंग्रेजी पत्रका अर्थ है:—

मुझे मंत्रीजीने आदेश किया है कि मैं आपको यह सूचित करूँ कि मंत्रीजीके वे रिमार्क (Remarks) जो आपके पत्र नं० ८० ता० १८-५-२३ पर दिये गये हैं वह पत्र नं० ८० में लिखी हुई बातोंका पर्याप्त उत्तर है और वह यह भी सूचित करते हैं कि अवस्थाको देखते हुए ऐसा करना आवश्यक है और वह (मंत्रीजी) इसके लिये बाध्य हैं—चाहे आपको अच्छा लगे या बुरा। इसलिये आपसे प्रार्थना है कि भविष्यमें ऐसे पत्र न लिखें, क्योंकि उन (मंत्रीजी) को उत्तर देनेका अवकाश नहीं है।

ता० २६-५-२३ } द० एम० टी० शाह,
[हेडमास्टर, श्रीजैन पाठशाला, बीकानेर]

नोट—ओवर महाशयका अंग्रेजी पत्र ऐसे शब्दों तथा वाक्योंमें लिखा है कि उसको उन्हीं जैसा योग्य दूसरा साहब ही आसानीसे पढ़ सकता है। यहांतक कि शाहजीको, ग्रेजुएट होते हुए, भी उसे स्पष्ट पढ़नेमें परेशानी उठानी पड़ी तब भला दूसरे की बात तो न्यारी है। इसी कारणसे उनके पत्रमें यत्र-तत्र दोष मालूम पड़ते हैं, परन्तु शाहजीका पत्र वैसा नहीं है, क्योंकि अभी तो वह नये साहब हैं। यदि इसी प्रकार इनके "ग्रन्थेय गुरु भावों" का विकास होता रहा तथा ओवर महाशयके उपदेशोंका प्रभाव पड़ता रहा तो थोड़े ही दिनोंमें पूर्ण ओवर हो जाने की सम्भावना है। आज

अर्थात् तुम अपना प्रार्थना-पत्र कागज़पर भेजो।

द० एम० टी० शाह, ता० ८-६-२३,

(७)

इसपर मुझे मजबूर होकर इस प्रार्थना-पत्रको शाहजीके आज्ञानुसार कागजपर लिखकर देना पड़ा। इसपर शाहजीका यह आर्डर हुआ:—

You can arrange for your class and you can go
Note it
Sd M. T. Shah,
8-6-23

अर्थात् तुम अपनी कक्षाका प्रबन्ध करके जा सकते हो। इस बातको नोट करलो।

द० एम० टी० शाह,
ता० ८-६-२३.

अब यह विचारणीय है कि एक मुख्याध्यापकका यह आर्डर कहाँतक उचित और विद्वत्तापूर्ण कहा जा सकता है? भला एक सहायक अध्यापक किस प्रकार अपनी कक्षाओंका प्रबन्ध कर छुट्टीपर जा सकता है? ऐसी अवस्थामें कक्षाका प्रबन्ध करना मुख्याध्यापकका कर्त्तव्य है अथवा सहायक अध्यापकका? क्या पाठशालाके एक घंटे (केवल ४० मिनट) की छुट्टी देनेमें ऐसा व्यवहार आजतक इन १६ वर्षोंमें यहाँपर और किसीके साथ किया गया है अथवा ऐसा आदर्श व्यवहार संसारके किसी अन्य सभ्य समाजमें हुआ है? यह शाहजीके "आत्म प्रदर्शित पथ" पर-पर अटल रहने तथा इनके कथनमें "किसीके साथ कोई अनुचित व्यवहार नहीं हुआ है" का जीता-जागता सुन्दर उदाहरण है।

यहाँपर मुझे शाहजीके "आत्मीय शुद्ध भावों"का पूजा-पाठ करनेमें १८ मिनट लगे और केवल २२ मिनटकी छुट्टी मेरे "आवश्यकीय कार्य" के लिये मिली। यह व्यवस्था जिस समय उपस्थित हुई थी उस समय मैं १॥ मास सवेतन हक़की और लगभग १ सप्ताह रियायती छुट्टीका पूर्ण अधिकारी था। यह भी ज्ञात रहे कि एक ही सप्ताहके पश्चात् मेरा सम्बन्ध पाठशालासे पूर्णतः टूटनेवाला था। शाहजीके इस आदर्श व्यवहारको इसी (जैन) समाजके एक प्रतिष्ठित सज्जन महोदयने देखकर आश्चर्य तथा दुःख प्रकट किया और इस व्यवहारको "अनुचित बर्ताव प्रतीत होता है" बतलाया।

---

(८)

नं॰६३ ता॰ १२-६-२३,

श्रीमान् हेड्मास्टर साहिब,
श्री जैन पाठशाला, बीकानेर।

"नोटिस"

महाशयजी,

मुझे ता॰ १६-६-२३ को अपने कार्यका चार्ज आपको देना है। अतः आपके सुभीतेके लिये सादर निवेदन है कि मेरे जिम्मे जो सामान हों उनकी सूची बना रक्खें जिससे आपको चार्ज लेनेमें आसानी हो।

मैं अपनी तरफ़से आपको आजन्मका नोटिस देता हूँ कि जो

हानि मेरेद्वारा पाठशालाको पहुँची हो, यहाँसे सम्बन्ध न रखते हुए भी, उसके दण्ड सहनेके लिये सहर्ष सर्वदा प्रसन्नतापूर्वक तैयार हूँ।

अतः सूचनार्थ निवेदन है।

आपका आज्ञाकारी सेवक,

रामलौटन प्रसाद, असिस्टेण्ट मास्टर।

(६)

मेरे इस नोटिस नं० ६३ ता० १२-६-२२ का उत्तर श्रीमान् हेड मास्टर साहिब (शाहजी) ने अंग्रेजी भाषामें इस प्रकार दिया :—

From,

The Head Master,
Shri Jain Pathshala,
Bikaner.

Mr. Ram Lautan Prasadji is required to note the the following —

The undersigned did not understand how he could be treated guilty and punished for the offence committed by him during his stay here, when he completely severed his connection with the institution as stated in his notice no. 93 issued against me.

Sd. M. T. Shah
12-6-22

उपर्युक्त अंग्रेजी नोटिसका अनुवाद यह है:—

जनाब हेड मास्टर साहिबके यहाँसे,
श्री जैन पाठशाला,
बीकानेर।

मिस्टर रामलोटन प्रसादजी नीचे लिखी बातोंको नोट कर लें-

मेरी समझमें नहीं आता कि तुमको उन गुनाहोंके लिये, जो तुमने इस स्कूलकी नौकरीके समयमें किये हैं, कैसे गुनहगार ठहराया जा सकता है और दण्डित किया जा सकता है जब कि तुमने स्कूलसे अपना सम्बन्ध बिलकुल अलग कर लिया है जैसा कि तुमने नोटिस नम्बर १३में, जो मुझको दिया है, जाहिर किया है।

द० एम० टी० शाह

, १२-६-२३

अब उपर्युक्त नोटिस नं० १३ तथा उसके उत्तरपर पाठकगण स्वयं पूर्ण विचार कर देखें कि उनके भीतर क्या भाव भरे पड़े हैं।

No. 10
16-6-23

चार्ज-रसीद

नीचे लिखी हुई वस्तुएं ता० १६ जून सन् १९२३ ई० को रामलोटनप्रसाद असिस्टेण्ट मास्टर, श्री जैन पाठशाला, बीकानेरसे चार्जमें मिलीं और यह स्वीकार करता हूं कि अब इनके ज़िम्मे पाठशालाका तथा पुस्तकालय आदिका कुछ बाक़ी नहीं है :—

क्रम-नं०	नाम वस्तु	संख्या	मिलनेकी ता०	विशेष विवरण
१	२	३	४	५
१	डस्टर	१	जनवरी सन् २१	I am uncertain about the dated of issue. M. T. shah 16-6-23.
२	अरिथमेटिक गोगलदेशल	१	२-४-२२	
३	नेलसन्स इं० रीडर नं० १	१	१३-५-२२	
४	नेलसन्स इं० रीडर नं० २	१	४-४-२३	
५	बाल विनोद दूसरा भाग	१	४-५-२३	
६	दैनिक उपस्थिति रजिस्टर	१	१-१-२३	
	...... योग.	६	...	

ह० ...
16-6-23

Sd. M T.shah.
हेड्मास्टर, श्रीजैन पाठशाला, बीकानेर,
ता० १६-६-१९२३ ई०।

उपर्युक्त "चार्ज-रसीद" के खाना नम्बर ५में जो अंग्रेजी भाषामें लिखा है उसका भावार्थ यह है कि वस्तुओंके "जारी होनेकी तारीखका मुझे निश्चय नहीं है। द०एम० टी० शाह, ता०१६ ६-२१

शाहजीके इस खाना नं० ५के नोटसे पता चलता है कि उनमें कितनी आत्मशुद्धि है और मुख्याध्यापकका कितना कर्त्तव्य पालन * करते हैं, क्योंकि आलस्यवश तारीख जारी होने तकका मिलान न कर सके। शाहजीकी ऐसे ही कर्त्तव्यपरायणतापर इस संस्थाके "कागज़ोंका आधार है" जिनका दिग्दर्शन समय समयपर इन आन्दोलन-पत्रोंद्वारा जनताको हुआ करता है। उपर्युक्त लेखोंसे स्पष्ट रूपसे नतीजा निकल सकेगा कि उत्तर-प्रत्युत्तर कितने विचारशील, न्यायपूर्ण और कर्त्तव्यपरायणतासे भरे हुए हैं।

पाठशालासे विदा होते समय मैंने विद्यार्थियोंके लाभार्थ मंत्री महोदय (कोचर महाशय) तथा पाठशालाको निम्नलिखित उपहारोंको शीशेमें जड़ाकर सादर समर्पित किया था; परन्तु उनके लेनेसे कोचर-शाहने साफ़ इन्कार कर सत्यवीरता तथा मनुष्यताका परिचय दिया है। इससे उक्त महाशयोंका "पक्षपातरहित तथा न्यायशील आदर्श सज्जन होना, आत्मीय शुद्ध भावोंसे इस संस्थाके कार्य करनेका,नम्रता और दयालुता" तथा सभ्यताके व्यवहारका आदर्श दृष्टिगोचर होता है:—

* यदि शाहजीको नियम नं० १२३० (ढ) तथा नं० ८८ का ज़रा भी ध्यान होता तो इस प्रकार शानके साथ ऐसा मनगैल रिमार्क देनेका साहस कदापि न करते। इन नियमोंको परिशिष्ट नं० ११में देखिये।

(११)

कोचर महाशयको समर्पण—

"Say nothing unless you are
quite sure
That
what you say
is
True, Kind and helpful"

The 16th June 1923. | Presented to B. Shiva Bakshji Kochar Secretary Shri Jain Pathshala, Bikaner by Ram Lautan Prasad, Assistant master at the time of his departure as a token of love and esteem.

अर्थात् "जबतक कि पूर्ण विश्वास न हो जाय, कि जो कुछ आप कह रहे हैं सत्य, दयालु और सहायक है, मत कहिये।"

ता०१६ जून सन्२३. | यह उपहार बा० शिवबख्शजी कोचर, मंत्री श्रीजैन पाठशाला, बीकानेरको राम लौटन प्रसाद, सहायक अध्यापकने, अपने विदा होते समय प्रेम और आदरके भाव को देते हुए समर्पण किया था।

(१२)

पाठशालाको समर्पण

1. "A flatterer is a most dangerous enemy
2. Better alone than in ill Company
3. Custom in infancy becomes nature in old age
4. Concealing faults is but adding to them
5. Example teaches better than precept
6. Look before you leap

7 Truth never fears examination
8. Truth may Languish, but cannot perish.
9. The first step to greatness is to be honest.
10. Want of punctuality is species of false hood.
11. Youth Is the season for improvement."

The 16tn June 1923.	Presented to the shri *Jain Pathshala*, Bikaner by Ram Lautan Prasad, Assistant master at the time of his departure as token of love and esteem.

यह उपहार,मंत्रीजीको जिस प्रेम और श्रद्धासे दिया गया था उसी भाँति, पाठशालाको दिया गया था जिसका भावार्थ नीचे दिया जाता है:—

(१) "सबसे भयंकर शत्रु चापलूस है।

(२) बुरी संगतिसे अकेला ही रहना अच्छा है।

(३) व्यवहार बुढ़ापेमें आदत बन जाता है।

(४) छिपाना गोया उनकी वृद्धि करना है।

(उदाहरण बनना कहीं अच्छा है।

पाँव रक्खो।

कभी भयातुर नहीं होता,अर्थात् साँच-

जाये किन्तु नष्ट कदापि नहीं हो

प्रथम सीढ़ी ईमानदार होना है।

न्दी न करना कारका झूठ है।

(११) युवावस्था ही उन्नतिके लिये उपयुक्त समय है।"

[ह० रामलौटन प्रसाद]

उपर्युक्त इन दोनों उपहारोंको दोनो आदर्श महानुभाव सज्जनों (कोचर-शाह) ने अस्वीकार कर जैसा परिचय दिया है, पाठकगण इसका स्वयं विचारकर निर्णय करें। वाहरे "आत्म प्रदर्शित पथ!" वाह!!

अब यहांसे आन्दोलन-विषयक प्रकाशित नोटिसोंकी नक़लें दी जाती हैं जिनसे पाठकोंको वादी-प्रतिवादीके भावोंके भेद ज्ञात हो जावें और "स्थाली पुलाक" न्यायके अनुसार यह भी प्रकट हो जावे कि अन्य संस्थाओंकी क्या व्यवस्था है और ऐसी दशा-पर भारतोद्धारमें अभी कितना विलम्ब है।

मेरे प्रथम नोटिसकी नक़ल:—

(१) "यतोधर्मस्ततोजयः"।

"सत्येनास्ति भयंकचित्।"

"सत्यमेव जयते नानृतम्।"

"अहिंसा परमो धर्मः"

(२) "उठो! जागो!! चेतो!!! बहुत हो चुका सत्यको अपनाओ।"

। चाहे यह ज्ञान तनसे निकले"

(४) "कौन कहता है कि अन्यायको सह लेना धीरता है।"

(५) "न्यायके आगे माता-पिता, भाई-बन्धु, पुत्रादि कोई चीज़ नहीं—न्याय ही सब कुछ है।"

(६) "अंतर अँगुरी चारिको, साँच झूठमें होय।
सब माने देखी कही, सुनी न माने कोय॥"

Truth may languish,
but cannot perish."

"Let love
Lead Light"

खुले हुए लगभग चौदह या पन्द्रह वर्ष हो चुके और जिसपर क़रीब ५००) मासिक व्यय होता है, पेश करता हूं। इतना व्यय होनेपर भी आजतक इसमें पूर्णरूपसे अष्टम कक्षा भी न खुल सकी और न इसके पढ़े हुए विद्यार्थी किसी दूसरी पाठशाला तथा स्कूलमें कोई मान पा सके। अन्य देशोंमें तो मान पाना स्वप्नमें भी प्रतीत नहीं हो सकता, जब खास बीकानेरकी अन्य संस्थाओंमें ये मान पानेके अयोग्य हैं। इसका कारण विद्यार्थियोंकी अयोग्यता नहीं, वरन् पाठकों तथा प्रबन्धकर्ताओंकी असमर्थता कही जा सकती है, अर्थात् जो अध्यापक योग्य होते हैं वे स्वतंत्र होनेके कारण कोचर महाशयको—जो कि यद्यपि मंत्री-पदपर नियुक्त कहे जाते हैं, किन्तु वास्तविक रूपमें वही जैन-मतके नेता, प्रतिनिधि और पाठशालाके सर्वेसर्वा हैं—प्रसन्न करनेमें सर्वथा अयोग्य होते हैं और इसलिये उनका टिकना पाठशालामें असम्भव हो जाता है। और इसी तरह जो अध्यापिकाएं विदुषी और सचरित्रा होती हैं वे भी अभाग्यवश कोचर महाशयको प्रसन्न नहीं कर सकतीं और केवल कर्त्तव्यपरायण होनेके कारण शीघ्र ही कोई न कोई दोष उनपर आरोपित हो जाता है और उनको पाठशालामें झट टिकट कटाना पड़ता है। इस पाठशालामें आजतक किसी कन्याने कोई उच्च परीक्षा उत्तीर्ण नहीं की। कहा जाता है कि यहां स्त्रियोंमें पठन-पाठनसे घृणा है; परन्तु वास्तविक यह नहीं है, वरन् कुप्रबन्धकी मुख्यता है।

इसके अतिरिक्त कोचर महाशयका व्यवहार भी सर्वसाधा

है और यह कर्त्तव्यपरायणको डींग मारा करते हैं। उसकी यानगी भी जनताके समक्ष पेश करती है अर्थात् बा० पन्नालालजी [एक योग्य अध्यापक] को उर्दू जाननेके क्षेपमें नोटिस देना और फिर रोक लेना, और उन्हींको पूर्ण हक़ रहते हुए भी केवल तीन दिनकी बीमारीकी अर्ज़ीपर टिप्पणियोंकी झड़ लगाकर मेडिकल सर्टीफ़िकेटके लिये बाध्य करना किन्तु और किसीको नहीं। पं० साँगीदासजी व्यासको लगभग ६ मासकी सेवाके पश्चात् एक माससे भी कमकी *अवैतनिक* छुट्टी देना और पं० रामेश्वर दयालजीको लगभग ६ मासके पश्चात् ही पूर्ण एक मासकी *वैतनिक* छुट्टी दे देना; पं० साँगीदासजीका इत्तफ़ाक़िया छुट्टीके बाद केवल एक दिनकी देर होनेपर, हक़ रहते हुए भी, कुल छुट्टीका *वतन काट लेना*, और पं० रामेश्वरदयालजीका, दो दिनकी देरी होनेपर भी, कोई *वेतन न काटना* क्या ये कर्त्तव्यपरायणताके उदाहरण हैं? बा० बहादुर लालजी बी०ए०के लिये स्थायी हेडमास्टरीसे इनकार करना और रजिस्टरों आदिमें अस्थायी दिखलानेकी चेष्टा करना और फिर कोर्टमें स्वीकार करना, क्या सत्यपरायणता कही जा सकती है? शिवशरण स्वामी, हरीसिंह राजपूत और चाँदमल दर्ज़ी आदि विद्यार्थियोंको केवल इस अपराधमें सदैवके लिये बहिष्कृत करना कि वे श्रीडूँगर कालेजमें भरती होना चाहते थे क्या विद्या-प्रचार कहा जा सकता है? यह विचारणीय है कि मलकाने मुसलमानोंको तो जाति इतनी मुद्दतके बाद भी लेनेको उद्यत है किन्तु

भी जैन पाठशालामें, जो"अहिंसा परमो धर्मः"की अनुयायिनी है, ये विचारे निरपराध विद्यार्थी नहीं लिये जा सकते, क्या यही न्याय-परायणता है ? यहांका फ़ैसला तो अचल है, अपीलकी सुनवाई क्यों और कहां हो ? अभी वर्तमान अपीलकी घटना विचारणीय है-चौरीचौरा हत्या-काण्डमें १७२ आदमियोंको फाँसीका हुक्म हुआ था; किन्तु अपीलसे केवल १६को ही फाँसी देना सिद्ध हुआ। क्या यह प्रशंसनीय न्याय नहीं है ? किन्तु कोचर महाशयका फैसला तो पूर्ण न्यायद्वारा होता है, तो फिर अचल रहनेमें आश्चर्य ही क्या है ? वाह रे न्याय वाह !

श्रीमती भगवती देवी जैसी विदुषी और सच्चरित्रा लेट हेड-मिस्ट्रेसके साथ जैसा न्याय हुआ है, वह किसीसे छिपा नहीं है। अब मेरे साथ भी इसी न्यायका परिचय दिया जा रहा है। क्या उक्त कार्य्योंके करनेमें कोई कह सकता है कि पाठशालाको कोई हानि नहीं हुई ? मैं आशा करता हूँ कि कोई पुरुष, जिसका बुद्धिसे लेशमात्र भी परिचय हो गया है, इन कार्य्योंको हानि-कारक कहे बिना नहीं रह सकता। एक मासका नोटिस देनेका नियम रहते हुए अधिकांशमेंसे किसीको १५ दिन, किसीको एक सप्ताह, किसीको २४ घण्टे, किसीको केवल दो-एक घण्टेका नोटिस देकर अलग कर देना ही क्या शुभचिन्तकताका चिह्न है ? आपका यहांका व्यवहार नहीं; किन्तु आपकी"महकमे ख़ास" की सर्विस—जहांसे आपको इस्तीफ़ा देना पड़ा था—और आधुनिक सर्विसका व्यवहार भी सिद्ध करता है कि जितना आप

दिखावेको प्रिय समझते हैं, कर्त्तव्य को नहीं; आपके मातहत और सहचर आपसे कितने प्रसन्न हैं तथा रहे हैं, बीकानेर-निवासी उससे अपरिचित नहीं हैं।

इसी तरह पं० माणिकलालजी जैनी तथा पं० गिरधरदेवचन्द जी धर्माध्यापकोंका नोटिस भी आपके सद्व्यवहारोंका पता देता है। आपके न्याय, सद्व्यवहार तथा दयालुताका पूर्ण परिचय पं० रमाशंकरजी विशारद तथा बा० भगवंतसिंहजी विशारद के इस्तीफे और बा० धीरामजी गुप्तके डिसमिस्सल आर्डरसे अक्षरशः मिलता है।

मेरी नियुक्ति २५ अगस्त सन् १९२० ई० में ३०) मासिकपर होकर अब ४०)वेतन पा रहा हूं और मेरी कक्षाओंमें मेरे परिश्रम का फल सन् १९२०—२१ में ८८ फी सदी, सन् १९२१—२२ में ८३ फी सदी और सन् १९२२—२३ में ७३ फी सदीसे कभी भी कम नहीं रहा। गत परीक्षामें हिन्दी क्लास (सी) का, जो मेरे ज़िम्मे थी,परीक्षा-फल विचारणीय है। ऐसा उत्तम फल कदाचित् ही पाठशालाके इतने दिनोंमें हुआ हो। इसके अतिरिक्त आजतक रिमार्क-बुकमें किसी प्रकारका हानिकारक रिमार्क मेरे विरुद्ध नहीं है और मेरी तरक्की भी मेरे निर्दोष होनेकी सूचक है, परन्तु फिर भी मुझको नोटिस दिया गया है। मैंने आपके व्यवहारोंको बावजूद आपसे कई दफे सविनय निवेदन किया कि पाठशाला के पवित्र उद्देश्यों तथा अहिंसाधर्मको पद्दलित न करें और पाठशालाके धनको व्यर्थ व्यय होनेसे बचावें, किन्तु स्वभाव प्रकृति-

का अङ्ग बन जानेके कारण विना पूर्ण चेष्टाके अलग नहीं हो सकता, इसी कारण आपने इसकी कुछ भी पर्वाह न की। अब इस लेखद्वारा सर्व-सज्जनों तथा पाठशालाके पूर्वोक्त प्रबन्ध-कर्त्ताओं से, **इसलिये नहीं कि मुझको कृपा कर फिर रख लिया जावे;** *किन्तु इसलिये कि आगामी इस पवित्र उद्देश्य में धब्बा न लगे और व्यर्थ धन व्यय न हो,* निवेदन है कि वे *कृपा कर इस पवित्र उद्देश्य तथा बालकोंकी अमूल्य आयुको,* जिसके लिये आप लोग कठिन परिश्रम द्वारा कौड़ी-कौड़ी जमाकर लाखों रुपये खर्च कर चुके हैं तथा कर रहे हैं, *नष्ट होनेसे बचावें,* सुप्रबन्ध कर कार्यका संचालन करें और जैन-मतके मुख्य व्रत "अहिंसा परमो धर्म्मः" को *पालिसीसे नहीं, सत्य स्वभावसे* पालन कर जनता को कृतज्ञ करें।

पाठशालाके पूज्य सदस्य तथा अन्य सज्जन महानुभावो! केवल आप-लोगोंकी सेवामें संकेतमात्र सत्यासत्यका दृश्य प्रकट किया गया है। सादर निवेदन है कि सत्यासत्य-निर्णयमें पूर्ण योग दे आप यशके भागी बनें और शीघ्र सभा आदि द्वारा जाँच कर देखें कि कैसी पोल चल रही है। श्री महावीर जैनमण्डलसे भी प्रार्थना करें कि वह भी यथाशक्ति सत्यासत्य-निर्णयमें हाथ बटावे। अब निर्णयकार्य आप लोगोंके विचारोंपर छोड़ ईश-प्रार्थना करता हुआ विदा होता हूँ—

"पाहनसे भी कठिन कलेजा, कर दो करुणाकन्द।
गले पहन लोहेका तमगा, रहूं जेलमें बन्द॥"

तोप, तीर, तलवार आदिका, सबका लूं आनन्द ।
पड़ें हथकड़ी पैरों बेड़ी, है अब यही पसन्द ॥
सेवक विनय यही है मोहन, होय पूर्ण अरमान ।
जल्दी हर लो कष्ट भारतका, सहा नहीं जाता अपमान ।"

नोट—(१) इस लेखमें कोचर महाशयका अर्थ बाबू शिवबक्शजी साहिब कोचर, हेडमास्टर श्री जैन पाठशाला बीकानेरसे है ।

(२) महाशयो ! आजकल जैसा न्यायका व्यवहार कोचरजी महाशयका पं० हांसीदासजी व्यासके साथ हो रहा है, देखने तथा सुनने और विचारनेयोग्य है । कोचर महाशयके न्याय तथा सद्व्यवहारका यह प्रत्यक्ष वर्त्तमान नमूना है ।

(३) हेडमास्टरजीके विषयमें अधिक न कहकर केवल इतना ही कहना है कि आप कोचर महाशयके कोचसे (Coach) इतना अनुभव प्राप्त कर चुके हैं कि अध्यापकोंके कार्योंको बिना देखे ही त्रुटियाँ निकाल टीका टिप्पणियोंकी झड़ लगा कोचर महाशयसे भी बढ़ना चाहते हैं ।

(४) कोचर महाशयमें एक बड़ा भारी गुण यह

भी है कि गुदर्शी दरख्वास्तपर ही कि
किसी जाँच-पड़तालके एकतरफ़ा डिग
शीघ्र दे देते हैं। क्या यह कम अनुभ
तथा आश्चर्यकी बात है!

(५) सज्जनो! ज़रा उच्च अध्यापकोंकी कक्षाओं
परीक्षाफलोंकी तरफ़ ध्यान दीजिये तो पू
शुभचिन्तक होने तथा माल खजानेका रहस्य
स्पष्ट समझमें आ जायगा।

(६) यदि किसी मन्थराकी सलाहपर कार्य चल
रहा है, तो इन घटनाओंका उपस्थित होना
कोई आश्चर्यकी बात नहीं है, क्योंकि महा-
रानी कैकेयीकी मन्थराने तो अपने कल, बल,
छलसे अपना नाम सदाके लिए अमर कर
दिया, तो इस अदृश्य मन्थराने अभी क्या
अधिकता की!

ता० १२ जून, १९२३

निवेदक—रामलौटनप्रसाद,
असिस्टेण्ट मास्टर,
श्री जैनपाठशाला, बीकानेर।

Shri Kewal Jiwananand Press Nayashahar
Bikaner.

मेरे इस उपर्युक्त नोटिसे'जैन-मतका प्रचार'का उत्तर, जो श्रीमान
मथाभाई टी० शाह बी० ए० मुख्याध्यापकने दिया है, आगे
२ में अक्षरशः दर्ज है।

कागद ३

श्री जैन पाठशाला, अंकलेश्वरके

किये हुए

आक्षेपोंका प्रतिवाद

जिसका प्रमाण योग्य और विद्यासम्पन्न अध्यापकोंके न मिलने [अर्थात् कोचर महाशयके दुर्व्यवहारसे निकल जाने] के कारण पढ़ाईपर भी पड़ा। अब समय पाकर छात्रोंकी संख्या कुछ ठीक हुई है और पढ़ाई भी पहलेसे उत्तमतर है [जैसा कि कोचर महाशयकी १६ वर्षीय रिपोर्टकी परिशिष्ट नं० ४ के परीक्षाफलसे विदित होता है —देखिये काण्ड ७ परिशिष्ट नं० १० (ख) और वास्तविक भेद सन १९२२ तथा सन १९२३ के परीक्षाफलमें "कोचर महाशयके लेखानुसार परीक्षाफल" तथा "वास्तविक परीक्षाफल" को देखनेसे प्रकट होगा—देखिये काण्ड १,पृष्ठ-४०]। इस साल आगामिनी मिडिल परीक्षामें छात्रोंके भेजनेकी आशासे 'क्लासिफिकेशन' की स्वीकृति भी प्राप्त कर ली गई थी, परन्तु कई अलोकमान्य अध्यापकों [नहीं, वरन् शास्त्रीजीके १२ अप्रैल सन् १९२३ ई० के नादिरशाही आर्डरके अनुसार—देखिये काण्ड ४ पृष्ठ-१०८] की पूर्ण अनुमतिसे सप्तम कक्षाके छात्र, जिन्हें सब विषयोंमें उत्तीर्ण न होनेके कारण 'प्रोमोशन' नहीं दिया गया अथवा 'डिमोट' कर दिया गया [इसीलिये कोचर महाशयकी १६ वर्षीय रिपोर्टमें "—० ७० प्रतिशत" फल दिखाया गया प्रकार [मेरे, अर्थात्

क पे दूसरे स्कूलोंमें

यकी अष्टम कक्षा-

'स्टैण्डर्ड' का

उपस्थित

ता० २१-५-२३ के पत्रके अनुसार—देखिये परिशिष्ट नं० ६] ३ दिन ठहरकर मुहूर्त [नहीं, वरन् भाईको सख्त बीमार जान घबराहट] से विदा हुए और वहाँ जाकर १००) रु० मासिकपर नौकर हो गये। ऐसा अवगत होनेपर [ज्योतिषानुसार अथवा उनके विरोधियोंसे जानकर जब कि उनके तार और उपरोक्त पत्रमें भाईकी बीमारीका निश्चय होता था !] और [गत वार्षिक] परीक्षा निकट [ही समाप्त] होनेके कारण [क्योंकि वार्षिक परीक्षा हुए केवल १॥ मास बीता था और फिर षाण्मासिक परीक्षा ४ मासके पश्चात् होनेवाली थी, इसलिये] उनको शीघ्र हाजिर होनेके लिए लिखा गया और नोटिस दिया गया, तथापि [नौकर होनेके कारण बीमार भाईको छोड़कर] न हाज़िर हुए और न चिट्ठीका जवाब दिया [जो लगभग एक मासकी छुट्टीकी अर्ज़ी नियमानुसार भेज दी थी]। तदुपरान्त [एक मासके अधिक छुट्टीका हक़ रहते हुए भी केवल बीमारीकी दशामें भाईकी सेवा करनेके अपराधमें मदद] एक सप्ताह प्रतीक्षा करके [स्वच्छन्दताके कारण अथवा यों कहिये कि "दयालुता" आदिसे द्रवीभूत होनेके कारण सदाके लिये] डिसमिस [Dismiss] किये गये [और सभ्यता, नम्रता, मनुष्यता, न्यायप्रियता, कर्तव्य परायणता तथा दयालुता आदिका जीता-जागता प्रत्यक्ष आदर्श और चिरस्थायी उदाहरण स्थापित किया गया]।

(२) बाबू पन्नालाल—

(क) * नियम १०८ के अनुसार बीमारीका प्रमाणपत्र सबारे

* इस नियम नं० १०८ को परिशिष्ट नं० ११ में देखिये।

ता० २१-५-२३ के पत्रके अनुसार—देखिये परिशिष्ट नं० ६] ३ दिन ठहरकर मुझने [नहीं, वरन् भाईको सख्त बीमार जान घबराहट] से विदा हुए और वहाँ जाकर १००) रु० मासिकपर नौकर हो गये। ऐसा अवगत होनेपर [ज्योतिषानुसार अथवा उनके विरोधियोंसे जानकर जब कि उनके तार और उपरोक्त पत्रसे भाईकी बीमारीका निश्चय होता था ?] और [गत वार्षिक] परीक्षा निकट [ही समाप्त] होनेके कारण [क्योंकि वार्षिक परीक्षा हुए केवल १॥ मास बीता था और फिर षाण्मासिक परीक्षा ४ मासके पश्चात् होनेवाली थी, इसलिये] उनको शीघ्र हाजिर होनेके लिए लिखा गया और नोटिस दिया गया, तथापि [नौकर होनेके कारण बीमार भाईको छोड़कर] न हाज़िर हुए और न चिट्ठीका जवाब दिया [जो लगभग एक मासकी छुट्टीकी अर्ज़ी नियमानुसार भेज दी थी]। तदुपरान्त [एक माससे अधिक छुट्टीका हक़ रहते हुए भी केवल बीमारीकी दशामें भाईकी सेवा करनेके अपराधमें महज़] एक सप्ताह प्रतीक्षा करके [स्वच्छन्दताके कारण अथवा यों कहिये कि "दयालुता" आदिसे द्रवीभूत होनेके कारण सदाके लिये] डिसमिस [Dismiss] किये गये [और सत्यता, सभ्यता, मनुष्यता, न्यायप्रियता, कर्त्तव्य परायणता तथा दयालुता आदिका जीता-जागता प्रत्यक्ष आदर्श और चिरस्थायी उदाहरण स्थापित किया गया]।

(२) बाबू पन्नालाल—

(क) * नियम १०८ के अनुसार बीमारीका प्रमाणपत्र सबसे

* इस नियम नं० १०८ को परिशिष्ट नं० ११ में देखिये।

(२) पं० सांगीदास—

(क) नियमानुकूल इनका वैतनिक छुट्टीका कोई हक़ नहीं था [क्योंकि पाठशालामें अध्यापक हुए ६ मास व्यतीत हो चुके थे और इत्तफ़ाक़िया छुट्टीके अतिरिक्त * नियम नं० १०५ के अनुसार रियायती छुट्टीका भी हक़ तीन सप्ताहसे अधिक था], इसलिये अवैतनिक छुट्टी मंज़ूर हुई।

(ख) सम्मेलनमें सम्मिलित होनेके लिये ख़ास तौरपर हेड-मास्टरके छुट्टीपर होते हुए † नियम नं० ११० के अनुसार छुट्टी दी गई। छुट्टीसे ज़्यादा [केवल एक] दिन लगाकर आये जिसकी कोई सूचना हाज़िरीके अनुसार पहिले नहीं आई, इसलिए [यद्यपि नियमानुसार उनका पूर्ण छुट्टीका हक़ बाक़ी भी था तथापि कोवर महाशयके "न्यायशील आदर्श सज्जन" होनेके कारण केवल एक दिनका नहीं बल्कि तमाम ली हुई छुट्टीका वेतन काटा गया।

(ग) एक मासकी छुट्टी भाईकी बीमारीके तारके आधारपर ता० १८-५-२३ को माँगी जिसपर सेकेण्ड, मास्टरके उस समय छुट्टीपर होनेके कारण [अर्थात् ता०-१६-५-२३ को सैकेण्ड-मास्टर छुट्टी व्यतीत कर वापिस आ चुका था] ख़ास सूरतमें १० दिनकी छुट्टी दी गई। ज़ाहिर यह किया गया कि 'मैं कल सुबहकी गाड़ीसे जाऊँगा" पर इसके विरुद्ध बीकानेरमें [अपने

* इस नियम नं० १०५ को परिशिष्ट नं० ११ में देखिये।

† इस नियम नं० ११० को परिशिष्ट नं० ११ में देखिये।

ता० २१-५-२३ के पत्रके अनुसार—देखिये परिशिष्ट नं० ६] ३ दिन ठहरकर मुहूर्त [नहीं, वरन् भाईको सख्त बीमार जान घबराहट] से विदा हुए और वहाँ जाकर १००) रु० मासिकपर नौकर हो गये। ऐसा अवगत होनेपर [ज्योतिषानुसार अथवा उनके विरोधियोंसे जानकर जब कि उनके तार और उपरोक्त पत्रसे भाईकी बीमारीका निश्चय होता था ?] और [गत वार्षिक] परीक्षा निकट [ही समाप्त] होनेके कारण [क्योंकि वार्षिक परीक्षा हुए केवल १॥ मास बीता था और फिर षाण्मासिक परीक्षा ४ मासके पश्चात् होनेवाली थी, इसलिये] उनको शीघ्र हाजिर होनेके लिए लिखा गया और नोटिस दिया गया,तथापि [नौकर होनेके कारण बीमार भाईको छोड़कर] न हाज़िर हुए और न चिट्ठीका जवाब दिया [जो लगभग एक मासकी छुट्टीकी अर्ज़ी नियमानुसार भेज दी थी]। तदुपरान्त [एक माससे अधिक छुट्टीका हक़ रहते हुए भी केवल बीमारीकी दशामें भाईकी सेवा करनेके अपराधमें मदज़] एक सप्ताह प्रतीक्षा करके [स्वच्छन्दताके कारण अथवा यों कहिये कि "दयालुता" आदिसे द्रवीभूत होनेके कारण सदाके लिये] डिसमिस [Dismiss] किये गये [और सत्यता, सभ्यता, मनुष्यता, न्यायप्रियता, कर्त्तव्य परायणता तथा दयालुता आदिका जीता-जागता प्रत्यक्ष आदर्श और चिरस्थायी उदाहरण स्थापित किया गया]।

(३) बाबू पन्नालाल—

(क) * नियम १०८ के अनुसार बीमारीका प्रमाणपत्र सबसे

* इस नियम नं० १०८ को परिशिष्ट नं० ११ में देखिये।

माँगा जाता है [क्या २ या ३ दिनके लिये पाठ्शालाके अ
आजतक किसी औरसे प्रमाणपत्र माँगा गया है ? यदि माँ
गया होता तो उनके नाम मय प्रमाणके होते !], इसलिये इनसे
माँगा गया।

(ख) द्वितीय, भाषा उर्दू होनेके कारण पाठ्शालाके लिये इतने
उपयोगी नहीं है, इस कारणसे जिस समय पृथक् करनेका विचार
किया गया था उस समय अस्थायी थे [कदाचित् गुजराती
भाषा पाठ्शालाके लिये उपयोगी थी, इसलिये शाहजीके बजाय
बाबू पन्नालालजीको नोटिस दिया गया। यदि ऐसे उपयोगी न
होनेसे अस्थायी थे तो क्या १५ दिनमें ही इतनी योग्यता हो गयी
जो स्थायी कर दिये गये ? सम्भव है कि पहले उनमें असत्य
कहने या नवयुवक होनेके कारण चापलूसी आदि करनेका अभाव
रहा हो, जिनको इन दिनोंमें सुधार लिया गया हो, किन्तु विश्वास
नहीं होता—कदाचित् यह कोचर महाशयके "नम्रता और दया-
लुताके व्यवहार" का रूप हो "पर इतना समझनेकी बाबूजी
(रामलौटन प्रसाद अथवा और किसी) में बुद्धि कहाँ ?" इस गूढ़
रहस्यको तो केवल वही समझ सकता है जो शाहजी की भाँति
"आत्मीय शुद्ध भावोंसे" भरा हो]।

बू बहादुरलाल—

[कोचर महाशयके इनकारपर भी] क़रीब
की फ़ाइलोंमें नहीं मिला [क्योंकि दावा
डिगरीका रुपया भी वसूल हुआ जो अब

छिपाया नहीं जा सकता—देखिये परिशिष्ट नं० ८] इसलिए इनकी बाबत कुछ नहीं कहा जा सकता। यह भी बिलकुल झूठ [नहीं] है कि रजिस्टरोंमें कोई फेरफार किया गया [क्योंकि दावेकी जवाबदेही स्थायी होते हुए भी *अस्थायी* की गयी थी। कदाचित् यह स्पष्ट झूठ ज़बानी ही गढ़ा गया हो !]।

(५) पं० भगवती देवी—

अस्थायी तौरपर [जिस तरहसे बा० बहादुरलालजी बी० ए० लेट हेड्मास्टरको रक्खा था और आखिर अदालतमें स्थायी ही मानना पड़ा] ३ मासके लिए नियुक्त की गई थीं। इनका कार्य कमेटीके मेम्बरों [अर्थात् कोचर महाशय]को पसन्द नहीं आया, इसलिए इनको स्थायी नहीं किया गया [हालांकि बा० बहादुरलालजी बी० ए० की तरह दावा करनेपर वह भी स्थायी प्रमाणित हो सकती थीं] और पृथक् करना पड़ा। अस्थायी कर्मचारियोंको नोटिस देनेका कोई नियम नहीं है और न उचित है। इनको तिसपर भी [किसी नियम अथवा उचित-अनुचितका विचार न कर] अबला होनेके कारण [" न्यायशील आदर्श सज्जन" कोचर महाशयकी प्रार्थनापर] कमेटीने रिआयत करके उपस्थितिसे अधिक दिनका वेतन दिलाया है [किन्तु अगर कोर्टमें जातीं तो बा० बहादुरलालजी बी० ए०की भाँति न्यायानुकूल पूर्ण वेतन कोर्टद्वारा प्राप्त कर सकती थीं]।

(६ तथा ७) पं० मणिलाल व पं० गिरधरलाल

[पं० गिरधर देवचन्दजी]

नियमके अनुसार स्थायी कर्मचारियोंको पृथक् करते समय एक मासका नोटिस बराबर दिया जाता है, तदनुसार [पूर्ण निर्दोष रहनेपर भी अनावश्यक एक मासका नोटिस दे] इनके साथ उचित [नहीं, वरन् अनुचित तथा स्वच्छन्दताका] व्यवहार किया गया है।

(८ तथा ९) पं० रमाशङ्कर, बाबू भागवतसिंह

इन दोनोंने त्यागपत्र दिये हैं जिनके कारण वे स्वयं भली-भाँति जानते हैं। पं० रमाशङ्करको कमेटी [नहीं, वरन् नियम नं० ५७* के अनुसार केवल कोचर महाशय] ने १० दिनकी छुट्टी लेकर जाने और [तार तथा नियमानुसार अर्जी भेज] लगभग एक मास लगाकर वापिस आने और विशेषतः अपनी रिपोर्टोंमें लिखी हुई अवधिसे भी [तारद्वारा सूचना दे] ४ दिवस [नियम नं० ११४† के अनुसार] अधिक लगाकर आनेपर डिसमिस [Dismiss] करने या वेतन काटनेके बजाय [जो उपर्युक्त नियम नं० ११४ के बिलकुल विरुद्ध था] पूरा वेतन उनकी उस समयकी बयान की हुई दुर्दशा [नहीं, "त्यागपत्र"—जिसे यदि कोचरशाह प्रकाशित कर देते तो "दुर्दशा" और "दया" का मर्म

* नियम नं० ५७ को परिशिष्ट नं० ११ में देखिये।

† इस नियम नं० ११४ को परिशिष्ट नं० ११ में देखिये।

खुल जाता] पर दया [नहीं, घरन् कोर्टकी धमकी और अखबारी दुनियामें पोलकी धज्जियाँ उड़ जानेकी खबर सुन भयातुर हो पाठशालासे पृथक् होनेके पश्चात् स्वयं:खुला] करके दिया गया।

(१०) बाबू श्रीराम—

अपने भतीजेकी बीमारीके कारण छुट्टी गये थे [किन्तु अभाग्य-वश भतीजेके मर जानेपर लाचार हो नियमानुसार अर्जी भेज छुट्टी बढ़वानी चाही, मगर कोचर महाशयकी "दयालुता" की अधिकताके कारण छुट्टी स्वीकार नहीं हुई, इससे निराश, हताश और दुःखी हो] फिर हाज़िर नहीं हुए, इसलिये उन्हें डिसमिस [करके "नम्रता और दयालुताका व्यवहार"] किया गया। इस प्रकारका [सद्] व्यवहार अध्यापकोंके साथ हुआ है [जिससे कोचर महाशयकी "दयालुता" और सभ्यताका पूर्ण परिचय मिलता है।]। छुट्टियोंके सम्बन्धमें नियम नं० १११* के अनुसार पाठशालाके हानि-लाभका विचार मुख्य तथा अवश्य किया जाता है [इसीलिये बा० बहादुरलालजी बी० ए० और पं० सौंगीदासजी व्यासको षण्मासिक तथा वार्षिक परीक्षाओंके समय छुट्टियाँ दी गयीं] और समुचित भी है।

बा० रामलोटनकी इसी वर्षकी पढ़ाईकी बाबत इतना कह देना पर्याप्त है कि उन्होंने प्राइमर पढ़नेवाली एक ही कक्षाके परी-क्षाफलका आश्रय लेकर ७३ फीसदी परिणाम फल बतलाया है [वाहरी चाटुकारिता! तू धन्य है कि एक बी० ए० मुख्याध्या-

* इस नियम नं० १११ को परिशिष्ट न० ११ में देखिये।

(६ तथा ७) पं० मणिलाल व पं० गिरधरलाल

[पं० गिरधर देवचन्द्रजी]

नियमके अनुसार स्थायी कर्मचारियोंको पृथक् करते समय एक मासका नोटिस बराबर दिया जाता है, तदनुसार [पूर्ण निर्दोष रहनेपर भी अनावश्यक एक मासका नोटिस दे],इनके साथ उचित [नहीं, वरन् अनुचित तथा स्वच्छन्दताका] व्यवहार किया गया है।

(८ तथा ९) पं० रमाशङ्कर, बाबू भागवतसिंह

इन दोनोंने त्यागपत्र दिये हैं जिनके कारण वे स्वयं भली-भाँति जानते हैं। पं० रमाशङ्करको कमेटी [नहीं, वरन् नियम नं० ५७* के अनुसार केवल कोचर महाशय] ने १० दिनकी छुट्टी लेकर जाने और [तार तथा नियमानुसार अर्जी भेज] लगभग एक मास लगाकर वापिस आने और विशेषतः अपनी रिपोर्टमें लिखी हुई अवधिसे भी [तारद्वारा सूचना दे] ४ दिवस [नियम नं० ११४† के अनुसार] अधिक लगाकर आनेपर डिसमिस [Dismiss] करने या वेतन काटनेके बजाय [जो उपर्युक्त नियम नं० ११४ के बिलकुल विरुद्ध था] पूरा वेतन उनकी उस समयकी बयान की हुई दुर्दशा [नहीं, "त्यागपत्र"—जिसे यदि कोचरशाह प्रकाशित कर देते तो "दुर्दशा" और "दया" का मर्म

* नियम नं० ५७ को परिशिष्ट नं० ११ में देखिये।

† इस नियम नं० ११४ को परिशिष्ट नं० ११ में देखिये।

खुल जाता] पर दया [नहीं, वरन् कोर्टकी धमकी और अखबारी दुनियामें पोलकी धज्जियाँ उड़ जानेकी खबर सुन भयातुर हो पाठशालासे पृथक् होनेके पश्चात् स्वयं घुला] करके दिया गया।

(१०) बाबू श्रीराम—

अपने भतीजेकी बीमारीके कारण छुट्टी गये थे [किन्तु अभाग्य-वश भतीजेके मर जानेपर लाचार हो नियमानुसार अर्जी भेज छुट्टी बढ़वानी चाही, मगर कोचर महाशयकी "दयालुता" की अधिकताके कारण छुट्टी स्वीकार नहीं हुई, इससे निराश, हताश और दुःखी हो] फिर हाज़िर नहीं हुए, इसलिये उन्हें डिसमिस [करके "नम्रता और दयालुताका व्यवहार"] किया गया। इस प्रकारका [सदु] व्यवहार अध्यापकोंके साथ हुआ है [जिससे कोचर महाशयकी "दयालुता" और सभ्यताका पूर्ण परिचय मिलता है।]। छुट्टियोंके सम्बन्धमें नियम नं० १११* के अनुसार पाठशालाके हानि-लाभका विचार मुख्य तथा अवश्य किया जाता है [इसीलिये बा० बहादुरलालजी बी० ए० और पं० साँगीदासजी व्यासको षण्मासिक तथा वार्षिक परोक्षाओंके समय छुट्टियाँ दी गयीं] और समुचित भी है।

बा० रामलोटनकी इसी वर्षकी पढ़ाईकी बाबत इतना कह देना पर्याप्त है कि उन्होंने प्राइमर पढ़नेवाली एक ही कक्षाके परी-क्षाफलका आश्रय लेकर ७३ फीसदी परिणाम फल बतलाया है [बाहरी चाटुकारिता! तू धन्य है कि एक बी० ए० मुख्याध्या-

* इस नियम नं० १११ को परिशिष्ट नं० ११ में देखिये।

पकसे कितना विरुद्ध कहलवा दिया]। अन्य कक्षाओंका अत्यन्त ही शोचनीय फल रहा है। यदि मौखिक परीक्षाफलके लब्धाङ्क ४० फी सदी भी माने जावें [जो ५४ फी सदीसे कम कदापि नहीं हैं] तो उनका फल [परिशिष्ट नं० १० (ब) तथा पृष्ठ १२८ के सन् १९२२-२३ के परीक्षाफलके अनुसार] और भी शोचनीय [अथवा प्रशंसनीय] होगा। स्कूल-रिमार्क-बुक भी उनके नामपर निकले हुए रिमार्कोंसे अलंकृत है [इसीलिये मेरे स्कूलसे हटनेके १॥। मास पश्चात्‌के एक नोटके सिवाय, जो बा० पन्नालालजीका लिखा हुआ "साँचमें लाँछ" में प्रकाशित किया है जिसका मुझसे कुछ भी सम्बन्ध नहीं है; और कुछ प्रकाशित न कर सके–देखिये परिशिष्ट नं० ७] जिनके कारण वह कबके ही स्कूलसे पृथक् कर दिये जाते, पर ऐसा नहीं हुआ है। वह मंत्रीजी [कोचर महाशय] की ही दयालुता है [कि श्रीमती अगरबाँजीको वृद्धावस्थाके कारण विना किसी इनाम-इकरामके निकाला गया और बा० श्रीरामजी गुप्तको उनके भतीजाके मर जानेपर छुट्टी देनेके वजाय डिसमिस किया गया आदि आदि]। उपरोक्त लेख मेरी समझमें पाठशालाकी वास्तविक परिस्थिति [छिपाने] का [पूर्ण] द्योतक होगा और इससे जनताको विदित हो जावेगा कि असलियतमें मामला क्या है।

अन्तमें बा० रामलोटन प्रसादको सूचना दी जाती है कि वास्तवमें यदि "जैन मतका प्रचार" शीर्षक लेख उनकी ही ओरसे निकला है तो उसमें किये हुए आक्षेपोंके लिए पाठशालाकी प्रबन्ध-

फारिणीसे किसी प्रकारका अभियोग चलानेसे पूर्व क्षमा माँग लें [शाहजीको इस "निःस्वार्थ तथा आत्मीय शुद्ध भावों" से परिपूर्ण सूचनाके लिये अनेकानेक धन्यवाद हैं]।

बीकानेर, ता० २३ जून सन् १६२३ ई०	मया भाई टी० शाह, हेड-मास्टर, श्री जैनपाठशाला।

शाहजी (बा० मया भाई टी० शाह, बी० ए०, हेड मास्टर श्री जैन पाठशाला, बीकानेर) के "आक्षेपोंका प्रतिवाद" शीर्षक नोटिसका, जिसका उल्लेख इस उपर्युक्त काण्ड ३ में किया गया है, प्रत्युत्तर जो मैं (रामलोटन प्रसाद) ने दिया है वह जनताके विचारार्थ आगे काण्ड ४ में अक्षरशः दर्ज है।

Shri Kewal Jiwananand Press, Nayashahr, Bikaner.

* इस उपर्युक्त लेखमें इन [ ] कोष्ठोंके भीतर, यथाशक्ति गूढ़ रहस्योंको संक्षेपतः प्रकट करते हुए, मेरे शब्द हैं।

—रामलोटन प्रसाद

काण्ड ४

ॐ

साँचको आँच क्या ?

शाहजीके नोटिसका प्रत्युत्तर

विद्या-रविके उदयपर, जागा सकल जहान।
जैन-जाति सोवत अहह! उलटी चादर तान॥

यद्यपि मुझे पाठशालासे कोई विरोध नहीं है और न मेरा अभिप्राय पाठशालाको हानि पहुँचानेका है तथापि मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूँ कि बीकानेरी जनताको सत्यका प्रकाश दिखा सकूँ। इसलिये "आक्षेपोंका प्रतिवाद" शीर्षकके नोटिसका स्पष्ट प्रत्युत्तर जनता तथा पाठशालाके लाभार्थ प्रकाशित करता हूँ। सम्भव है कि स्वार्थ वश कोई मनुष्य प्रकाशको भी अनुचित तथा प्रतिकूल समझता हुआ उसे घृणाकी दृष्टिसे देखे; परन्तु इसके लिये मैं दोषी नहीं हो सकता।

पाठशालाके अध्यापकोंका मुख्य कर्त्तव्य यह हुआ करता है कि वे आदर्श बनकर छात्रोंके लिये पथ-प्रदर्शक बनें और ऐसी ही पाठशाला, कि जिसमें ऐसे विचारशील तथा सज्जन पुरुष हों,

उन्नति कर सकती है, अन्यथा स्वयं ही नहीं, किन्तु छात्रोंके जीवनमें भी अधोगति होनेकी पूर्ण सम्भावना होती है। अर्थात् जहाँ अध्यापक चाटुकार और सत्यमुष्ठ हों वहांके विद्यार्थियोंके जीवनका ईश्वर ही रक्षक हो सकता है।

मेरे नोटिसका उत्तर देते हुए बा० मयाभाई टी० शाह मुख्याध्यापक (हेडमास्टर) ने जो कुछ भी लिखा है उससे विदित होता है कि उन्होंने सत्यकी परवाह न करते हुए अपनी आजीविकाके हेतु चापलूसीसे काम लिया है। अर्थात् अपने विद्यार्थियोंको गुप्त रीतिसे यह शिक्षा दी है कि "न ब्रूयात् सत्य-मप्रियम्" पर आरूढ़ रहकर चापलूसीसे अपनी आजीविकाकी रक्षा करना आवश्यक है; और निम्नलिखित बातोंसे प्रमाणित होगा कि केवल कोचर महाशयको प्रसन्न करनेके निमित्त एक मुख्याध्यापकने कितनी कर्त्तव्य-परायणता की है: —

१—(क) शाहजी महाशयने सन् १६१८—१६ से छात्रोंकी संख्याके कम होनेका कारण प्लेगकी बीमारी बतलाया है; परन्तु यह विचारणीय है कि श्री डूँगर कालेज तथा श्री मोहता मूल-चन्द विद्यालयकी छात्रसंख्यामें तो दिनों-दिन वृद्धि प्रतीत हो और श्री जैन पाठशालाकी संख्यामें न्यूनता हो।

(ख) संस्थाके मंत्रियोंमें परिवर्तन होना और उसका प्रभाव योग्य तथा विश्वासपात्र अध्यापकोंके न मिलनेके कारण पढ़ाई-पर पड़ना जो लिखा है वह भी आश्चर्यजनक तथा निर्मूल है, क्योंकि कोचर महाशय अभीसे नहीं वरन् सन् १६१८ ई० के बहुत

पहलेसे इसके मंत्रीपदको सुशोभित कर रहे हैं। हाँ, यह अवश्य हुआ है कि कोचर महाशयने मेम्बरों तथा प्रवन्धकारिणी कमेटी पर अपना कुप्रभाव डालनेके लिये समय समयपर विसर्जनपत्र दिया और फिर उसी पदको स्वीकार किया है। यदि इसीको मंत्री परिवर्त्तन कहते हैं तो इस प्रभावसे योग तथा विश्वासपात्र अध्यापकोंका न मिलना किस प्रकार हो सकता है? कदाचित् इसको शाहजी महाशय ही जानते होंगे और बा० मातवरसिंहजी बा० चतुर्भुजजी जैनी, बा० विन्देश्वरी प्रसादसिंहजी, बा० भूरामलजी जैनी, बा० शेरसिंहजी जैनी, बा० जेठमलसिंहजी, बा० एस० के० मुकर्जी बी० ए०, एल एल० बी०, हाल असिस्टेंट एकाउण्टेण्ट जेनरल बीकानेर, बा० भोलानाथजी हेडक्लर्क इन्सपेक्टर जेनरल पुलिस बीकानेर, बा० जमुनाप्रसादजी क्लर्क रेवेन्यू मेम्बर, पं० जयरामजी शास्त्री हेड पण्डित श्री डूँगरकालेज, पं० हरिकृष्णजी और बा० बहादुरलालजी बी० ए० आदि आदि मुख्याध्यापक तथा सहायक अध्यापक रहकर कोचर महाशयके कारण ही पाठशालाकी सेवासे वंचित रहे हैं। क्या ये योग्य तथा विश्वासपात्र न थे? हाँ, यदि विश्वासपात्र और योग्यका अर्थ जैन-धर्मावलम्बी तथा चापलूस होना है जैसे कि शाहजी महाशय हैं तो अवश्य मानना पड़ेगा कि ऐसा कोई भी न था।

(ग) सप्तम कक्षाके छात्रोंके उत्तीर्ण न होनेके कारण "प्रोमो" होनेसे वंचित रहना तो स्वाभाविक ही था, किन्तु "डिग्रेड" देना कदाचित् जैनधर्मानुकूल ही हो, किन्तु और तो कोई

न्याय ऐसी आज्ञा नहीं दे सकता। भलेमानस अध्यापकोंका उत्तेजित करना जो लिखा गया है यह भी शाहजीके सत्यका परिचय देता है, अर्थात् ता० १२-४-२३ के आर्डरमें जो दैनिक-छात्रोपस्थिति-रजिस्टरमें यह लिखा है—

The names of these students must be cancelled from the register to-day and they should not be allowed to attend the classes, as I have been fully given to understand from the stud-nts themselves that tney are going to join the college. Last year many of these students had done the same but request being made were re-admitted here, but I strongly affirm that they will not be admitted in future under anv circumstances.

The students :—शिवकृष्ण स्वामी, हरीसिंह राजपूत, चाँदमल दर्ज़ी, भँवरलाल वैद और चतुर्भुजसिंह राजपूत।

N. B —Class teachers to note the above

(sd.) M. T. Shah, Head Master,
12th April 1923.

उपर्युक्त अंग्रेज़ी आर्डरका सर्वसाधारणके सुभीतेके लिये हिन्दी-अनुवाद, जो "साँचको आँच क्या" में पहले नहीं दिया गया था, नीचे दिया जाता है:—

इन विद्यार्थियों (शिवकृष्ण स्वामी, हरीसिंह राजपूत, चाँदमल दर्ज़ी, भँवरलाल वैद और चतुर्भुजसिंह राजपूत)के नाम रजिस्टर से आज ही अवश्य काट दिये जावें और उन्हें कक्षामें कदापि बैठने न दिया जावे, क्योंकि मेरी समझमें स्वयं विद्यार्थियोंद्वारा

यह बात पूर्णरूपसे सिद्ध हो गयी है कि वे कालेजमें पढ़ने जाना चाहते हैं। गत वर्ष भी इन विद्यार्थियोंमेंसे बहुतोंने ऐसा ही किया था; परन्तु प्रार्थना करनेपर उन्हें पुनः दाखिल कर लिया गया था। परन्तु अब मैं सख्त ताकीद करता हूँ कि ये लोग भविष्यमें किसी हालतमें भी दाखिल न किये जावें।

नोट—क्लास-टीचर (कक्षाके अध्यापक) इस बातपर खास तौरपर ध्यान रक्खें।

द० एस. टी. शाह, हेड मास्टर,

ता० १२ अप्रैल सन् १९२१ ई०।

इससे प्रतीत होता है कि शाहजी वास्तविक रूपमें अब कार को, केवल चापलूसीके अधीन, बदलनेपर बाधित किये जाते और अध्यापकोंका अपमान करनेकी चेष्टा कर रहे हैं।

(घ) योग्य अध्यापिकाओंका न मिलना जो लिखा गया है वह भी इतना ही सत्य है जितना कि अध्यापकोंके लिये है। श्रीमती भगवती देवी, जो इस समय एलगिन गर्ल्स स्कूल, बीकानेर मुख्याध्यापिका हैं, क्या योग्य न थीं ? हाँ, विदुषी होनेके कारण उनमें चापलूसी न थी और कदाचित् यही कारण कौवर महाशय की अप्रसन्नताका हो। कमेटीको कार्यका पसन्द न आना सर्वथा निर्मूल है, क्योंकि पण्डिताजीका झगड़ा तो कौवर महाशयके प्रतिज्ञा पूर्ण न करनेपर था।

(ङ) शाहजीने एक विद्यार्थीको प्राइवेट तौरपर "मैट्रिक्युलेशन परीक्षा" में भेजनेका गौरव प्रकट किया है। क्या परीक्षामें

किसी लड़केका सम्मिलित हो जाना तथा करा देना ही गौरव-जनक हो सकता है ? मुझे शोक है कि शाहजीने ऐसे विद्यार्थीपर गौरव किया है जो परीक्षामें बैठकर लगभग सभी विषयोंमें अनु-त्तीर्ण रहा। इसीसे पाठशालाकी उन्नतिका ज्ञान होता है।

२—मुझे शोक है कि शाहजीने नोटिसका उत्तर देते हुए सत्यासत्यका कुछ भी विचार न किया:—

(अ) पं० रामेश्वरदयालजीको छुट्टी देनेका इक़रार नियुक्तिके समय सभापतिजीका कर लेना किस नियमानुसार था और श्रीमती भगवती देवी*से पानी आदिका इक़रार करके मुकर जाना किस नियमानुकूल था ? क्या पं०रामेश्वरदयालजीको छुट्टी आगामी हक़ रियायतोंमें याद दिया जाना नियम १०७† के अनुसार है ? इस साधारण नियमके उल्लंघन या इसमें परिवर्तन करनेका अधिकार सभापतिजीको किस नियमानुसार था ? क्या पं०साँगो-दासजी व्यासको ६ मास कार्य करनेके बाद भी अवैतनिक छुट्टी देना नियमानुकूल था ? इसी तरह क्या पं० रामेश्वरदयालजीको २ दिनकी देरीसे आनेपर, जब कि तार केवल एक ट्रेन छूट जानेका था, पूर्ण वेतन दे देना उचित था ? पं० साँगीदासजी व्यासको केवल एक दिनकी देरी होनेपर कुल छुट्टी जो ११०‡

* शोक है कि श्रीमती भगवती देवीका स्वर्गवास गत फरवरी सन १९२४ ई० में हो गया।

† इस नियम नं० १०७ को परिशिष्ट नं० ११ में देखिये।

‡ इस नियम नं० ११० को परिशिष्ट नं० ११ में देखिये।

नियमानुसार थी, अवैतनिक कर देना क्या न्याय-पूर्ण था ? इस तरह केवल एक दिन ज़्यादा लगाना -इनके लिये भी वैसा ही न था जैसा कि पं० रामेश्वरदयालजीको ?

(थ) पं० साँगीदासजी व्यासके लिये जो १००) मासिकपर नियुक्त होनेका मनगढ़ंत दोष लगाया गया है,उसका पाठशालाके रेकर्डमें तो पता नहीं चलता; सम्भव है कि कोचर महाशय तथा शाहजीको आन्तरिक ज्ञान प्राप्त हुआ हो ।

२—(च) क्या बा० पन्नालालजीके अतिरिक्त और किसीके आजतक केवल दो-तीन दिनकी बीमारीके कारण १०८* नियमका व्यवहार किया गया है ? यदि नहीं, तो इनके साथ क्या विशेषता थी ?

(ट) बा० पन्नालालजीका पाठशालाके लिये अनुपयोगी होना इसीसे विदित होता है कि सप्तम कक्षाको अंग्रेज़ी पढ़ाकर जब शाहजी सन्तुष्ट न कर सके तो बा० पन्नालालजीने अंग्रेज़ी पढ़ाकर सन्तुष्ट किया था । शाहजीकी योग्यताका भी इससे अनुमान होता है कि सप्तम कक्षाको संस्कृतमें शाहजी नहीं वरन् पं० मेघराजजी गोस्वामी पढ़ाकर सन्तुष्ट किया करते थे ।

[त] यह कहना कि अस्थायी कर्मचारियोंको नोटिस देनेका कोई नियम नहीं है और न उचित है, तो बा० पन्नालालजी, बा० माधवलालजी भार्गव तथा पं० केवलचन्दजी रंगाको क्यों और किस नियमानुसार नोटिस दिया गया था ?

* इस नियम नं० १०८ को परिशिष्ट नं० ११ में देखिये ।

(४) बा० बहादुरलालजी बी० ए० के सम्बन्धमें क़रीब क़रीब कुल कागज़ोंका पाठशालासे गुम हो जाना, जब कि दावेके जवाबके लिये कोचर महाशय पूर्णतया उद्यत थे, क्या आश्चर्यजनक नहीं है ? और क्या कोचर महाशयकी सोहन डिग्री, जो कदाचित् २००) के ऊपर है, छिपायी जा सकती है ? यदि रजिस्टरोंमें अस्थायी प्रमाणित करनेके लिये फेरफार करना झूठ है तो अवश्यमेव सत्य है कि कोचर महाशयने "अदालत" में झूठकी शरण ली थी। मैंने तो कोचर महाशयको इतना सफ़ेद झूठ बोलनेवाला न समझकर रजिस्टरोंमें अस्थायी दिखलानेकी चेष्टा करनेका अनुमान किया था। सम्भव है कि शाहजी सच्चे हों।

५—(प) पं० रमाशंकरजी विशारद तथा बा० भागवतसिंहजी विशारदके त्यागपत्र स्वयं प्रकट करते हैं कि कोचर महाशयका न्याय तथा उनकी सभ्यता कितनी उच्च कोटिकी है कि जिससे तङ्ग आकर उन्हें त्यागपत्र देना पड़े। पं० रमाशंकरजीके प्रति दयाभाव दिखलाना सर्वथा निर्मूल है। कोचर महाशय तथा शाहजीकी दयालुताका नमूना तो इसीसे प्रकट होता है कि उन्होंने श्रीमती अगरांजी एक वृद्धा तथा धर्माध्यापिकाको, जो पाठशालामें जन्मसे, धर्म-शिक्षा दिया करती थीं, विना किसी इनाम आदिके अकारण ही गत मार्चसे पृथक् कर दिया। कदाचित् उनको श्रीमती भगवती देवीकी भाँति अबला नहीं, किन्तु सबला समझा गया।

(फ) बा० श्रीरामजी गुप्तके डिसमिसल आर्डरसे कोचर

महाशयकी दयालुताका परिचय मिलता है। अर्थात् उनके प्रिय भतीजेके मर जानेपर हेडमास्टरजीकी सिफारिशपर भी अवैतनिक छुट्टी नहीं दी गयी और खासकर जब कि पाठशालाका, परीक्षा आदि कोई भी ज़रूरी, मौक़ा न था तो नियम १११ * का व्यवहार ही करना क्या दयालुता थी? बा० बहादुरलालजी बी० ए०को दिसम्बर सन् १९२१ ई० में ठीक षणमासिक परीक्षाके दिनोंमें सवेतन तथा पं० साँगीदासजी व्यासको मार्च सन् १९२२ ई०में ठीक वार्षिक परीक्षाके समयमें छुट्टी देना क्या नियम १११* के अनुसार था? सत्य है, "अर्थी दोषं न पश्यति"—मतलबी आदमी सत्यासत्यका निर्णय नहीं कर सकता।

(ब) बा० जेठमलजीका, जोकि १५ वर्षसे कर्त्तव्य-पालन कर रहे थे, त्यागपत्र देनेका भी यही कारण सुना गया है कि शाहजीकी अपेक्षा छात्रगण उनकी प्रतिष्ठा तथा उनसे प्रेम अधिक किया करते थे। कदाचित् शाहजी इसी कारण अप्रसन्न रहकर उनसे सद्व्यवहार न करते थे। क्या इनके अलग करनेके लिये भी शाहजीके पास कोई समुचित तथा माकूल मसाला रिमार्कबुकमें मौजूद है? जहाँतक मैं समझता हूँ कि शाहजीकी अप्रसन्नताके पूर्व उनके विरुद्ध कोई रिमार्क नहीं है। सम्भव है कि अप्रसन्नताके फलस्वरूप अब कोई रिमार्क दे दिये गये हों। कैसा आजन्म स्मरणीय उत्तम पारितोषिक इतने दिनोंकी सेवाका इनको देकर न्याय तथा दयालुताका परिचय दिया गया है!

* इस नियम नं० १११ को परिशिष्ट नं० ११ में देखिये।

(म) क्या नियम ७१ * का पालन किया जाता है ? क्यों किया जावे ? कदाचित् इस नई तथा ठंडे देशके लिये लागू न हो। फिर पालन कर दोषी क्यों बना जावे ? कैसा न्याय, दयालुता तथा स्वास्थ्य-सुधारका प्रत्यक्ष जीता-जागता नमूना है !

(म) पं० मेघराजजी गोस्वामीके ऊपर अचानक नियम ११५† के अन्तिम तीन पंक्तियोंका लगाना क्या आश्चर्यजनक नहीं है ? उस दिनका जवाब-सवाल, जो उनसे हुआ है, ध्यानपूर्वक विचारणीय है। जहाँतक मुझे ज्ञात है। इस शीघ्रतामें २॥ बजेके बाद पाठशालासे पृथक् होनेपर भी उस दिनका वेतनतक देनेका ध्यान नहीं रहा। वाह ! न्याय हो तो ऐसी शीघ्रतासे, यह व्यवस्था वेतनवृद्धि माँगनेपर शीघ्र ही उपस्थित हुई। कहिये ! कैसा कौतूहलजनक तथा हृदयविदारक दृश्य है ?

६—(य) मेरी कक्षाओंकी पढ़ाईके विषयमें इतना ही कहना पर्याप्त है कि शाहजीकी बुद्धिपर लिखते समय खुशामदका पर्दा पड़ा था, अन्यथा निम्नलिखित फलकी मौजूदगीमें किसी सभ्य तथा बुद्धिमान् पुरुषको ऐसा लिखनेका साहस कदापि नहीं हो सकता था :—

---

* इस नियम नं० ७१ को परिशिष्ट नं० ११ में देखिये।

† इस नियम नं० ११५ को परिशिष्ट नं० ११ में देखिये।

वार्षिक परीक्षाफल

(सन् १९२०-२१)

कक्षा	विषय	फ़ी सदी	परीक्षक
५	हिन्दी	१००	श्रीयुत पं० जयदयालजी शर्म्मा, अध्यापक श्री डूंगर कालेज।
४	भूगोल	,,	,, बा० श्रीरामजी गुप्त, प्रधानाध्यापक, पाठशाला ख़ास।
,,	हिन्दी	६७	,, पं० हरिकृष्णजी, अध्यापक, पाठशाला ख़ास।
३	भूगोल	३३	,, बा० सभयराजजी नाहटा, उपमन्त्री पाठशाला ख़ास।
,,	गणित	१००	,, बा० श्रीरामजी गुप्त, प्रधानाध्यापक पाठशाला ख़ास।
१	अंग्रेज़ी	६७	,, पं० हरिकृष्णजी, अध्यापक, पाठशाला ख़ास।

सन् १९२१-२२ (वार्षिक परीक्षा-फल)*

कक्षा	विषय	फ़ीसदी	परीक्षक
६	गणित	१००	श्रीयुत बा० पन्नालालजी, अध्यापक, पाठशाला ख़ास।
५	गणित	१००	" पं० मेघराजजी गोस्वामी, अध्यापक, पाठशाला ख़ास।
४	गणित	१००	" " " " " "
३	गणित	५७	" " " " " " बा० मया भाई टी० शाह, प्रधानाध्यापक, पाठशाला ख़ास।
"	अंग्रेजी	७१	" पं० मेघराजजी गोस्वामी, अध्यापक, पाठशाला ख़ास।
२	हिन्दी	७१	"

सन् १९२२-२३ (वार्षिक परीक्षा-फल)*

कक्षा	विषय	फ़ीसदी	परीक्षक
३	गणित	१००	अज्ञात } शाहजीने इस वर्ष परीक्षकोंको गुप्त रखकर उच्चादर्श स्थापित किया था।
२	गणित	५०	"
२	अंग्रेजी	४५	श्रीयुत बा० शिवचन्दजी झाबक, जैन समाजके एक सज्जन नवयुवक।
प्राइमरी	हिन्दी	७६	" बा० रूपचन्दजी सुराना, उपमन्त्री, पाठशाला ख़ास।
प्रा० इय-ल परीक्षा	हिन्दी	६०	" " " " "

इस वर्षकी परीक्षामें केवल ५ विद्यार्थी ऐसे हैं जिन्होंने ५० फ़ी सदीसे कम नम्बर पाये हैं जिसकी ओर ४० फ़ी सदीका इशारा कर परीक्षाफल शोचनीय बतलाया गया है,उस कक्षामें कमसे कम ५५ और अधिकसे अधिक ८८ फ़ी सदी नम्बरतक विद्यार्थियोंने पाये हैं। सदासे लगभग मेरी ही कक्षासे छात्र पाठशाला भरमें प्रथम तथा द्वितीय श्रेणियोंमें उत्तीर्ण होते आये हैं, इस वर्ष भी मेरी ही कक्षासे छात्र पाठशाला-भरमें प्रथम, द्वितीय, तृतीय तथा चतुर्थ श्रेणियोंमें परीक्षोत्तीर्ण हुए हैं।

(२) इस वर्षके आरम्भ सेशनके स्थायी टाइमटेबुलके अनुसार मेरी मौजूदगीमें जून मासमें अध्यापकोंका कार्य्यविवरण ध्यान पूर्वक: विचारणीय है :—

अध्यापक	कुल छात्र-संख्या	प्रति घण्टा छात्रसंख्या	छात्र संख्या फ़ी-सदी वेतनपर	विशेष विवरण।
श्रीयुत हेडमास्टरजी	१६	२	१२	इसमें धर्म तथा वाणिका वर्णन सम्मिलित नहीं है।
„ रामेश्वरदयालजी	०	१	६	
„ पन्नालालजी	६६	१०	१५२	
„ रामछोटनप्रसाद	६६	१४	२५८	
„ मांगीरामजी	६२	६	१५८	
„ जैठमलजी	१८०	३०	६००	

(ल) स्कूल रिमार्कबुक भी मेरे नामपर निकले हुए रिमार्कोंसे अलंकृत होना जो लिखा गया है, उससे भी शाहजीकी पूर्ण सत्यताका परिचय मिलता है। अर्थात् आजतक मेरे नामसे केवल दो साधारण रिमार्क निकले हैं—(१) आर्डर नं० २ ता० ३-६-२१, जो नितान्त निर्मूल तथा निरंकुशतापूर्ण अधिकारोंसे भरा है। इसके विषयमें भूतपूर्व हेडमास्टरोंकी सम्मतियाँ भी मुझे निर्दोष बतलाती हैं। (२) नोटिस नं० ३८६ ता० २० जनवरी सन् २३, इसके द्वारा एक छात्रके शारीरिक दण्डके विषयमें जवाबतलब किया गया है, जिसका सन्तोषदायक उत्तर फ़ाइलमें मौजूद है। और कोई दूसरे रिमार्क मेरे प्रति आजतक नहीं निकले हैं। सम्भव है कि विदा होते समय हेनरी आठवेंकी भाँति परिश्रमफलका इनामस्वरूप एकाध रिमार्क देकर दयालुताका परिचय दिया गया हो। यहाँपर शाहजीके "अलंकृत" शब्दका प्रयोग उनकी योग्यताका पूर्ण द्योतक है।

अन्तमें मैं शाहजीको उस सूचनाके लिये, कि जो उन्होंने मुझे पाठशालाकी प्रबन्धकारिणीकी ओरसे चलनेवाले अभियोगके लिये दी है, धन्यवाद देते हुए प्रार्थना करता हूँ कि यदि "आक्षेपोंका प्रतिवाद" शीर्षक लेख वास्तवमें उन्हींकी ओरसे निकला है तो वह, उसमें लिखी हुई पॉलिश्ड तथा मुलम्मा की हुई बातोंके लिये जनता तथा छात्रोंकी ओरसे उनपर अविश्वास होने तथा उनको आदर्शसे गिरे हुए समझनेके पूर्व ही स्पष्टरूपसे असलियत प्रकट करें।

यह आक्षेप वृथा है भाई, निर्दोष रामलौटनपर।
कोर्ट क्या कुछ हँसी खेल है, या यह है मासीका घर॥"

नोट—(१) इस लेखमें कोचर महाशयका अर्थ बा० शिव-बख्शजी साहिब कोचर सेक्रेटरी तथा शाहजीका अर्थ बा० मया भाई टी० शाह हेडमास्टर श्री जैन पाठशाला बीकानेरसे है।

(२) आश्चर्य है कि शाहजीने मेरे पत्र नं० ८० ता० १८-५-२३, पत्र नं० ८१ ता० २४-५-२३, नोटिस नं० ६३ ता० १२-६-२३ का कुछ भी ज़िक्र नहीं किया।

(३) अब उचित समझता हूं कि समाचारपत्रोंद्वारा सत्य सन्देश संसारको सुनाकर कर्त्तव्य पालन करूं।

(४) पूज्य मेम्बरों तथा अन्य सज्जनोंसे सादर निवेदन है कि सत्यासत्य-निर्णयमें पूर्ण योग दे यशके भागी बनें।

(५) मेरे इस आन्दोलनकी हार्दिक इच्छा यही है कि श्रीजैन-पाठशालासे अन्याय तथा असत्य व्यवहारकी इतिश्री होकर पूर्ण सच्ची उन्नति हो और वह अपने प्राचीन शुद्ध तथा पवित्र गौरव-को प्राप्त हो।

(६) सन १९२२-२३ में केवल बालक-पाठशालाका मासिक व्यय ४५०) के ऊपरतक कभी कभी पहुँच गया है।

(७) शाहजी अधिकतर धर्मशिक्षा ही दिया करते हैं। इनके कार्यमें कोई त्रुटि क्यों और कैसे पायी जावे? इतना न्यून वेतन पानेपर भी वेतन आदि वृद्धिके लिये चूँ तक नहीं करते, सन्तोष-पूर्वक पूर्णतया कार्य-संचालन करते हैं। गत वार्षिक परीक्षामें

नाममात्र अष्टम कक्षा तथा सप्तम कक्षाका धर्म-परीक्षाफल शून्य रहा है। सबके लिये तो पग पगपर दया-दृष्टि की गयी है, किन्तु इनके लिये क्यों दयाका अभाव है? कदाचित् सबकी भाँति अन्तिम दिनके लिये रक्खा गया हो।

बीकानेर,
ता० १७ जुलाई सन् १९२३ ई०

रामलौटन प्रसाद,
हेड-असिस्टेंट मास्टर,
श्रीजैन पाठशाला

चे० यं० अजमेर

मेरे उपर्युक्त नोटिस "साँचको आँच क्या!" शीर्षकका प्रत्युत्तर जो शाहजी महोदयने दिया है वह आगे काण्ड ५ में सर्वसाधारणके विचारार्थ दर्ज है।

काण्ड ५ आरम्भ करनेके पहले यहाँपर इतना प्रकट कर देना आवश्यक समझता हूँ कि सन् १९२२-२३के परीक्षक, जहाँ तक सुना जाता है, प्रायः जैन-समाजके ही विद्वान् तथा सज्जन महोदय थे। परीक्षकोंको पूर्णतया ज्ञात हो गया होगा कि परीक्षा-फल तथा अध्यापकोंका व्यवहार कहाँतक सन्तोषदायक है और यह भी ज्ञात हो गया होगा कि शाहजीका व्यवहार अध्यापकोंके प्रति कहाँतक उचित है.........आदि आदि। हर्षकी बात है कि शाहजीने "मन्थरा" की पालिसीके अनुसार इस वर्ष परीक्षकोंका नाम अध्यापकोंसे भी गुप्त रक्खा। शाहजीका ऐसा व्यवहार तथा विचार कहाँतक "आत्मीय शुद्ध भावों" से भरा है, पाठक विचार लें।

इसी वार्षिक परीक्षाके समय श्रीमान् बा० शिवचन्द्रजी भायक, जो यहाँकी जैन-समाजमें एक बड़े विद्वान्, सभ्य, गम्भीर, विचारशील तथा उत्साही पुरुष हैं, कक्षा दूसरी (अंग्रेज़ी) के परीक्षक होकर आये थे। यह कक्षा मेरे ज़िम्मे थी। शाहजीने डिक्टेशनकी परीक्षा बिना पढ़ी हुई पुस्तकसे लेनेको कहा। इसपर परीक्षक महोदयने कहा कि "कक्षा दूसरी और बिना पढ़ी हुई पुस्तकसे परीक्षा!" भावार्थ यह कि परीक्षक महोदयकी सम्मति न होनेपर भी शाहजीके आदेशानुसार बिना पढ़ी हुई पुस्तक-हीसे परीक्षा लेनी पड़ी। ऐसा करनेपर भी परीक्षाफल ४५ प्रतिशत हुआ और छात्रोंने अधिकसे अधिक ७६ और कमसे कम ३६ प्रतिशत नम्बर प्राप्त किये थे। इसी अवसर-पर शाहजीने लिखकर मेरी शिकायत परीक्षक महोदयसे की कि रामलोटन प्रसादने लूनकरन सोनार नामक छात्रको बिना मेरी अनुमतिके परीक्षामें सम्मिलित होनेसे वंचित रक्खा है। अतः आप उसकी परीक्षा ले लेवें। परीक्षक महोदयने इस निर्मूल घटनाकी पूर्णतया जाँच की और शिकायतको पूर्ण असत्य पाया। दूसरी घटना यह हुई कि मैं परीक्षक महोदयसे कुछ ऐसी बातें कर रहा था जो सर्व प्रकारसे उचित तथा लाभप्रद थीं। इसपर शाहजीने परीक्षक महोदयके समक्ष अनधिकार आक्षेप कर अस-भ्यता, स्वच्छन्दता तथा निरंकुशताका परिचय दिया। शाहजीके ऐसे व्यवहारोंको देख परीक्षक महोदयने खेद प्रकट किया। उनको "स्थाली पुलाक" न्यायके अनुसार यह भी ज्ञात हो गया

होगा कि शाहजी महोदय "अपने आत्मप्रदर्शित पथ" पर कहाँ तक अचल हैं।

इसी वार्षिक परीक्षाके समय बा० रूपचन्दजी सुराना, जो जैन-समाजके एक नवयुवक शिक्षित तथा सुधारक सज्जन हैं और इसी पाठशालाके उपमंत्री भी हैं, हिन्दी कक्षा (सी) के, जो मेरे ज़िम्मे थी, परीक्षक होकर आये थे। परीक्षाफल कहाँतक सन्तोषदायक था, इसका निर्णय परिशिष्ट नं० १२ से कर सकते हैं।

अब इन घटनाओंसे पाठकगण स्वयं नतीजा निकाल लें कि शाहजीका व्यवहार कहाँतक सत्यता तथा सभ्यता-सम्पन्न है और उनकी कर्त्तव्यपरायणता, सत्यपरायणता तथा "आत्मीय शुद्ध भावों" की गहराई कितनी है।

काण्ड ५

नोट—इस निम्नांकित लेखमें इन [ ] कोष्ठकोंके भीतर शाहजीके गुप्त भावोंको प्रकट करते हुए तथा यथासाध्य उत्तरकी पूर्ति करते हुए मेरे शब्द हैं ।

—रामलोटन प्रसाद ।

साँचमें लाँछ

[अर्थात् सचाईमें चाटुकारिता और झूठ आदिको मिश्रित कर सत्यको कलंकित करना]

या

'सांचको आँच क्या' इसपर विचार

न वेत्ति यो यस्य गुणं प्रकर्षं स तस्य निन्दां सततं करोति ।
यथा किराती करि कुम्भजातां मुक्तां परित्यज्य बिभर्ति गुञ्जाम् ॥

[सत्य है -"जो जाको गुन जानही, सो तेहि आदर देत ।
कोकिल अम्बहि* लेत है, काग निबौरी† लेत ॥"

कदाचित् इसीलिये लगभग ४॥ वर्षोंमें लगभग ३० अध्यापकोंको श्री जैन पाठशाला, बीकानेरसे पृथक् होना पड़ा, क्योंकि

* अम्बहि=आमका फल । †निबौरी=निमकौड़ी, नीम वृक्षका फल ।

उनमें चाटुकारिता तथा कर्त्तव्यहीनता न थी, जिसके फ[illegible]
कोचर महाशय हैं।]

होत उदय तिमिरारिके जगमें होत प्रकाश।
नेत्रहीन मतिमन्दको रहे तिमिरको भास॥

[सत्य है, "सावनके अन्धेको हरा ही सूझता है" और [illegible]
चित् यही कारण है कि समयके परिवर्त्तन होने और मेरे [illegible]
प्रकाश डालनेपर भी कोचर महाशयका स्वच्छन्दतारूपी अन्[illegible]
अभीतक पूर्णतया नष्ट नहीं हुआ।]

'कारणात् कार्य सम्भवः' सत्यासत्यका निर्णय-कर्त्ता [illegible]
अटल सिद्धान्त इस जगत्में सर्वत्र व्याप्त है। कोई व्यक्ति कित[illegible]
ही अपनी योग्यताकी डींग क्यों न मारे, कितना ही अपनेको सत्य
वादी तथा स्वार्थ-रहित परोपकारी क्यों न बतावे, पर कालान्त[illegible]
स्वार्थपरताका अङ्कुर जब प्रस्फुट हो जाता है तब ही दुनि[illegible]
सचेत होती है और ऐसे व्यक्तियोंसे उदासीनता ही धारण कर[illegible]
है [कदाचित् इसीलिये दूसरे मुख्याध्यापककी आवश्यकता हुई]।
यद्यपि ये लोग दुनियाँसे विरोध करने एवं उसे हानि पहुँचानेकी
[illegible]में कोई छोड़ते [तथापि मनुष्य इनके कर्त्तव्योंसे
]। भोजनके परोसे जानेपर देशकाल-
भ्रम हो जाय तो अपनी स्वास्थ्य-रक्षार्थ
ढूँढ़ना आवश्यक ही है और उसके
फेंकना भी अनिवार्य है [कदाचित्
मीजीकी नियुक्ति हुई है]।

ऐसा करनेमें यदि पंख-आदि कोई अङ्ग भोजनमें लुप्त रह जावे तो दूर फेंकी हुई मक्षिकाका निर्दोषपना भोजनकी अपवित्रतामें प्रामाणिक नहीं हो सकता, चाहे वह जीरा व इलायची आदिका कैसा ही रूप धारण किये क्यों न हो। इस भूमिकाका उद्देश्य यही है कि मेरे आक्षेपोंके प्रतिवादका प्रत्युत्तररूप 'सांचको आँच क्या' ऐसा शीर्षक एक लेख बाबू रामलोटन प्रसादकी ओरसे बीकानेरमें वितरण किया गया है। इसकी लेख-शैलीसे लेखकका भाव यद्यपि जनताको भलीभांति प्रकट हो गया होगा तथापि मैं [कोचर महाशयके प्रसन्नतार्थ और जनताको भ्रममें डालनेके लिये] अपना कर्त्तव्य समझता हूँ कि उक्त लेखपर अपने विचार इस निमित्तसे ही प्रकट करूँ कि मेरी अयोग्यता, सत्य-भ्रष्टता और चापलूसी आदि दुर्गुणोंका, जिनकी सत्ताका भाव लेखक महोदय [ही नहीं, किन्तु बीकानेरी जनता] को [भी] हो गया है, उक्त सुयोग्य सत्यवादी और स्वतन्त्र विचारशील सज्जनद्वारा फिरसे कुछ संशोधन हो जाय [अथवा स्वच्छन्दता आदि जाती रहे]।

शीर्षक (हेडिङ्ग) से लेखकने यह विदित किया है कि मेरी सांचका सम्प्रसार (फैलाव) स्वतः विना किसी आँचहीके जैनजातिके लाभार्थ हो रहा है पर.ऐसा कदापि नहीं हो सकता, [जबतक कि कोचर-शाहकी स्वच्छन्दता नहीं

टोटह

जाती] क्योंकि टेखककी नियुक्तिसे पृथक् होने-तककी तीन वर्षकी अवधिमें उस सांचका संकोच क्यों रहा ? [कदाचित् पिछला हाल आप (शाहजी) ने चातुकारोंकी तरङ्गमें

सुना है अथवा ब्राह्ममुहूर्तकी प्यारी निद्रामें किसी समझदारा जाना है, अन्यथा जो कुछ मैं तीन वर्षोंमें पचासों बार कोवरशाह, मुख्याध्यापकों तथा विद्यार्थियोंको प्रकट करता रहा हूँ उसे वे यदि मौखिक नहीं तो मेरी लिखित रिपोर्टों ता० १३-१०-१९२०, ५-१२-२०, ७-१-२१, २५-५-२१, ५-८-२१, ३ १२-२१, ९-२-२२, २६-९-२२, १-१-२३ और ७-२-२३, को देखकर ही लिखनेका साहस करते। (देखिये परिशिष्ट नं० ३) परन्तु] सम्भव है 'अर्थी दोषं न पश्यति' यह कहावत स्मरण रही हो अथवा अयोग्यता आदि दुर्गुणोंने घेर लिया हो अथवा जैन-समाजपर जैसे-तैसे प्रभाव डालकर विशेष आकांक्षाओंकी पूर्तिकी चेष्टामें विचरते रहे हों [कदाचित् शाहजीने मन्थरा, शकुनी, माहिल, मुहम्मदशाह दूसरा, अहमदशाह, जहाँदारशाह, मीरजाफ़र आदिकी ही जीवनी पढ़ी है]। यदि ऐसा न होता तो साँचका फैलाव नियुक्तिके साथ ही होने लग जाता और अबतक पाठशाला भी ऐसे पथप्रदर्शक अध्यापकके होते हुए आदर्शरूप बनकर उन्नतिपर पहुँच जाती [यदि स्वच्छन्दता, चाटुकारिता तथा कर्त्तव्यहीनताका प्रभाव पहलेसे जमा हुआ न होता]।

बाबूजीकी साँचका सच्चा ढाँचा तो आपके रचित इस दोहे-

दोहा हीसे विदित हो जाता है, जो इस प्रकार है:—

विद्या-रविके उदयपर, जागा सकल जहान।
जैन जाति सोवत अहह ! उलटी चादर तान ॥

तात्पर्य यह है कि विद्यारूपी सूर्यके उदय हो जानेपर

जैन (समाज) जाति पर आक्षेप

समस्त जगत् तो जागा, पर हतभागिनी जैन-जाति प्रथम तो औंधी और दूसरे अपनेपर चद्दर डाले हुए नींदहीमें पड़ी है।

बाबूजीकी [ही नहीं किन्तु परिशिष्ट नं० १३ के अनुसार श्रीयुत बा० कन्नोमलजी, एम० ए०, तथा श्रीयुत बा० कस्तूरचन्द-जी नाहटा आदि जैन शुभचिन्तकों, सुधारकों तथा नेताओंकी] दृष्टिमें [भी] सिवाय जैन-जातिके भारतवर्षकी समस्त जातियों-में विद्याकी उन्नति हो रही है, पर यह बात तब ही मान्य हो सकती है जब भारतीय सरकारकी सन १९११ की मर्दुमशुमारीकी रिपोर्ट [सेन्सस] [जो विद्योन्नति अथवा विद्वानोंकी ही स्थिति नहीं बतलाती, किन्तु उसमें वे मनुष्य भी सम्मिलित हैं जो नाम-मात्रके साक्षर हैं] असत्य मानी जाय। बाबूजी [अर्थात् शाह-जी] का साहस [जो "औसत"की असलियतको नहीं समझते हैं] प्रशंसनीय है कि वे सरकारी रिपोर्ट [की अपेक्षा परिशिष्ट नं १३ के अनुसार जैन-नेताओं तथा शुभचिन्तकों] को भी [जो अपने समाजकी स्थितिको सेंसस कर्मचारियोंकी अपेक्षा कहीं अच्छा जानते हैं] असत्य प्रमाणित करनेपर आ डटे हैं। सन् १९११ की सेन्ससमें भारतकी शिक्षित जन-संख्या जब ६ प्रति सैकड़ा है तो क्या यह जहानकी जागृत्यावस्था है? सन् १९१२-१७*की रिपोर्टसे भी प्रकट है कि भारतकी माध्यमिक शिक्षा

इसका प्रत्युत्तर

* भला सरकारी रिपोर्ट और जागृतिसे क्या सम्बन्ध है? और मुझको

और उच्च शिक्षा भी दुनियाँके दूसरे देशोंकी अपेक्षा बहुत गिरी हुई है जो अनुक्रमसे प्रति हज़ार २.४ और .२४ आती है, क्या यह भी जहानकी जागृत्यावस्था है ? यदि बाबूजीने अपनी हिन्दू-जाति और जैन-जातिके शिक्षित मनुष्योंकी तुलना की हो तो भी यह दोहा चरितार्थ नहीं होता, क्योंकि हिन्दू-जातिमें "आजसे १२ वर्ष पूर्व शिक्षित पुरुषोंकी संख्या १० और स्त्रियोंकी ७ प्रति सैकड़ा थी, प्रत्युतः जैन-जातिमें ४६.५ और ३.६ क्रमानुसार प्रति सैकड़ा थी ['कदाचित् इसीलिये मारवाड़ी धनाढ्योंको प्रायः मिलों तथा अन्य योरोपियन फर्मोंके मालिकोंकी हाज़िरी देते तथा मुँह ताकते हुए दिन बीत जाता है, और इसीलिये दिवालेका प्रभाव भी

"सरकारी रिपोर्टको भी असत्य प्रमाणित करने" का दोषी बताना कहाँतक ठीक है, पाठक स्वयं विचार देखें—क्या इससे शाहजीके "आत्मीय शुद्ध भावों" का पता नहीं लग सकता ? कोई सर्कार मर्दुमशुमारीकी रिपोर्टके सहारेपर "जागृति" की ज़िम्मेवार नहीं हो सकती। ऐसा समझना तो केवल शाहजीहीकी प्रज्ञाप्रौढ़ता है। जिसमें लेशमात्र भी सत्यांश होगा, ऐसा अपवित्र तथा दूषित भाव मनमें लानेका साहस कदापि नहीं कर सकता। देखिये श्री बीकानेर सर्कारने सन् १९११ ई० की मर्दुमशुमारीकी रिपोर्टमें "शिक्षित"की परिभाषा क्या लिखी है:—"A person should be regarded as literate if he could both read and write a letter in any one language." अर्थात् वही व्यक्ति शिक्षित समझा जा सकता है जो किसी एक भाषामें पत्र-व्यवहार कर सकता है। इसी रिपोर्टमें हाईस्कूलकी व्याख्या करते हुए यह लिखा गया है:—"The num- ents in the higher classes is small, owingto

अधिकतर इसी समाजपर पड़ता है। कलकत्तेमें फर्द चर्बे हुए जब दङ्गा हुआ था तो मारवाड़ी-समाजको ज़ियादा हानि भी शायद इसीलिये पहुँची थी। और पुलिसका व्यवहार जो मारवाड़ियोंके प्रति होता है यह भी कदाचित् उसी कारणसे हो कि उनमें अधिक संख्या शाहजीके कथनानुसार विद्वानोंकी है]। इस पुष्ट [प्राक्टिकल] प्रमाणके होते हुए भी क्या बाबूजी [नहीं, वरन् शाहजी] ने जैन जातिका उपहास नहीं उड़ाया है ? बाबूजीका उक्त दोहा [अर्थात् युक्ति] कहाँतक ठीक है जनता स्वयं विचार ले।

बा० रामलौटनके लेखके आरम्भमें ये शब्द हैं कि "मुझे पाठशालासे कोई विरोध नहीं है और न उसे हानि पहुँचानेका मेरा अभिप्राय है"—यह कथन उनका उचित है, क्योंकि पाठशालाकी जड़ पर्याप्त फ़ण्डके जमा हो जानेसे सुदृढ़ है और

आरम्भके शब्द

---

the fact that the boys of *banking community* leave the school after they have acquired a *Smattering* of English sufficient to enable them to read and write *ordinary* letter and telegrams." अर्थात् उच्च कक्षाओंमें छात्रोंकी संख्या न्यून है क्योंकि व्यापारियोंके लड़के मामूली पत्र तथा तार लिखने-पढ़नेके लिये अंग्रेज़ीकी **थोड़ीसी** लियाक़त कर लेनेके पश्चात् स्कूल छोड़ देते हैं। यहाँको जैन-समाज प्रायः व्यापारियोंकी ही श्रेणीमें है। यदि शाहजीको उपर्युक्त रिमार्कोंका ज़रा भी ध्यान होता तो इस प्रकारसे शिक्षित होनेकी डींग कदापि न मारते। मैंने तो सद्भावसे "जागृति" के लिये लिखा है— भला इसमें "आक्षेप" की गुंजाइश कहाँ!

इन्हीं कारण येन-केन उनकसे उन्होंने पुनर्नियुक्तिकी पूर्ण चे
कते हुए हैं [वाह, कैसी अच्छी युक्ति है! क्या शाह
मतानुसार मुझे भी केवल "पगार" (वेतन) हीसे मतलब
यदि ऐसा होता तो शाहजीकी भाँति "जी हुजूरी" का जप क
चाहिए था। कदाचित् श्रीयुत दास, नेहरू आदि नेतागणों
शाहजीके मतानुसार, पुनर्नियुक्ति-ही-की पूर्ण चेष्टा है]। हाँ!
विरोध तो किसी अन्यहीसे है और हानि पहुँचानेका अभिप्र
भी उसीको है, इसी कारण आपकी ये समस्त चेष्टायें हैं। इन
फलीभूत हो जानेपर आपकी पुनर्नियुक्ति पूर्ण रूपसे सम्भव है।
सम्भव है, नौकरीकी पूर्ण निराशा प्रतीत होनेपर पाठशाला
लिए भी ऐसा प्रयत्न हो जाय तो कोई आश्चर्य नहीं [कदाचि
शाहजीको यह ध्यान आ गया होगा कि जिस तरहसे उन्हें
स्वयं, पं० मेघराजजी गोस्वामीके विषयमें उनके पृथक् होने
पश्चात्, छात्रोंसे, उस कार्रवाईकी अनुपस्थितिमें नौकरी
निराशा जान, उसको लिखा लिया था। सत्य है "साँपके
हुएको नीम कभी कडुवा प्रतीत नहीं होता"]।

बाबू रामलौटनको ज्ञात होगा कि यह जैन-पाठ
आरम्भमें केवल करीब ५१ रु० मासिक
जैन-जाति सहायतासे चलने लगी थी और समय
सिक चन्देकी आय जब बढ़ने लगी, प्र
रिणी कमेटी भी नियत हुई और अब
भी इकट्ठा हो गया है। क्या यह कि

ग्नतिकी जागृति नहीं है ! [धन्य है. धनवान होनेको विद्योन्नतिकी जागृति यदि कहा जाय तो *राजलदेसर, छापर, नागासर तथा बीदासर** आदिमें जहाँ धनवान कम नहीं हैं कदाचित् खूब ही जागृति होगी। यह कहावत भी बिल्कुल सत्य है "भूखेको हर जगह दाल ही भात सूझता है।"] यहाँकी ही जैन-जनताने विशेषतः उदासर, कलकत्ता और ओसियाँ आदि स्थानोंमें पाठ-शालायें खोल रक्खी हैं। भैरूदानजी सेठियाकी तरफ़से एक और भी यहाँपर जैन-संस्था है, पर बाबूजीकी सूक्ष्मदृष्टिमें ये सब जागृतिके चिह्न नहीं, वास्तविक जागृति तो उन्हींको ही नौकरी मिलनेपर ही स्पष्टतया प्रतीत होगी [कदाचित् इसीलिये शाहजीने अपनी हेडमास्टरीसे पदच्युत होनेको ठीक ही समझा]।

सत्यवादी ! मैंने बाबूजीके प्रथम नोटिसका उत्तर देनेमें पाठशालाके मौजूदा पत्रोंको प्रमाण व साक्षी बनाया था, [बेशक] पर मुझे विश्वास नहीं होता कि किस प्रकारका उत्तर देनेमें मैंने सत्यकी अव-हेलनाकी ? [किसीकी नहीं—क्योंकि पॉलिसी-का ज़माना है न !] अनुमान होता है कि पाठ-शाला-सम्बन्धी सब काग़ज़ोंकी "डुप्लीकेट कॉपीज़" बाबूजीके पास होंगी, जिनसे आप सत्यका निर्णय करते होंगे अथवा आपको भी [मेरी (शाहजीकी) तरह "आत्म प्रदर्शित पथ" की भाँति] कोई योगकी नवीन सिद्धि प्राप्त हो गई होगी।

* ये उपर्युक्त रेखाङ्कित स्थान बीकानेर राज्यान्तर्गत कस्बे और गांव हैं।

पाठशालासे सम्बन्ध होनेके कारण मेरी संस्थापर किये हुए निर्मूल [अर्थात् अप्रसन्न करनेवाले] आक्षेपोंका उत्तर [चाटुकारिताका पालन करते हुए] देना मेरा परम कर्त्तव्य ही था और मैंने अपना कर्त्तव्य-पालन मौजूदा काग़ज़ों [अर्थात् कोचर महाशय-के आदेशानुसार अथवा किसी मन्थराके मायिक-जालके उपदेशानुसार] के आधारपर किया। चापलूसीको इसमें कहाँ अवकाश था ? यदि पाठशालाकी स्थिति आपके लेखानुसार आपकी नियुक्तिसे बहुत काल पूर्वहीसे ऐसी थी तो प्रथम तो ऐसी संस्थामें सेवा करनेकी आपकी अभिलाषा ही व्यर्थ थी और जैसे-तैसे सेवा करना स्वीकार करनेपर कर्त्तव्य-पालनकी हत्यारूप आपकी तीन वर्षतक चुपचापी अवश्य अपनी आजीविकाके हेतु ही रही [कदाचित् चापलूसीके चश्मेने मेरी उपर्युक्त रिपोर्टें, परिशिष्ट नं० ३ को देखने न दीं] और अब नौकरीसे अलग हो जानेपर दिखावटी कर्त्तव्यपालन [अर्थात् कुर्सीपर बैठे हुए क्लासमें सुरती फाँकना, गपशप हाँकना, मूँछें मरोड़ना, फ़िलॉसोफ़ी छाँटना, वेदान्त बघारना, पढ़ाईके समय क्लाससे बाहर निकल कुटिल नीतिकी रचना करना तथा निद्रा आदिसे कक्षाके घण्टेको पूरा करने] में परिणत हुई है।

चापलूस ?

'न ब्रूयात् सत्यमप्रियम्' पर आरूढ़ रहकर गुप्त रीतिसे विद्यार्थियोंको शिक्षा देने आदि असम्बद्ध शब्दोंसे लेखकने अपनी

विद्यार्थियोंको शिक्षा देना।

हिन्दी-लेखनकी योग्यताका सम्यक् परिचय दिया है और साथ ही यह कहावत भी चरितार्थ कर दी है कि "उलटा चोर कोतवालको दण्डे" यदि बाबूजी सत्यपर पूर्ण रूपसे आरूढ़ थे तो अपने सेवाकालमें सत्यका पक्ष क्यों छोड़ा ? [कोचर-शाह तथा "पगार" के भयके कारण जिसका फलस्वरूप मेरा वर्तमान आन्दोलन है।] दो-चार पत्र तो संस्थाके अधिकारियों-को उसकी उन्नतिके कारण सूचनार्थ दिये होते [सत्य है, "आरतके चित रहै न चेतू। पुनि पुनि कहै आपनो हेतू" - मन्थ-रोपदेशने बुद्धिको भ्रष्ट कर दिया अन्यथा ऐसे सफ़ेद झूठका दुस्साहस कदापि न होता]। शायद अधिकारियोंसे अप्रिय हो जानेका ही भय रहा हो [शायद क्यों? अवश्यमेव, जैसा कि मैंने अभी ऊपर तीसरे कोष्ठकके भीतर स्वीकार किया है]। क्या आपने अपने कर्त्तव्यपालनमें नियम नं० ६७ * की अवहेलना किसी स्वार्थवश नहीं की ? [हाँ, की है—देखिये परिशिष्ट नं० ३]

(क) बा०रामलौटनका यह कथन कि श्रीडूँगर कालेज तथा श्री मोहता मूलचन्द विद्यालयकी छात्र-संख्यामें दिनोंदिन वृद्धि प्रतीत हो और जैन पाठशालामें न्यूनता हो, एक विलक्षण ही बात है। आपकी समझमें प्लेग जैसी संक्रामक बीमारी फैलनेपर पाठ-शाला जैसे स्थान उससे सुरक्षित रहा करते हैं और इस हेतु उनमें छात्र-संख्या न्यून नहीं होती प्रत्युत बढ़ती ही रहती है

* इस नियम नं० ६७ को परिशिष्ट नं० ११ में देखिये।

अतएव जैन-पाठशालामें भी घटनी उचित ही थी, पर जैन पाठशाला एक जैन-संस्था है—इसमें विशेष जैन-बालकोंकी ही संख्या थी और प्लेगके कारण जब उनके संरक्षक दूर विदेश परिवारसहित एक बार चले गये तो प्लेग दूर होते ही शीघ्र उनका वापिस लौट आना अनुमेय नहीं हो सकता [कदाचित् श्री मोहता मूलचन्द तथा अन्य विद्यालयोंमें भी सत्यवादी शाहजी-को स्टेट कर्मचारियोंके ही लड़के दीखते होंगे जो प्लेगमें बाहर न जा सके]। अतएव यहाँ संख्यामें न्यूनता रही। दूसरा दोनों संस्थाओंमें स्टेट-कर्मचारियोंके व अन्य जातिके बालकोंकी विशेष संख्या होनेके कारण और जिनके संरक्षकोंका बहुत कालके लिये विशेष दूर जाना सम्भव नहीं हो सकता [क्योंकि संक्रामक बीमारीका असर तथा भय कदाचित् शाहजीके विचारानुसार जैनीहीको विशेष होता हो अन्य जातियों तथा स्टेट-कर्मचारियोंको नहीं]—संस्थाओंके खुलनेपर छात्रोंकी संख्यामें परिवर्त्तन न हुआ हो।

(ख) कमेटीके अधिवेशन व स्कूल-सम्बन्धी पत्रोंमें मंत्री परिवर्त्तन [जो रामलोटन प्रसादकी नियुक्तिके कई साल पहले ही हो चुका था उसके] स्पष्ट होते हुए भी उसे [मंत्रीके लगातार बीकानेर रहनेको] आश्चर्यजनक और निर्मूल बतानेसे क्या लेखक [शाहजी] होकी सर्वज्ञता आश्चर्यजनक और निर्मूल नहीं सिद्ध होती ? क्या मंत्रीजीके [सूक्ष्म शरीर] कलकत्ते चले जानेपर भी उसका सूक्ष्म [स्थूल] शरीर उस पदको यह

सुशोभित करता रहा होगा ? यदि मंत्री-परिवर्तन यथार्थमें हुआ ही नहीं तो अवश्य ही मानना पड़ेगा कि बा० रामलौटनकी वेतन वृद्धि भी शिववक्सजी द्वारा हुई थी और उनका कार्य भी मंत्रीजी-को सन्तोषदायक रहा था [निस्सन्देह ऐसा ही था—मंत्रीजीके कलकत्ते जाने और रामलौटन प्रसादकी वेतन-वृद्धि कोचर महाशय (बा० शिववक्शजी मंत्री) द्वारा न होनेका स्वप्न आना क्या कागज़ोंका आधार है या "जी हुजूरी" की पुकार है ?] अतः मंत्रीके इस न्यायानुकूल [अर्थात् बा० बहादुरलालजी बी० ए० की वेतन वृद्धि करते हुए भी उनको स्थायीसे अस्थायी बनाना और उनके वेतनको ज़ब्त करनेकी धमकी देना और कोर्टमें स्वीकार कर अदा करना, पं० भगवतीदेवीको अवला होनेके कारण एक मासके बजाय १५ दिनका वेतन देना, स्वर्गीय श्रीयुत पं० जीतमलजी व्यासको बिना किसी नोटिस आदिके पूर्ण निर्दोष होते हुए भी पाठशालासे एकदम पृथक् कर देना, छात्रोंका केवल इस अपराधमें, कि उन्होंने थोड़ूँगर कालेजमें पढ़नेका विचारमात्र किया था, सदैवके लिये बहिष्कार कर देना आदि आदिके] सद्व्यवहारको लेखोंमें इस प्रकार कलंकित करना ही क्या कृतज्ञता अथवा सभ्यताका उत्तम परिचय देना नहीं है ? यह अनुमान किया जा सकता है कि बाबूजी [नहीं, वरन् शाहजी] ने अपनी घृणित कुचेष्टाओंद्वारा प्रभाव डालकर [पाठशालामें लेट आने, क्लासके बाहर खड़े होकर गोष्ठी करके घण्टा बिता देने आदि और परीक्षाफलके शून्य अथवा शून्यसे

भी कम होते हुए भी] अपनी अनुचित वेतन-वृद्धिका प्रयास किया हो। शिवबक्सजीके पुनः [अर्थात् शाहजीके पाठशालामें जन्म लेनेसे अन्यथा पुनः के कोई अर्थ नहीं हो सकते, क्योंकि कोचर महाशय सन् १९२० ई० के पश्चात् कभी अपनी नौकरी छोड़कर नहीं गये। कलकत्ते जानेकी बात उस समयकी सुनी जाती है कि जब कोचर महाशय महकमा खाससे पृथक् हो नौकरीकी खोजमें भटक रहे थे और कदाचित् इसी चेष्टामें कलकत्ता गये थे] मंत्रीपद स्वीकार करनेपर जब उक्त कुचेष्टाओंका प्रभाव कुछ शिथिल होने लगा तो आपकी द्वेषाग्नि मन्त्रीजीके [प्रसन्नतार्थ रामलौटन प्रसादके] प्रति धधक उठी और यही कारण है कि आपने एक निःस्वार्थ कर्त्तव्य-पालन करनेवाले [अध्यापकको स्वेच्छाचारी तथा स्वच्छन्द] अवैतनिक मन्त्रीके [द्वारा] विसर्जनपत्र [अर्थात् नोटिस] देनेको कमेटीपर कुप्रभाव डालनेका निमित्त बतलाया है।

(ग) वार्षिक परीक्षापर सप्तम कक्षाके कतिपय अनुत्तीर्ण छात्रोंका जो प्रोमोशन रोका गया वह बा० रामलौटनकी सम्मतिमें स्वाभाविक व उचित ही है; किन्तु कई अनुत्तीर्ण छात्रोंको डिमोट करना उन मुख्याध्यापकों व सहायक अध्यापकोंकी योग्यता व विश्वासपात्रता का नमूना है [क्योंकि उन्हीं अयोग्य छात्रोंमेंसे मुकुन्दलाल कोचर नामक विद्यार्थी आज दिन कक्षा ६ में मौजूद है और यदि इसके अन्य अयोग्य साथियोंका नादिरशाही न्यायानुकूल दयापूर्वक डिमोशन तथा

बहिष्कार न किया गया होता तो वे भी आज इस अमूल्य विद्या-दानके लिये जैन-समाजको अनेकानेक धन्यवाद देते हुए शान्ति-पूर्वक कक्षा ६ में विद्याध्ययन करते होते] जिन्हों [अर्थात् शाहजी तथा उनके स्वेच्छानुकूल सहकारियों] ने अयोग्य छात्रोंको केवल अपनी कार्यकुशलता दिखानेके अर्थ एवं अपनी वेतनवृद्धिके अर्थ प्रोमोशन देनेकी निन्दनीय चेष्टा की थी। जैन-धर्मानुकूल आज्ञाका इस विषयमें कुछ सम्पर्क नहीं है [क्योंकि छात्रोंको अकारण ही डिग्रेड अथवा बहिष्कृत कर देना दया तथा न्यायपर ही निर्भर है]

न्यायानुकूल छात्रोंका स्कूल छोड़कर जाना क्या विना उत्तेजनाके सम्भव था? मेरे रिमार्ककी नक़ल देनेमें भी बाबू साहिबने अपनी चातुरीमें कमी न छोड़ी। छोड़ें क्यों? वह तो मुझे अयोग्य, सत्यभ्रष्ट और चापलूस प्रमाणित करनेपर डटे हुए हैं। जनताके सूचनार्थ रजिस्टरमें दिये हुए रिमार्ककी नक़ल मैं यहां देता हूं:—

The Names of these students........ ....
that they are going to join the College *by the persuation of some teachers*......... [यद्यपि ये शब्द—"by the persuation of some teachers" अर्थात् कुछ अध्यापकोंके बहकानेसे, नोटिस निकलते समय नोटिसमें न थे—वास्तवमें यह शाहजीकी चातुरी है, तथापि यदि मान भी लिया जाय तो क्या "खेत खावें बन्दर और टाँगे जावें कुत्ते" को

कहावतके अनुसार अध्यापकोंको, जिन्होंने शाहजीके कथनानुसार छात्रोंको पाठशाला छोड़नेके लिये बहकाया था, दण्डित न कर छात्रोंका बहिष्कार करना कर्त्तव्यपरायणता, योग्यता, दयालुता और न्यायपरायणताका नमूना है या जी हुजूरी, अयोग्यता तथा सत्यभ्रष्टताका प्रमाण ?]

(घ) अध्यापकोंकी भांति योग्य अध्यापिकाओंका न मिलना जो लिखा गया है, यह सत्य ही था और अब भी सत्य ही है। केवल विद्वान् व विदुषी होना ही योग्यता नहीं कही जा सकती [वरन् चालबाज़ी, चापलूसी, चाटुकारी तथा मन्थराकी-सी चतुरताका होना भी परमावश्यक है] परन्तु अपने नियुक्त पदके कार्यको भलीभांति सम्पादन करते हुए [कोवरशाहकी भांति] आदर्श बनकर छात्रों व अपने अधीनस्थोंको [गपशप हाँककर व्यर्थ समय नष्ट करने, सत्यासत्यद्वारा अर्थ-सिद्धि करने, कर्त्तव्यहीन होने और अपने अधिकारोंका दुर्व्यवहार करनेवाला आदि] पथप्रदर्शक बनना ही, योग्यताकी निशानी है। पढ़ाईके समयमें घण्टों सोते रहना क्या ही उत्तम पथप्रदर्शन व आदर्श है ? अतः "वृक्ष पहिले या बीज पहिले"की भांति श्रीमती भगवती देवीकी योग्यता तथा प्रतिज्ञा पूर्ण न करनेके कारण उसका मन्त्रीसे झगड़नेका विषय कुछ संशयात्मक है, जिसे जनता स्वयं विचार कर सकती है [यदि जनता भी शाहजीकी भाँति चापलूसीका चश्मा लगा ले]।

(ङ) जो प्राइवेट छात्र मेट्रीक्युलेशन परीक्षामें इस पाठ-

शालासे भेजा गया था। यदि वह भाग्यवश जीवित होता [और पाठशालाके प्रबन्धमें भी भाग लेता] तो मैं अनुमान करता हूँ कि बाबूजी [अर्थात् शाहजी] का उसके पावन ऐसा लिखनेका साहस कदापि न होता [और न यह स्वच्छन्दता तथा धींगा-धींगी ही दृष्टिगोचर होती]। मैंने खुदने न तो उस छात्रको देखा है और न मुझे उसकी योग्यताका अनुमान है। मैंने तो बाबूजीके इस कथनपर कि इस संस्थामें अष्टम कक्षा भी नहीं खुली, पाठशालाके पत्रोंके आधारपर इतना संकेतमात्र किया था कि इस संस्थासे तो मेट्रीक्युलेशन परीक्षामें एक छात्रतक भी भेजा गया है। मेरा इसका इसमें क्या गौरव* था? गौरव था तो बाबूजीके लेखके १ (ख) में गिनाये हुए योग्य और विश्वासपात्र मुख्याध्यापकों व सहायक अध्यापकोंमेंसे ही किन्हींका हो सकता है [नहीं, परन्तु कोचर महाशयका कि

* यदि सचमुच शाहजीका गौरव इसमें नहीं था तो क्या मन्दबाही कोचर महाशयने अपनी १९ वर्षीय रिपोर्टके पृष्ठ १९ में यह योंही आँखें मूँदकर लिख मारा—"बाबू मथाभाई टी० शाह बी० ए० जैसे योग्य मुख्याध्यापक और पं० रामेश्वरदयालजीकी नियुक्तिसे, जो इस सन्दाको पहिलेसे तीसरी कक्षासे प्रथम कक्षातक चार ही वर्षके अन्दर पहुँचाकर उन्नत कर चुके थे, पूर्ण आशा की जाती है कि प्रबन्धकारिणीका उद्देश्य अधुना अवश्य ही फलीभूत होगा!" वाह! कैसी पालिसीकी बहार है!! क्या मकड़ीके जालसे यह समस्या कम जटिल व पेचदार है!

किन्तु निश्चय जानिये—

"यदपि फूटी बात चित, पहले मीठी होय।
पइर कटति है दहर सों, फेंडे दुख नहि होय॥"

जिनकी स्वेच्छाचारिता तथा स्वच्छन्दताने योग्य अध्यापकों जल्दी जल्दी पाठशालासे निकलनेके लिये, बाध्य किया] जिनः योग्यता और विश्वासपात्रताने आपके कथनानुसार एक छात्र केवल परीक्षामें सम्मिलित कराकर ही पाठशालाकी उन्नति ज्ञान लोगोंपर सूचित कर दिया है। क्या आपके गिना हुए सज्जनोंको एक जगह योग्य और विश्वासपात्र बताक इस जगह गुप्तरूपमें आप [अर्थात् शाहजी] ने उनका मखौ नहीं किया है ? क्या यही आपकी सत्यताका सच्चा रूप है सम्भवतः आप इससे यह शिक्षा लोगोंको दे रहे हों कि "ब्रूयात सत्यमप्रियम्" । अवश्य आपकी नीतियाँ तो चाणक्यके नीतियोंको मात करती हैं। यदि लोकोपकारार्थ उनका एक पुस्तकमें संग्रह कर दिया जावे तो क्या ही उत्तम हो ! क्योंकि चाणक्यकी नीतियाँ अब पुरानी भी हो गई हैं।

२—मेरे आक्षेपोंका उत्तर देते हुए आपने अपनी सत्यताका स्वरूप खर्चनेमें जो निपुणता दिखाई है उसपर मुझे हँसी आती है [क्यों न आवे ! हिरण्यकशिपुको प्रह्लादकी, रावणको विभीषणकी, कंसको श्रीकृष्ण भगवान्‌की, वालिको सुग्रीवकी और मुग़ल बादशाहको महाराज पृथ्वीराज राठौर बीकानेरीकी बातों पर हँसी आती थी और आपको भी क्यों न आवे जब कि इतनी चापलूसीपर भी असत्य नोटिस निकाल निकालकर जनताको भ्रममें डाला और फिर भी फोचर महाशयको पूर्ण प्रसन्न न कर सके और पदच्युत होना ही पड़ा] ।

(व) नियुक्त अध्यापकोंकी उचित समयतक आनेकी प्रतीक्षा के बाद एवं स्वार्थवश दूसरा कोई स्थान स्वीकार कर आनेसे उनके इनकार हो जानेपर पाठशालाकी आवश्यकताके हेतु किसी [शाहजी जैसे] योग्य अध्यापकको शीघ्र ही कामपर बुलानेकी चेष्टामें उसके साथ कोई ऐसी लिखित प्रतिज्ञा* कर लेना नियत नियमोंकी आकांक्षा नहीं रखता है [क्योंकि स्वेच्छा-चारिताके अधीन नियम रहा करते हैं] और पं० रामेश्वरदयाल-

* श्रीयुत पं० रामेश्वरदयालजीको तो प्रथम नियुक्तिके समयसे ही कोचर महाशयकी दयालुता, नम्रता तथा न्याय-प्रियता आदि गुण मालूम थे। फिर इस दूसरी बारकी नियुक्तिके समय "लिखित प्रतिज्ञा" करानेकी क्या आवश्यकता थी ? और श्रीयुत प० चिम्मनलालजी गोस्वामी एम० ए० को, जो यहाँके निवासी हैं, और कोचर महाशयके आदर्श व्यवहारोंसे सम्भवतः पूर्ण परिचित है, प्रधानाध्यापकका पद स्वीकार करनेके लिये क्यों शर्तकी आवश्यकता पड़ी ? सच है, "A burnt child dreads fire" अर्थात्—

"पिशुन छल्यौ नर सुजन सों, करत विसास न चूक ।
जैसे दाध्यो दूधको, पीवत छाछहिं फूंक ॥"

अतः स्वेच्छाचारियोंका विश्वास न कर उनसे "प्रतिज्ञा-पत्र" लिखाना ही सर्वोत्तम है। यह "शर्त" हीका प्रभाव है कि गोस्वामीजीकी वेतन-वृद्धि "प्रतिज्ञानुसार" उनका वर्ष पूर्ण होते ही, इसी दिसम्बर मासमें हो गयी और मिस्टर मीचलजी, लगभग १॥ वर्ष होनेपर तथा सन्तोषप्रद कार्य करते हुए भी, मुंह ताकते ही रह गये। कहिये, न्यायकी कैसी हरी बहार है ! देखा ! यही तो है अन्धेर !! जरा देखें गोस्वामीजी कबतक बात पूरी करते हैं।

जीके साथ भी ऐसी ही प्रतिज्ञा हो गई थी [हालाँकि प्रति
करनेका कोई अधिकार न था] और इस प्रतिज्ञापालनमें कि
नियमका उल्लंघन या नियम-परिवर्तन कदापि सम्भव नहीं ।
हाँ, बिना पूर्व प्रतिज्ञाके [चाहे अधिकारोंके अन्तर्गत ही हं
किसीके साथ पक्षपात व अनुग्रह दिखानेहीसे सभापति
नियमोल्लंघनका दोषारोपण हो सकता है। प्रतिज्ञानुसार दी।
छुट्टीका आगामी हक़ रियायतीमेंसे बाद दिये जानेहीसे [
नियमावलीमें ऐसा कोई नियम या सभापतिजीको अधिकार न
है] स्पष्ट है कि उसके साथ किसी तरहका पक्षपात व अनुग्रह न
हुआ [वरन् स्वेच्छाचारिता तथा स्वच्छन्दताका उदाहरण नियम
विरुद्ध स्थापित किया गया]।

श्रीमती भगवती देवीके साथ पानी आदिका इक़रार करनेक
बावत कोई लिखित प्रमाण नहीं मिलता है [क्योंकि श्रीमत
भगवती देवीकी रिपोर्टें लिखित प्रमाण नहीं कही जा सकतीं]
सम्भव है कि यह प्रतिज्ञा मौखिक हुई हो जो प्रथम तो [पाश्चात्य
नियमों तथा अंजुमनोंके लिये] प्रामाणिक नहीं, दूसरे प्रतिज्ञाएं
द्विपक्षी हुआ करती हैं जिनका पालन भी दोनों ही पक्षोंपर अव-
लम्बित है [क्या श्रीमती भगवतीदेवीकी ओरसे भी कोई प्रतिज्ञा
थी ? यदि थी तो पेश क्यों नहीं की गयी जिसका पालन उन्होंने
नहीं किया ? और जब लिखित प्रमाण मिलता ही नहीं तो आप
(शाहजी) को यह कैसे विदित हो गया कि प्रतिज्ञाएँ द्विपक्षी
थीं ? क्या एकपक्षी होना असम्भव है ? यदि हाँ, तो पं० रामेश्वर-

दयालजीने, उस प्रतिज्ञाके पदलेमें जो छुट्टीके लिये उनसे श्रीमान् सभापतिजीने की थी, क्या प्रतिज्ञा की थी और उसका क्या पालन हुआ ?] ।

किसी प्रकारका हक़ न होनेपर आवश्यक कार्यके समय किसी कर्मचारीको अवैतनिक छुट्टी देने [जब कि नियम नं० १११ *में यह लिखा है कि *किसी प्रकारकी* छुट्टी किसीको न मिलेगी और अवैतनिक छुट्टी किसी प्रकारकी छुट्टीमें शामिल नहीं है तो पं० साँगीदासजी व्यासको जबकि उनका हक़ नियम नं० १०५† के अनुसार तीन सप्ताहसे अधिक मौजूद था रियायती छुट्टी देने] में क्या दोषापत्ति [नहीं] है ? और नियत नियमोंमें क्या व्यतिक्रम [नहीं] होता है ? [क्यों हो जबकि स्वेच्छाचारिता तथा स्वच्छन्दताका साम्राज्य हो !] ऐसी छुट्टीके लिये किसी नियम [के पालन करने] की आवश्यकता नहीं है । पं० रामेश्वर-दयालजी और पं०साँगीदासजी व्यासका स्वीकृत छुट्टीसे एक दिन ज़्यादा लगाना समान नहीं कहा जा सकता जबकि पं० रामेश्वर-दयालजीने अपनी रवानगीकी ता० १६ की गाड़ीका एंजिन फेल हो जाने तथा गाड़ीके फलौदीहीमें रुक जानेके *प्रमाणस्वरूप*‡

* इस नियम नं० १११ को परिशिष्ट नं० २१ में देखिये ।

† इस नियम नं० १०५ को परिशिष्ट नं० ११ में देखिये ।

‡ प्रमाणस्वरूप "टिकट" पेश करना—

क्या रेलवे "टिकट" का पेश करना सम्भव है ? क्या रेलवेमें ऐसा कोई नियम है कि "टिकट" निर्धारित स्थानपर न देकर यात्री अपने साथ

देखिये परिशिष्ट नं० ६] हीसे निश्चय हो गया था कि वह किसी पदपर नियुक्त होकर बम्बई जा रहे हैं। दूसरे कितने स्कूलके उनके मित्र अध्यापकोंने भी इस भेदको खोल दिया था और बाबू साहिब स्वयं भी इस बातको बखूबी जानते थे कि व्यासजी नौकर होकर ही जा रहे हैं [यह कैसे जाना, बताय ? सम्भव है कि आपने यक्षिणीकी सिद्धि प्राप्त कर ली हो अथवा "अपने आत्मीय शुद्ध भावों" द्वारा जाना हो !]। पाँच छः दिवस बाद यहाँ पाठशालामें एक अध्यापकके पास व्यासजीका अपनी नौकरीकी बाबत एक पत्र भी आ गया था जिससे और भी निश्चय हो गया। वाह ! सत्यनिष्ठ महोदय ! सत्यासत्यके निर्णयार्थ तो कटिबद्ध और प्रत्यक्ष अनुमान दोनों प्रमाणोंकी इतनी गर्हणा !

२ (घ) बा० पन्नालालजीसे डॉक्टरका सर्टिफ़िकेट माँगनेकी कोई विशेषता नहीं थी। शरीरकी साधारण अस्वस्थ अवस्थामें कोई भी कर्मचारी एक दो दिनकी इत्तफ़ाक़िया छुट्टी लेकर ही अपना काम चला सकता है जब उसने किसी डॉक्टर व वैद्यका नियमित इलाज नहीं कराया हो। परन्तु बा० पन्नालालजीने तो इनजेक्शन् कराया था अतः डाक्टरके सर्टिफ़िकेटकी आवश्यकता ही थी। ऐसी अवस्थामें हर एक हीसे सर्टिफ़िकेट लिया गया है [किन्तु उनके नाम नहीं बताये जा सकते; क्योंकि काग़ज़ोंका कोई स्थायी आधार पाठशालामें नहीं है]।

(ङ) मेरी योग्यता तो जैसी थी वैसी अब भी बनी हुई है [कदाचित् यही कारण पदच्युत होनेका है] और कुछ समय

पश्चात् सम्भवतः सदैव ही ऐसी बनी रहे [जैसी कि सन् १९२२ और २३ के वास्तविक परीक्षा-फलसे विदित होती है - देखिये पृष्ठ नं० ६०] परन्तु बाबूजीकी सत्य श्रद्धामें उनके लेखके पद पदपर इतना शीघ्र परिवर्तन और विरोध क्यों ? [आपके जैसे "आत्मीय शुद्ध भावों" के अभावके कारण !] आपका अपने पूर्व लेखमें ऐसा कथन था कि इस संस्थाके छात्र अन्य जगह तो क्या यहाँ बीकानेरहीमें कहीं मान पानेयोग्य नहीं। अधुना इस वाक्यके लिखते समय क्या उनकी समझमें सप्तम कक्षाके छात्रोंकी ऐसी योग्यता हो गई कि किसी संस्थाका [तोता-रटन्त] ग्रेजुएट [जिसकी बुद्धि अफ़सरोंकी खुशामदमें ही प्रतिक्षण लगी रहती हो] भी उन्हें सन्तुष्ट न कर सका। पर आप [नहीं, वरन् सारे संसारके सभ्य तथा विचारशील पुरुषों] के मतानुकूल एक सर्व-योग्य मेट्रीक्युलेट या उससे कम योग्यता धरानेवाले अध्यापक [जो अनुभव तथा कर्त्तव्यपरायणताको कोवर-शाहकी भाँति गौण नहीं किन्तु मुख्य समझते हों] सन्तुष्ट कर सके ?

(त) किसी अस्थायी कर्मचारीको नियत समयकी अवधि-तक उसकी पृथकताकी तिथिके नोटिस रूपसे पूर्व सूचना दिया जाना आवश्यक नहीं परन्तु सभ्यता विशिष्टताके भावसे [कदा-चित् पहले इसका अभाव था] बा० पन्नालालजी आदिके साथ उनके हितार्थ ऐसा व्यवहार हो जानेमें कोई दोषापत्ति है ? ऐसा करनेमें उच्च पदाधिकारियोंकी सापेक्षता नहीं प्रतीत होती।

(थ) बा० बहादुरलालजीके अभियोगके सम्बन्धमें मंत्रीजीको

सफ़ेद झूठ बोलनेवाला प्रमाणित करनेकी चेष्टामें बा० राम-लौटनने जो कुछ लिखा है वह केवल वितण्डामात्र है [क्योंकि फोचर महाशयकी स्वीकृत डिगरी बतानेकी तथा पोल खोलनेकी धृष्टता कर रहा है—देखिये परिशिष्ट नं० ८]। सहेतुक तर्क बिना ऐसा सिद्ध नहीं हो सकता। इस कथनमें जो हेत्वाभास है वह स्पष्टरूपसे प्रकट है। प्रथम तो यदि रजिस्टरोंमें अस्थायी दिखानेके लिये कुछ फेरफार किया जाना प्रामाणिक माना जाय तो मंत्रीजीके सहेतुक पक्षके समस्त निपटारे [अर्थात् दावेका कुल रुपया देने] की व्यवस्था जो सर्वसाधारणको विदित है सिद्ध नहीं होती। यदि फेरफार किया जाना अप्रामाणिक व असत्य है तो बा० बहादुरलालके सहेतुक पक्षके समक्ष उसकी उत्पत्ति सिद्ध नहीं होती [क्योंकि तर्क तथा न्यायका अध्ययन नहीं किया]। अतः स्पष्ट है कि किसी अन्य प्रबल हेतुकी विद्यमानता ही [अर्थात् फेरफार या अनुनयात्मक परामर्श] के कारण मंत्रीजीका जवाबके लिये उद्यत होना सिद्ध होता है और इसी प्रबल हेतुहीके लुप्त होनेसे अभियोग सोपपत्तिक है और इसका लुप्त होना ही दोनों पक्षोंके निपटारे [वादीकी बात रहने] का मुख्य कारण है [देखिये परिशिष्ट नं० ८]।

(प) बा० रामलौटन एक जगह लिखते हैं कि पं० रमाशङ्कर तथा बा० भागवतसिंहके त्यागपत्र स्वयं प्रकट करते हैं कि फोचर महाशयका न्याय तथा उनकी सभ्यता कितनी उच्च कोटिकी है कि जिससे तङ्ग आकर उन्हें त्यागपत्र देना पड़ा—इस कथन-

की मीमांसा कई प्रकारसे हो सकती है। (१) पं० रमाशङ्कर और बा० भागवतसिंहको जो न्यायशीलता और सभ्यताके आदर्श सज्जन थे और जिन्हें इस पाठशालाके छोड़नेका कभी भी न विचार था और न होता, केवल मंत्रीजीके निरन्तर असद् व्यवहारके ही कारण विवश होकर त्यागपत्र देना पड़ा और अपनी इच्छा-विरुद्ध फिर वहाँ ही [कदाचित् शाहजीके स्थानमें महकमा हिसाब और भीनासर, जहाँ पं० रमाशङ्करजी विशारदकी नवीन नियुक्ति हुई, एक ही स्थान है और बा० भागवतसिंहजी विशारद जो भीनासरसे श्री जैनपाठशालामें आये थे और फिर अपने देश चले गये—क्या उनका देश अर्थात् "ग़ाज़ीपुर" और भीनासर, जो यहाँसे लगभग ३ मील है, एक ही स्थान है! शायद आपने यह सत्यनिष्ठ होनेके कारण कह दिया है अथवा ब्राह्ममुहूर्त्तकी प्यारी आनन्ददायिनी निद्राकी स्वप्नावस्थामें यह सूझ पड़ा है!] स्थान पानेका उद्योग करना पड़ा जहाँसे वे पहिले [अपनी अपनी इच्छानुसार त्यागपत्र दे, बिना किसी शिकायतके] पृथक् हुए थे [कदाचित् शाहजीने यह भी पाठशालाके काग़ज़ोंके आधारपर ही लिखा होगा जो सर्वथा निर्मूल है]। (२) जब मंत्रीजीका असद्व्यवहार व अन्याय तो पाठशालाके आरम्भ कालके बा० मातवरसिंह, बा० चतुर्भुजजी आदि अध्यापकोंके [illegible]पहीसे होता आता प्रसिद्ध था तो इन दोनों सज्जनोंका [illegible] [illegible] छोड़ने और ऐसे सभ्यता और न्यायकी साधारण कोटिसे गिरे हुए मंत्रीके पास स्थानके लिये आवेदनपत्र भेजनेमें क्यों

गुन ही अभिप्राय [अर्थात् कोचर महाशयकी नीतिसे अनभिज्ञ अथवा लम्बे-चौड़े नोटिस तथा कोचर महाशयकी ज़ाहिरी बातें सुनकर मोहित हो गये होंगे; क्योंकि तोता अक्सर किंशुक (टेसू या केसूला) के फूलमें भोलेपनके कारण फलकी सम्भावना कर लेता है, कदाचित् ऐसा ही कोई धोखा उक्त महाशयोंको भी हुआ] होगा। (३) बा० रामलौटन उक्त दोनों सज्जनोंके समान न्याय और सभ्यता-सम्पन्न नहीं थे, क्योंकि इन्हें तो मंत्रीजीके व्यवहारसे तंग होकर स्थान छोड़नेको बाध्य नहीं होना पड़ा। प्रत्युतः [कोचर महाशयकी स्वच्छन्दताके कारण] इच्छा-विरुद्ध [विभीषणकी भाँति रावणकी सभासे] नोटिसद्वारा निकलना पड़ा [और इसीलिये पाण्डववत् कष्ट सहनेपर भी सत्य-रक्षार्थ आन्दोलन करना पड़ा]। यदि मंत्रीजीके दिये हुए [स्वच्छन्दतापूर्ण] रिमार्कोंको [जो पृथक् होनेके पहले या पश्चात्का एक भी अबतक दिखला न सके; किन्तु मेरे पृथक् होनेके १॥ मास पश्चात्की एक रिपोर्ट, बा० पन्नालालजीकी लिखित, पेश की है, जिसका मुझसे कुछ भी सम्बन्ध नहीं है—देखिये परिशिष्ट नं० ७] विचारमें लिया जावे तो त्यागपत्रोंहीसे आपके सज्जन महोदयोंकी सभ्यताका माप भी भलीभाँति हो सकता है। (४) शिक्षाके शत्रुरूप मंत्रीजीके व्यवहारसे तङ्ग होकर पाठशालाकी सेवासे वञ्चित रहनेवाले समस्त अध्यापकोंने स्वार्थवश [नहीं, वरन् भोलेपन तथा उदासीनताके कारण] सत्यका प्रकाश करनेमें अपनी निपट भीरुता दिखाई है, पर बा० रामलौटनने निःस्वार्थ रूपसे अपने इस

साहससे जैन जनताको अपनाया है और पाठशालामें नियुक्ति पाये हुए सब अध्यापकोंके शिरोमणि होनेका दावा किया है [वाहरे "आत्मीय शुद्ध भावों" का प्रवाह !]। पं० रमाशङ्करजीके प्रति **दयाभाव** दिखलाना सर्वथा निर्मूल बताया गया है—इस वाक्यके दो अर्थ स्पष्ट हैं, पर सम्भवतः बाबूजीका इससे यही अभिप्राय हो कि पं० रमाशंकरजीके प्रति **दया**का भाव दिखलाना सर्वथा निर्मूल है जिससे प्रकट होता है कि आपकी दयाकी मूल विशेष **गहरी** नहीं [किन्तु शाहजीके प्रति इतनी गहरी है कि उन्होंने पगार (वेतन) हीके वशीभूत होकर नोटिसोंके ये उत्तर यदि स्वयं नहीं तो किरायेपर बनवाकर वितरण किये हैं]—इधरसे वेतन पाई कि दया भी निर्मूल हुई [सत्य है, तभी तो नोटिसोंके प्रतिवादोंमें सत्यासत्यका कुछ भी विचार न रहा]। यदि यह असत्य **होता** तो यह वाक्य कदापि न लिखा जाता क्योंकि पं०रमाशंकरके अपनी स्वीकृत छुट्टीके **उपरान्त ठहर**कर [नियम नं० ११४ *के अनुसार] कई दिन बाद आनेपर भी [नियमानुसार] उन्हें वेतन दे दी गयी थी। उस वेतनके न मिलनेतक ही दया [नहीं, वरन् **कोर्ट-भय**] का भाव था [क्योंकि नियम नं० ११४ *के अनुसार ५ दिनसे कम छुट्टीके लिये सूचना देना भी आवश्यक न था, इसलिये वह वेतन पानेके पूर्णाधिकारी थे] पश्चात् सर्वथा निर्मूल हो गई।

श्रीमती अग्राँजी [दिखावेके लिये] मेरी तथा[वास्तवमें]संसार-

* इस नियम नं० ११४ को परिशिष्ट नं० ११ में देखिये।

को दृष्टिमें अबला थी और अब भी अबला है। सबला समझना तो केवल आप [शाहजी] हीकी प्रजाप्रीड़ना [अथवा यों कहिये कि पॉलिसी] है। जब उसे अकारण ही पृथक् किया गया था तो आपको उस समय ही सहायक अध्यापक होनेके कारण अपनी मौखिक या लिखित सम्मति कुछ प्रकट करके कर्तव्य-पालन करना था [यदि मेरा परामर्श उसी समय लिया जाता अथवा उसपर ध्यान दिया जाता]। अब भी तो आपने [जब ज्ञात हुआ] किया। क्या उस समय ऐसा करना कुछ अपराध था? अग्रेंजीकी दयाकी मूल विशेष गहरी है, वेतन पाते ही निर्मूल नहीं हो जाती। सम्भवतः आपने इसी कारणसे सबला समझा हो। इनाम आदिका देना आपकी, मेरी और मंत्रीजीकी सत्तामें [नियमानुकूल] नहीं है [यदि उनका पालन किया जाय]। ऐसा करना [दिखावेके लिये] कमेटीकी सत्तामें है। अतः इस विषयमें कमेटी ही निर्णय करेगी [जिसका बिना कोचरमहाशयके करना दुष्कर है]।

(फ) बा० रामलोटनने "अर्थी दोषं न पश्यति" इस कहावतका उपयोग मंत्रीजीपर किया है। क्या बा० श्रीरामजीको अपने आवश्यकीय कार्यके समय छुट्टी न देनेमें मंत्रीजीका कोई निजी अर्थ [सिवाय स्वच्छन्दता या शान जमानेके] था? क्या नियम नं० १११* के अनुसार श्रीरामजीको रोककर उनसे अपने राजकीय दफ्तरका कार्य कराना अथवा कोई शुल्कादि रूप भेंट बदलेमें चाहते थे? [नहीं, वरन् भतीजेके मरनेका हाल ज्ञात होनेपर

* इस नियम नं० १११ को परिशिष्ट न० ११ में देखिये।

छुट्टी न देकर मानो या मना दयानुता दिखलाते थे।] बा० बलदेवलालजी तथा पं० मोतीदासजीको सांप्रदायिक और धार्मिक मसपरर छुट्टी देनेमें जो मंत्रीजीने पक्षपात दिखाया उसमें उनका कौनसा कार्य था? [सिवाय इसके कि नियम नं० १११०के अनुसार किसी प्रकारकी छुट्टी न देनेकी अवहेलना कर अपना कर्तव्यपालन दिखलाना था।] क्या छुट्टी चाहनेवाले दोनों सज्जनोंने मंत्रीजी चापलूसी [नहीं, वरन् नियम नं० १११ ०का उल्लंघन कराकर फोवर महाशयके कर्तव्यपालनके दिखानेकी चेष्टा] की थी अथवा कुछ भेंट कर दी थी? [नहीं, वरन् नियमको विचारपूर्वक न बनानेकी मिसाल उपस्थित की थी]। यदि स्कूल [नहीं, वरन् शान] ही अर्थ था तो उन्होंने ऐसा करनेमें कुछ अनुचित नहीं किया। यदि स्कूल अर्थ न समझा जावे तो निस्सन्देह दूसरे अर्थ [अर्थात् शान] की विद्यमानता अनुमेय हो सकती है। यदि बाबूजीके पास उसका कुछ प्रमाण है तो उसे स्पष्ट शब्दोंमें खोल देना ही सत्यताका परिचय देना है और जैन-जनता भी [यदि शान्तिपूर्वक मेरे (रामलोटन प्रसादके) लेखोंपर विचार करेगी तो] इस उपकृतिके लिए [कि उनके आन्दोलनने जनताका ध्यान पाठशालाकी ओर आकर्षित किया] उनकी आभारी बनी रहेगी, अन्यथा यह उनका बनावटी अरण्यरोदन है [नहीं, वरन् होता] और उनके स्वार्थहीका सूचक है [नहीं, किन्तु हो जाता यदि आन्दोलन न किया जाता—परंतु हाय! वह भी पूर्ण न हुआ

* इस नियमं नं० १११ को परिशिष्ट नं० ११ में देखिये

क्योंकि इतनी चापलूसीपर भी शाहजीको पदच्युत होना पड़ा]।

बाबूजीने अपने पहले लेखमें साँगोदासजीके साथ मंत्रीजीके छुट्टी न देनेके कारण असद् व्यवहार व अन्यायका रोना रोया था और इस दूसरे लेखमें पक्षपात और दयालुताका गीत आरम्भ किया है, पर इतना समझनेकी बाबूजीमें [जबतक कि मेरी (शाहजीकी) भाँति चाटुकारिताके उपासक न बनें] बुद्धि कहाँ कि मंत्रीजी जो, स्वभावतः एक न्यायशील आदर्श [अर्थात् स्वेच्छाचारिताके प्रचारक यानी सत्य कहनेवाले अध्यापकोंको निकाल देने, आवश्यकतानुसार कागज़ोंमें फेरफार करनेकी चेष्टा करने, चापलूसोंको अपनाने तथा अध्यापकोंको समान दृष्टिसे न देखने, योग्यायोग्यकी जाँच न करने, स्वार्थसिद्धि अर्थात् स्थायी मंत्रित्वके रक्षणार्थ सत्यासत्यकी परवाह न करने, अगरौंजीको वृद्धावस्थामें कन्या-पाठशालासे निकाल देने, छोटी छोटी बातोंपर छात्रोंका बहिष्कार करने और दूसरेकी उचित सम्मतियोंको स्वच्छन्दतावश न मानकर पाठशालाका रुपया व्यर्थ व्यय करनेवाले इत्यादि इत्यादि] सज्जन हैं, वह आरम्भमें प्रत्येक पाठशालाके कर्मचारीके साथ [ठीक उसी तरह जिस तरह कि रावणने सीताजीके साथ भिक्षा माँगते समय किया था प्रकटमें] बड़ी नम्रता और दयालुताका व्यवहार करते हैं, पर ज्योंही किसी कर्मचारी [को कोवर महाशय] का कपट व छल दृष्टिगोचर हो जाता है तब [कोवर महाशयके] व्यवहारमें

परिवर्तन होना नैमित्तिक है। इसमें कोई आश्चर्य नहीं है। उपरोक्त कथनोंसे बाबूजी [नहीं, वरन् कोचर-शाह] ने भर्तृहरिके श्लोक—

जाड्यं ह्रीमति गण्यते व्रतरुचौ दम्भः शुचौ कैतवं
शूरे निर्घृणता मुनौ विमतिता दैन्यं प्रियालापिनि।
तेजस्विन्यवलिप्तता मुखरता वक्तर्यशक्तिः स्थिरे
तत्कोनामगुणो भवेत् स गुणिनां यो दुर्जनैर्नाङ्कितः॥

को पूर्णरूपसे चरितार्थ कर दिखाया है

सत्य है—"*होय जो लजीलो ताहि मूरख बतावत हैं,*
धर्म धरै ताहि कहैं दम्भको बढ़ाव है।
चलै जो पवित्रता सो कपटी कहत तासों,
सूरको कहत यामें दयाको अभाव है।
'गिरिधरदास' साधुताई देखि कहैं धूर्त है,
उदरके हेतु कियो भेषको बनाव है।
जे जे यहँ गुनी तिन्हें औगुनी बखाने यह,
जगतमें पापिनको सहज सुभाव है॥"

इसीलिये कदाचित् शाहजीके प्रतिवादोंमें विलम्ब अथवा कुछ ... जान कोचर महाशयने उनकी पूर्तिके लिये ही श्रोजैन ...ला ... "श्वेताम्बर*" शब्दकी वृद्धि कर उस [पाठशाला]

* "श्वेताम्बर" शब्दकी वृद्धिसे समाजका वृत्त (घेरा) विस्तृत अथवा सङ्कीर्ण—विशेषतः जैन-जनता स्वयं विचार देखे।

की इसो दिसम्बर सन् १६२४ ई० में १६ वर्षीय (१६०७ –२३) रिपोर्ट ले शीघ्र आ धमकनेकी आवश्यकता समझी और बीकानेरी जनता विशेषतः जैन-समुदायको कृतार्थ कर साथ ही शाहजीकी भाँति "उलटा चोर कोतवालको दण्डे" की मीमांसा करते हुए देख आपने भी, इसी कहावतके समानान्तर अथवा इससे विशेष प्रभावशाली, इस कहावतको, कि "बड़िआरा* चोर सेंधमें गावै" पूर्ण रूपेण चरितार्थ कर दी है]

(य, भ) बाबू जेठमलजी व पं० मेघराजजीकी बाबत में इतना ही कहना उचित समझता हूँ कि ये दोनों बा० रामलोटन-से कुछ विशेष प्रतिष्ठित हैं [क्योंकि उन्होंने यह समझ, "एकरा† फल पाओगे आगे, बानर भालु चपेटन‡ लागे" अन्यायको सह उसके कुचलने और सत्यको प्रकट करनेकी कोई चेष्टा नहीं की]। यदि उनके साथ पाठशालाकी तरफ़से अन्याय हो गया है, तो उन्होंने उसे [भोलतासे] दूसरे ही रूपमें ले लिया है। उनकी ओरसे अनधिकार वकालतकी चेष्टामें क्या बाबू साहिबका अभिप्राय उन्हें भी अपनी कोटिमें लेनेका है ? [कदाचित् किसीका हित करने अथवा अपना कर्त्तव्य-पालन करनेमें पाश्चात्य दृष्टिसे ऐसा ही अभिप्राय होता होगा—सत्य है, "ग़रज़मन्द बावला होता है। "]

(म) नियम नं० ७१‡ के पालनमें लाभ क्या था और अवश्य

---

* बड़िआरा=बलवान। †एकरा=इकड़ा। ‡चपेटन=चपेटना, थप्पड़ मारना, कष्ट देना। इस नियम नं० ७१ को परिशिष्ट नं० ११ मे देखिये।

परिवर्तन होना नैमित्तिक है। इसमें कोई आश्चर्य नहीं है। उपरोक्त कथनोंसे बाबूजी [नहीं, वरन् कोचर-शाह] ने भर्तृहरिके श्लोक—

जाड्यं ह्रीमति गण्यते व्रतरुचौ दम्भः शुचौ कैतवं
शूरे निर्घृणता मुनौ विमतिता दैन्यं प्रियालापिनि।
तेजस्विन्यवलिप्तता मुखरता वक्तर्यशक्तिः स्थिरे
तत्कोनामगुणो भवेत् स गुणिनां यो दुर्जनैर्नाङ्कितः॥

को पूर्णरूपसे चरितार्थ कर दिखाया है

[सत्य है—"*होय जो लजीलो ताहि मूरख बतावत हैं,*
धर्म धरे ताहि कहैं दम्भको बढ़ाव है।
चले जो पवित्रता सो कपटी कहत तासों,
सूरको कहत यामें दयाको अभाव है।
'गिरिधरदास' साधुताई देखि कहैं धूर्त हैं,
उदरके हेतु कियो भेषको बनाव है।
जे जे ध्यहैं गुनी तिन्हें औगुनी बखाने यह,
जगतमें पापिनको सहज सुभाव है॥"

इसीलिये कदाचित् शाहजीके प्रतिवादोंमें विलम्ब अथवा कुछ त्रुटियाँ जान कोचर महाशयने उनकी पूर्तिके लिये ही श्रीजैन-पाठशाला नाममें "श्वेताम्बर*" शब्दकी वृद्धि कर उस [पाठशाला]

* "श्वेताम्बर" शब्दकी वृद्धिसे समाजका वृत्त (घेरा) विस्तृत हुआ है अथवा सङ्कीर्ण—विशेषतः जैन-जनता स्वयं विचार देखे।

की इसी दिसम्बर सन् १९२४ ई० में १६ वर्षीय (१९०७ –२३) रिपोर्ट ले शीघ्र आ धमकनेकी आवश्यकता समझी और बीकानेरी जनता विशेषतः जैन-समुदायको कृतार्थ कर साथ ही शाहजीकी भाँति "उलटा चोर कोतवालको दण्डे" की मीमांसा करते हुए देख आपने भी, इसी कहावतके समानान्तर अथवा इससे विशेष प्रभावशाली, इस कहावतको, कि "वड़िअरा* चोर सेंधमें गावै" पूर्ण रूपेण चरितार्थ कर दी है]

(य, भ) बाबू जेठमलजी व पं० मेघराजजीकी बाबत में इतना ही कहना उचित समझता हूँ कि ये दोनों बा० रामलौटन-से कुछ विशेष प्रतिष्ठित हैं [क्योंकि उन्होंने यह समझ, "एकर† फल पाओगे आगे, वानर भालु चपेटन‡ लागे" अन्यायको सह उसके कुचलने और सत्यको प्रकट करनेकी कोई चेष्टा नहीं की]। यदि उनके साथ पाठशालाकी तरफ़से अन्याय हो गया है, तो उन्होंने उसे [भीरुतासे] दूसरे ही रूपमें ले लिया है। उनकी ओरसे अनधिकार वकालतकी चेष्टामें क्या बाबू साहिबका अभिप्राय उन्हें भी अपनी कोटिमें लेनेका है ? [कदाचित् किसीका हित करने अथवा अपना कर्त्तव्य-पालन करनेमें पाश्चात्य दृष्टिसे ऐसा ही अभिप्राय होता होगा—सत्य है, "ग़रज़मन्द बावला होता है।"]

(म) नियम नं० ७१‡ के पालनमें लाभ क्या था और अवश्य

---

* वड़िअरा=बलवान। †एकर=इसका। ‡चपेटन=चपेटना, थप्पड़ मारना, कष्ट देना। इस नियम नं० ७१ को परिशिष्ट नं० ११ में देखिये।

ही किस निमित्त किया जाता [क्योंकि शाहजीके मतानुसार प्रातःकालका उठना न स्वास्थ्य, न धर्म और न किसी अन्य कार्यके लिये लाभदायक है] और [अर्थात तब] इसमें संशयकी आवश्यकता क्यों? निस्सन्देह इस देशके लागू भी नहीं है। लागू तो केवल उन्हीं अध्यापकोंके लिये जो [शाहजीकी भाँति] निद्रालू और गली गलीमें [श्री जैन पाठशालासे बहिष्कृत तथा डिग्रेडेड छात्रोंका मुख्याध्यापक हो पन्द्रह पन्द्रह रुपयेमें] ठण्ड [ग्रीष्म-ऋतु] में ट्यूशनोंके लिए मारे मारे फिरते हों। लागू होनेका जब समय आवेगा तब ही पालन किया जावेगा। दयाका पाठ सीखना हो तो बाबूजीहीसे सीखें। धर्म-सिद्धान्तोंमें क्या धरा है? जो कुछ है सो सब बाबू साहिबमें ही है। इनको इस नियम[को बनाते और उस] का उल्लेख करते लज्जा नहीं आई कि छोटे छोटे भाग्यवानों१के बालक [जिनको धर्मपरायण बनाने अथवा स्वस्थ रखनेकी आवश्यकता नहीं] जिनके घरपर आठ बजे भोजन तैयार हो जाता है, ग्रीष्मकालमें साढ़े दस बजे तक भूखे रहकर घर जाकर कब भोजन करते, यदि स्कूल प्रातः

१ यहापर शाहजीने "भाग्यवानों" की जैसी विचित्र और अनर्गल व्याख्या की है, देखते ही बनता है। आजतक ऐसी तर्कित व्याख्या देखने तथा सुननेमें नहीं आयी। यह एक "आत्मीय शुद्ध भावों" पूर्ण सर्वयोग ग्रेजुएटकी बुद्धिका नूतन आविष्कार तथा विकाश है। अतः स्थानीय अन्य भाग्य-
नोबुल स्कूल तथा अन्य देशोंके शरीफों और भाग्यवानोंको इधर शीघ्र दे लाभ उठाना चाहिये, अन्यथा पछताना पड़ेगा। कहिये, यदि कोचर
यको ऐसे "योग्य बी० ए०" पर नाज़ है, तो क्या आश्चर्य?

वात्यया कर दिया जाता? इस सम्बन्धमें यह तर्क कि बासी भोजन करके उस समयपर पाठशालामें उपस्थित होना सम्भव नहीं हो सकता, क्योंकि ग्रीष्मकालकी छोटी रात्रियोंके अन्तिम आनन्द-दायिनी निद्रा सबहीको प्रिय रहती है [यदि उसको छुड़ा दिया जावे और छात्रोंका स्वास्थ्य तथा उनकी बुद्धि ठीक हो जावे तो सम्भव है कि शाहजी जैसोंका "हलवा मांडा न पके" अर्थात् घी बाकी न रहे। इसलिये छात्रोंको ब्राह्ममुहूर्त्तका वायु न लगने देना ही शाहजीका तथा अनधिकार प्रतिष्ठाके लिये आवश्यक है]। अतः पक्षोंका शौचादिसे निवृत्त होकर ठीक समयपर उपस्थित होना असम्भव था [किन्तु अब श्रीयुत गोस्वामीजीके समयमें सम्भव है]। सत्य है ऐसा हो जानेसे बाबू-जीकी पढ़ाईमें कोई त्रुटि न रहती, [जैसी कि सतम आदि उच्च कक्षाओंकी रही है-- देखिये पृष्ठ नं० ६०] क्योंकि छात्रोंके विलम्बके दोष-भागी तो कमेटीके सदस्य [सदस्य !] व हेडमास्टर ही रह जाता [किन्तु अब विलम्बके दोषभागी हेडमास्टर नहीं हैं]। यदि अल्पवयस्क बालकोंको [प्रातःकाल उठाकर उनके स्वास्थ्य तथा मस्तिष्कके ठीक हो जानेके कारण] पढ़ाईसे वञ्चित करके अवशिष्टोंकी स्वास्थ्य-रक्षाके हेतु ही*नियमनं०१७

* इस नियम न०७१ को परिशिष्ट न० ११ मे देखिये।

नोट—जिस नियम न० ७१ के पालनके शाहजी इतने विरोधी हैं और इसीके समर्थनके जोशमें आ मुझे निर्लज्जतक कह "अपने आत्मीय शुद्ध भावों" तथा सत्यताका परिचय दिया है, आज सालके अन्दर ही उसी

का पालन हो जाता था परन्तु [अहो, समय भाग] अंग्रेज़ मतानुसार कर्मचारियोंकी दयालुतापर निर्भर हो जाती।

(ग) बाबुओंको अध्यापक महोदयकी तरह न कुशलताका कुछ निदर्शन देना भी अनुचित हो सकता था, परन्तु [परीक्षा-फल देखने और अपने परीक्षापत्रोंसे तुलना करते हुए मालूम न हुआ किन्तु] उन्होंने उनकाके समान अपनी परीक्षकोंकी प्रतिष्ठा जब इस प्रकार प्रकट की है तो मुझे कहना पड़ता है कि बाबुओंकी भाँति परीक्षाके समय छात्रोंको गुप्तरूपसे* सहायता देकर, शारीरिक दण्डादिद्वारा अनुत्तीर्ण छात्रोंको पाठशालासे भगाकर अथवा उन्हें परीक्षामें बैठनेसे रोककर [जिसकी बाबत शाहजीने कर्तव्यपरायणताके कारण न तो कोई नोटिस दिया, न किसी अध्यापकको पेश करनेके लिये उत्तर माँगा, न रिमार्क-बुकमें कोई रिमार्क लिखकर सूचना दी और न किसी अध्यापकको पेश करनेके लिए दण्डित ही किया, क्योंकि परीक्षाके समय ऐसी अनर्गल बातोंकी स्थिति प्रत्यक्ष रूपमें तो कहा सकने भी न थी, किन्तु "बुभुक्षितः किं न करोति पापम्"—पेट सब नियमका यहां आदर पालन किया जा रहा है। सत्य है, "Truth may languish but cennot Perish" अर्थात् सत्य दब भले ही जाय, किन्तु नष्ट नहीं किया जा सकता। हाय! आज हमारा यह पवित्र तथा गौरवशाली भारत इस हीनावस्थाको केवल चापलूसोंहीके द्वारा प्राप्त हुआ है। सत्य है, "सबसे भयङ्कर शत्रु चापलूस ही है।"

* गुप्तरूपसे सहायताका स्वप्न देखना और नोटिस न देना शाहजीकी कर्तव्यपरायणताका नमूना है—देखिये परिशिष्ट नं० ११ नियम नं० ८८।

कुछ करा देना है, यह उसीकी कृपा है कि ऐसा लिखनेपर शाहजीको बाध्य किया कि] प्रत्येक ही अध्यापक इस् प्रकारकी फलप्रसस्थि दिया सकता है। इस प्रकरणको मैं विशेष न बढ़ाकर केवल एक ही अध्यापककी लिखित प्रमाणरूप साक्षी [जो मेरे पाठशाला छोड़नेके १॥ मास पश्चान्की लिखी हुई है, जब कि मेरे अध्यापन समयका कोई रिमार्क न मिल सका, पेश की गयी, जिसका पूर्ण सम्बन्ध अथवा उत्तरदायित्व मुझपर नहीं किन्तु स्वयं शाहजीपर है, (देखिये परिशिष्ट नं० ७) जनताकी आँखोंमें धूल डालनेके निमित्त] उपस्थित करता हूँ, जिसने बाबूजीको सत्रके उपरान्ततक पढ़ाई हुई और उत्तीर्ण हुई कक्षाका चार्ज लिया था:—

I beg to report that the 3rd class was placed in my charge on the 17th July 1923 when a fresh timetable was fixed Since then, I have found to my utter disappointment that the Students of the said class are miserably weak in English It seems that neither they cared to learn their lessons nor they were forced to do so. They bave studied 12 lessons of the text-book but have entirely forgotton them. No attention seems to have ever been paid to spelling, punctuatiou and reading etc. It is regretted that the progress they have made during the last three months is very poor. They are in the habit of remaining obstinately silent, when a question is put to them and it is difficult to remedy this defect. However, I will try my best to

improve their condition and here, I beg to inform you that under such circumstances I am obliged to teach them from the very beginning This is submitted to you for your information.

you are also fully acquainted with these students, I believe, as you have also been in charge of this class for some time

7-8-23 yours obediently,
Pannalal.

[उपरोक्त अँग्रेज़ी रिपोर्टका भाषानुवादः—सूचनार्थ निवेदन है कि कक्षा ३ ता० १७ जुलाई सन् १९२३ ई० को, जब कि नया टाइमटेबुल बनाया गया, मुझे दी गयी। उस समयसे मैं, यह जानकर कि उक्त कक्षाके विद्यार्थी अँग्रेज़ी भाषामें अति ही कमज़ोर हैं, हतोत्साह हो गया। ऐसा प्रतीत होता है कि न तो स्वयं विद्यार्थियोंने अपने पाठ याद करनेकी चेष्टा की और न उनको ऐसा करनेके लिये मजबूर किया गया। वे अपनी पाठ्य-पुस्तकके १२ पाठ पढ़े हैं, परन्तु उनको बिलकुल ही भूल गये हैं। अक्षर-विन्यास (हिज्जे), विराम-चिन्ह और पढ़ने आदिकी ओर ज़रा भी ध्यान दिया जान नहीं पड़ता। खेदसे कहना पड़ता है कि गत तीन महीनोंमें जो उन्नति उन्होंने की है वह अत्यन्त असन्तोषजनक है। जब कभी उनसे कोई प्रश्न पूछा जाता है तो वे चुप्पी साध जाते हैं और उसके आदी हो गये हैं। इस दोषका मिटाना अति कठिन है, तथापि मैं उनकी दशा सुधारनेकी यथाशक्ति चेष्टा करूँगा और आपको यह सूचित करता हूँ कि ऐसी दशामें मुझे

प्रारम्भसे ही पढ़ाना पड़ा है। यह आपको सूचनार्थ लिखा जाता है।

स्वयं आप भी इन विद्यार्थियोंसे भलीभाँति परिचित हैं, क्योंकि आपने भी इस कक्षाको कुछ दिनोंतक पढ़ाया है।

ता० ७-८-२३, आपका आज्ञाकारी,

पन्नालाल।]

(ल) जनताको इस बातपर ध्यान देना उचित है कि बाबू-जीकी सत्यता [कि जिसके प्रज्वलित उदाहरण ऊपर बयान किये जा चुके हैं अर्थात् पाठशालासे छात्रोंका बहिष्कार कर उनका ट्यूशन करना, छात्रोंके भगाने अथवा परीक्षामें बैठनेसे रोकने आदिका पूर्णाभाव होते हुए भी उन्हें चापलूसीसे प्रेरित हो लिख मारना और आन्दोलन नोटिसोंमें छात्रोंके डिग्रेडेशन (कक्षासे अयोग्य समझ नीचे उतार देना) आदिको स्वीकार करते हुए भी उन्हें पाठशालाकी १६ वर्षीय रिपोर्टमें विपरीत अर्थात् उत्तीर्ण दिखाना आदि] का कोई अलौकिक ही लक्षण होगा, वरना ऐसा कदापि सम्भव नहीं था कि मेरी [अलौकिक] सत्यताका इतना उपहास उड़ाया जाय और अपनी [नहीं, वरन् सबकी सत्यताका इतना गौरव मनाया जाय। आपके प्रथम लेखमें जनताको घोषणा थी [और अब भी है] कि आजतक रिमार्क-बुकमें किसी प्रकारका हानिकारक रिमार्क मेरे विरुद्ध [मेरे पाठ-शाला छोड़ने (ता० १६-६-१९२३) तक] नहीं है और अब इस द्वितीय लेखमें [शाहजीके "अलंकृत" शब्द प्रयोगपर उन्हें शब्दार्थ

है] नितान्त निर्मूल तथा निरंकुशतापूर्ण अधिकारोंसे भरा बनाया गया है। यह तत्कालीन स्थानापन्न मुख्याध्यापक बाबू श्रीरामजीकी आज्ञोल्लंघन [अर्थात् नियम नं० ७१* को व्यवहारमें लाने और मुँहपर सत्य बात कहने] तथा उनके साथ झगड़ा करने [जो सत्य कहनेपर स्वाभाविक ही है] के अपराधपर निकाला गया था [देखिये परिशिष्ट नं० ५]। नोटिस नं० ३८६ [नहीं, वरन् ३८१—कदाचित् यह ३८६, जो वास्तवमें ३८१ है, ब्राह्ममुहूर्तकी "आनन्ददायिनी निद्रा" में लिखा गया] ता० २०-१-२३ ई० जो कई साधारण और विशेष रूपसे मौखिक आदेशोंके पश्चात् [जो मुझे कभी नहीं दिये गये और न आवश्यकता थी] निकाला गया है, उसमें छात्रके कुछ दिन अनुपस्थित रहकर आनेके अप राधपर आपके शारीरिक दण्डकी सीमा यहाँतक पहुँची कि छात्रकी आँखपरका भ्रुकुटीस्थल उड़ा दिया गया [यह व्याख्या भी नितान्त निर्मूल है, क्योंकि छात्र स्वयं ही महज़ डरानेकी धमकीसे भयभीत हो दैवात् दीवारसे टकरा गया और शाहजीकी चापलूसी न करनेके कारण उक्त ऑर्डर निकल गया, जिसको ऐसे स्वेच्छाचारी मंत्री कोचर महाशयने भी जाँच करके मुझको निर्दोष प्रमाणित किया है] और उसे उसी समय अस्पताल भेजना पड़ा था। यदि ऐसी परिस्थितिके उपस्थित होनेपर भी आपने श्रीरामजीसे [नहीं, वरन कोचर महाशयसे क्योंकि बा० श्रीरामजी न उस समय आपके आगे पाठशालामें थे और न उनसे इस

* इस नियम-नं० ७१ को परिशिष्ट नं० ११ में देखिये।

नोटिससे कुछ सम्बन्ध ही है—"श्रीरामजीसे अच्छी सम्मति प्राप्त" करनेका स्वप्न आना तो केवल आपकी ब्राह्ममुहूर्तकी "आनन्ददायिनी निद्रा" हीका सूचक हो सकता है अन्यथा ऐसी अनर्गल तथा बे-सिर-पैरकी व्याख्या करना विद्वत्ता तथा सभ्यताका लक्षण कोई कह सकता है?] अच्छो सम्मति प्राप्त कर ली है तो इसमें कारण कुछ और [सत्यका उद्गार] ही हो सकता है, जिसे जनता [यदि कागज़ोंमें फेरफार न हुआ हो तो] स्वयं विचार सकती है और [इस अस्पष्ट व्याख्यापर] मेरे अलंकृत शब्दका प्रयोग भी अब विदित हो गया होगा कि किसकी योग्यताका द्योतक है।

मैं अपने आत्मीय शुद्ध भावोंसे [जैसा कि ऊपर जगह-जगह बतलाया गया है] इस संस्थाका कार्य कर रहा हूँ और मुझे अपने आत्म प्रदर्शित पथसे विचलित करनेकी [जबतक कि पगार (वेतन) मिलता है] किसीकी सामर्थ्य नहीं है। अतः बाबूजीको मेरी ओरसे चिन्ताग्रस्त रहके बीमार पड़नेकी आवश्यकता नहीं है। यदि वह स्वयं अपने आदर्शको बनाए रखेंगे तो मुझे उसीमें पूर्ण आनन्द [कैसे हो सकता] है [जब कि बाबुकारी तथा खुशामदकी बीमारी पीछे पड़ी है]।

नोट१—जनताका ध्यान इस ओर भी आकर्षण करना उचित समझता हूँ कि बाबूजी [यदि "शाहजी" पढ़ा जाय तो अनुचित न होगा] की अर्थ करनेमें प्रवीणता और योग्यता अद्वितीय है [क्योंकि योगरूढ़ि, यौगिक और कल्पित सांकेतिक (टेक्निकल

र्म) शब्दोंमें भेद-विभेद न कर सके] । आप कोचर महाशयका अर्थ करते हैं बाबू शिवबक्शजी ··· "और शाहजीका मयाभाई टी० शाह"·····। इन अर्थोंके करनेमें आपने कौन कौनसी अलौकिक [अर्थात् शेक्सपियर आदि लेखकों तथा कवियोंकी] भाषाओंका आश्रय लिया है [चापलूसीके कारण] कुछ निश्चय नहीं होता [क्योंकि स्वार्थान्ध होकर कोचर महाशय तथा अपनेको मालवीयजी (माननीय श्रीयुत पं० मदनमोहनजी मालवीय), महात्मा गान्धीजी (श्रीयुत पूज्य मोहनदास कर्मचन्दजी गान्धी) , नेहरूजी (श्रीयुत पं० मोतीलालजी नेहरू) , मिस्टर गोखले (श्रीयुत पं० गोपाल कृष्णजी और लोकमान्य तिलक (श्रीयुत पं० बाल गङ्गाधर तिलक) आदि आदि की भाँति प्रसिद्ध समझ बैठे हैं अन्यथा ऐसी शंकाकी सम्भावना कदापि न होती] । यदि नामोंहीसे अभिप्राय था तो क्या आपने जनताको इतना मूर्ख समझा [नहीं किन्तु कोचर-शाहको आपकी भाँति चाटुकारितावश प्रसिद्ध तथा सर्वोपरि न समझा] कि ["कि" के स्थानमें "इसलिये" पढ़ना उचित है] टिप्पणीकी आवश्यकता जान पड़ी ।

२—पत्र नं० ८०,८१ और १३०* के विवरणको छोड़कर क्या आपके अन्य सब गुणग्रामोंको मेरे एक ही पत्रमें आपने [जब कि शाहकी अगाध 'अलंकृत' भण्डार भरा पड़ा है] इतिश्री मान ली जो आप आश्चर्य करते हैं ? क्या उनमें कोई अलौकिक रासायनिक सिद्धान्त विशेष थे अथवा कोई अमूल्य सम्पत्तिके साधन विशेष

* पत्र नं० ८०,८१ और ४३ का विवरण वॉल्यूम २ में हो चुका है ।

थे जो आपको निकालते समय बलात्कार आपसे छीन लिये गये
हों और अब वापिस न मिलनेकी सम्भावनापर इतना आश्चर्य
होता है ? पत्रों [को] तो आपने सहर्ष मंत्रीजीके पास भेजे होंगे
और इस कारण उनकी कॉपी भी आपके पास होगी। यदि जनताको
उन्हींसे कुछ लाभ था तो आपने ही उनको छपवा दिया है
स्कूल-सम्बन्धी प्रकट और अप्रकट पत्रोंकी गुप्त रीतिसे न
ले लेना [जबकि वे सूचनार्थ भेजे गये हों] आपहीको न्याय
कूल प्रतीत हो, हमें [जो सिवाय श्रीयुत पं० रामेश्वरदयालजी
भाँति पेश किये हुए रेलवे "टिकट" तथा कोचर महाशयकी
वर्षीय "रिपोर्ट" जैसी कार्रवाइयोंके अन्य कोई कार्रवाई और नकल
न्यायानुकूल प्रतीत] नहीं होता [कदाचित् रेलवे "टिकट" का
पेश करना इसलिये उचित समझा गया हो कि श्रीजैनपाठशाला-
की भाँति रेलवे डिपार्टमेंटसे भी "कोई ऐसी लिखित प्रतिज्ञा"
कराकर "टिकट" साथ लानेकी आज्ञा प्राप्त कर ली गयी हो]।

३—समाचारपत्रोंद्वारा कर्तव्यपाल न करनेकी पूर्व सूचना-
की क्या आवश्यकता थी ? यह तो आप करते तब ही प्रकट हो
जाता। यदि इससे एक साप्ताहिक या दैनिक पत्र इस निमित्त
सदाके लिये निकालनेका दृढ़ निश्चय हो तो मुझे भी ["अपने
आत्मीय शुद्ध भावों" की अधिकताके कारण] खुशी* है।

नोट—यहांपर शाहजीने "अप्रकट" तथा "गुप्त रीति" शब्दोंका प्रयोग
कर जैसा विचित्र अभिनय किया है, विचारणीय है।

* शाहजीको इस "आत्म प्रदर्शित" खुशीपर अनेकानेक बधाई है।

मैं भी इसका एक ग्राहक बनूँगा और निकालनेपर एक प्रति मेरे नाम वी० पी०से भेज देवें [किन्तु भय है कि कहीं उसे लौटाकर हानि न पहुँचावें]। आर्थिक सहायताकी यदि आवश्यकता हो तो जैन-समाज [में कोचर-शाह की जो आर्थिक सहायताके लिये प्रसिद्ध हैं] से निवेदन करें।

४-पूज्य शब्दका व्यन्यात्मक अर्थ [जो शाहजीकी "आत्मीय शुद्ध भावों" की सूझ तथा सूचक है] जनताको भलीभाँति विदित ही होगा कि शिवबक्सजीको मंत्री-पदपर और मेरे जैसे अयोग्य, सत्यग्रहको मुख्याध्यापककी जगह नियुक्त करनेवाले मेम्बर बाबूजीके किस भावमें पूज्य होंगे ? हाँ, इसी भावमें कि उनके लेखको आँख मूंदे ही [नहीं, वरन् विचारपूर्वक पूर्ण जाँच कर तथा ज्ञान-चक्षु खोल सावधान होकर] मान लेनेमें, अन्यथा पूज्य शब्दका [नहीं, वरन् धर्मके] परिवर्तन होनेमें *क्या देर लगेगी* ?

यहाँपर मेरे कार्य-पूर्तिके लिये जो विचार तथा उत्साह प्रकट किया है उसके लिये कोटिशः धन्यवाद है !! कतिपय कारणोंसे आपके उपदेशानुसार अभीतक पत्र-पत्रिका न निकाल सका जिसका मुझे खेद है !!! आज यह लघु पुस्तिका ले आपकी सेवामें उपस्थित हो रहा हूँ और आशा करता हूँ कि शीघ्र ग्राहक बन-बनाकर सहकारितापर संस्करण निकालनेके लिये उत्साहित करेंगे—कहीं ऐसा न हो कि "अपने आत्मीय शुद्ध भावों" को किसी दूसरेको प्रदान कर मुझे 'निरुत्साह कर बैठें,' क्योंकि धनिकोंकी मनो-किक मौजका ठिकाना क्या ! 'विलम्ब तथा प्रतीक्षाके लिये जो आपके मिजाज-शरीफ़' को कष्ट हुआ है उसके लिये सादर क्षमाप्रार्थी हूँ।

५—जैनपाठशालाका प्राचीन शुद्ध तथा पवित्र गौरव बाबूजी को मान्य तो हुआ, पर इन सोलह वर्षोंमेंसे किस वर्षमें रहा [जिस वर्ष (आन्दोलन)के प्रभावसे प्रभावित होकर मंत्री कोचर महाशयको सर्वप्रथम नियम नं० ५८*के पालनका ज्ञात हुआ]-यह निर्धारण नहीं किया। करें क्यों? [नहीं, वरन् विरोध करें कैसे, क्योंकि प्रारम्भकालसे, पाठशाला तथा बीकानेरमें मौजूद न थे] करें तो उन्हींके पूर्व लेखसे विरोध न हो जाय? सम्भव है कि उनका अभिप्राय प्राचीन जैन-धर्मसे हो। इस भावसे वाक्य अशुद्ध और असम्बद्ध होगा [क्योंकि चाटुकारिताने मस्तिष्कपर अधिकार जमा रक्खा है जिससे योग्यता और जाँचकी शक्ति दब गयी है]। कोई क्षति नहीं [क्योंकि मैं (शाहजी) तो केवल पगार (वेतन) का नौकर हूँ]। लेखकका [काकवृत्तिवत्] भाव ही लेना उचित है। यदि यह भाव है तो क्या जैनधर्मके सिद्धान्तोंमें परिवर्तन हो गया है? [नहीं, वरन् शाहजी जैसे मेजुएटोंके द्वारा पाश्चात्य रंग चढ़ गया है] जिसके कारण प्राचीन और अर्वाचीन शब्दोंका प्रयोग सार्थक समझा जावे। बाबूजीके विचारानुसार अन्याय और असत्यके संस्थासे उठ जाने मात्र होसे उस प्राचीन गौरवकी सम्प्राप्ति सिद्ध [नहीं] है। क्यों नहीं? [इसलिये कि पाश्चात्य उन्नतिके आधार, कदाचित् कोचर-शाहकी दृष्टिमें, यही दो अन्याय और असत्य हैं ।] लेखकका ऐसा कथन है। तब तो मानना पड़ेगा कि इसी एक

* इस नियम नं० ५८ को परिशिष्ट नं० ११ में देखिये।

संस्थाको छोड़कर यहाँकी अन्य सब संस्थाओंमें तो पूर्ण सची उन्नतिके साथ साथ जैन धर्म हीका [नहीं, सत्य और न्यायका] शुद्ध एवं पवित्र गौरव *विद्यमान होगा* [क्योंकि विद्योन्नतिका मुख्योद्देश्य यही है, जिसको स्वच्छन्दतासे भ्रष्ट कर रक्खा है]।

६-बाबू रामलोटनने यह सिद्ध किया है कि [पाश्चात्य रंग में रँगे हुए चाटुकारोंके लिये नहीं वरन् भारतवर्षके धर्म-वेत्ताओंके लिये] धार्मिक शिक्षा देना एक अत्यन्त ही सरल कार्य है जिसके लिये एक अल्पवेतनिक अध्यापक [जैसा कि प्राचीन-कालसे अबतक धर्मके पक्के रंगमें रंगे हुए मिलते हैं] रखना कमेटीको उचित था और मैं जो रु०१२५) मासिक [व्यर्थ] पाता हूँ इतना अयोग्य हूँ कि [ग्रेजुएट होनेके कारण जैनधर्मसे अनभिज्ञ हूँ इसलिये] *धर्मशिक्षा भी भलीभाँति नहीं दे सकता हूँ* और ऐसे अयोग्यको इतने वेतनपर नियुक्त करके कमेटी [नहीं, वरन् नियम नं० ५६*के अनुसार फोचर महाशय] ने अपनी पूर्ण अयोग्यता [तथा स्वच्छन्दता] का परिचय दिया है [परन्तु धन्य है कि कमेटीने आपकी योग्यतासे पूर्ण परिचित होकर आपके "साँचमें लाँछ" नामक नोटिस वितरण होनेके लगभग एक ही मासके भीतर आपके स्थानमें दूसरा नया मुख्याध्यापक नियुक्त

नोट—यहाँपर शाहजीने "धर्म-शिक्षा भी भली भाँति नहीं दे सकता हूँ" का प्रयोग कर अपने पक्षका कहाँतक समर्थन किया है, विचारणीय है। विशेषतः 'भी' शब्दपर अधिक ध्यान देना आवश्यक है।

* इस नियम नं०५६ को परिशिष्ट नं० ११ में देखिये।

करनेको आपत्तिजनक नहीं समझा] ॥ अतः इस स्थानपर किसी योग्यकी नियुक्ति करके पाठशालाकी भावी उन्नतिके पथको खोल देना ही कमेटीका परम कर्तव्य है। बाबूजीका यह अभिप्राय यदि कमेटीको अक्षरशः सत्य प्रतीत होता हो तो, मैं निस्संकोच पाठशालाके हितार्थ अपना ["आत्म-प्रदर्शित"] पदत्याग करनेको सहर्ष [अथवा मजबूरन] उद्यत हूँ । मैं कमेटीसे [दिखावटी] निवेदन करता हूँ कि इस स्थानपर बाबू रामलोचनजी जैसे [किसी] सुयोग्य, सत्यनिष्ठ और विश्वासपात्रको नियुक्त किया जावे तो उत्तम हो [कदाचित् इसी प्रार्थनानुसार श्रीयुत पं० चिम्मनलालजी गोस्वामी एम० ए० की नवीन नियुक्ति हुई है]। आप धर्मके अद्वितीय ज्ञाता हैं, जिसके प्रमाणमें आपने पाठशालाकी छात्र-सभाके अधिवेशनमें सबके समक्ष अपने मुखारविन्दसे [शाहजीके सभापतित्वमें निर्विघ्न प्रसन्नतापूर्वक] व्याख्यानमें कहा है कि "नमोऽरिहन्ताणम्"* का अर्थ जैसा मैं जानता हूँ वैसा कोई भी जैनी शायद ही जानता हो।

*यहाँ बीकानेरमें सन् १९२१ ई० एक परम प्रसिद्ध मुनि महाराज श्री-वल्लभ विजयजी एक जैनी महात्मा आये थे। पाठशालाकी छुट्टीके दिनोंमें मैं प्रायः इनका धर्मोपदेश सुनने जाया करता था। अन्य उपदेशोंके अतिरिक्त उनके ता० १४-५-१९२१, २३-५-२१, ३०-५-२१, ७-६-२१ तथा १३-६-२१ के उपदेशोंसे मुझे विशेषानन्द हुआ जिनके लिये मैं उक्त महात्माजीका परम कृतज्ञ हूँ। उन्हीं दिनोंमें उन्होंने एक दिन "नमो अरिहन्ताणम्" की ललित व्याख्या की थी जिसका भाव लेकर मैं समय-समय यथाशक्ति छात्रोंको समझाकर धर्मपथपर आरूढ़ रहनेकी चेष्टा किया

[यह केवल चाटुकारिताहींका प्रभाव है कि शाहजी इस प्रकारकी अनर्गल समालोचना करनेपर उद्यत हुए हैं, अन्यथा इस प्रकार "अपने आत्मीय शुद्ध भावों" को प्रवाहित कर सत्यवीरताका परिचय कदापि न देते। क्योंकि उस समय ऐसे भावोंका मुझे तो क्या अन्य उपस्थित अध्यापकों तथा छात्रोंके पवित्र हृदयोंमें स्वप्नमें भी विचार न आया होगा]। किमधिकम् सुज्ञेषु किं बहुना।

मयाभाई टी० शाह

हैडमास्तर,
ता० २५-६-१९२३ ई० } श्रीजैन पाठशाला—बीकानेर।

नवजीवन मुद्रणालय—अहमदाबाद

इस विशाला तथा सत्यादर्श उपरोक्त नोटिस "साँचमें लाँछ"

करता था। इसी अपराधपर शाहजीने जनताके समक्ष मुझे बड़ा भारी मुलाज़िम करार दिया है और उन्होंने अपने अलङ्कृत भण्डारसे यह रकम निकालकर इसे मेरे प्रायश्चित्तके हितार्थ दानस्वरूप अर्पण किया है। कहिये पाठक महानुभावो! अब तो मेरे प्रायश्चित्त तथा शाहजीकी दयालुता और दानशीलताका परिचय खूब मिला होगा!! सत्य है, मनुष्य चाटुकारिता तथा स्वार्थके वशीभूत हो जो कर डाले थोड़ा है!!!

नोट—शाहजीने मेरे "साँचको आँच क्या!" नोटिसका, जिसका उल्लेख काण्ड ४ में किया है, सविस्तर उत्तर उपरोक्त काण्ड ५ में देकर सभ्य संसारको महत्वपूर्ण सत्यका रहस्य दर्शाया है और जहाँ जहाँपर मैंने "सत्य तथा न्याय" का गला घोंटनेकी चेष्टा की थी, उनपर जिस विद्वत्ता और चातुर्यके साथ प्रकाश डाल उनकी रक्षा की है, विचारशील तथा भद्र

का प्रत्युत्तर जो मैंने "स्थाली पुलाक" न्यायके आधारपर सूक्ष्म-रूपमें दिया है, पाठकोंके विचारार्थ आगे काण्ड ६ में दिया गया है।

पुरुषोंको विदित ही हो गया। किन्तु आश्चर्य है कि उन्होंने, सत्य धर्मके रक्षार्थ इतना अविरल परिश्रम करनेपर भी, मेरे उक्त नोटिसके ६० (१) तथा नोट (६) पर कुछ भी प्रकाश नहीं डाला। सम्भव है, उन्हें उनमें कोई "अलौकिक रासायनिक सिद्धांत विशेष" अथवा "अमूल्य सम्पत्तिके साधन विशेष" दृष्टिगोचर न हुए हों अथवा सत्य-प्रकाश-चमत्कारके चकाचौंधके कारण उनपर कोमल दृष्टि स्थिर न रह सकी हो। जो हो—सत्यधर्मकी रक्षा करना ही श्रेयस्कर है।

काण्ड ६

नास्ति सत्यात् परोधर्मः | अहिंसा परमो धर्मः

नहिं असत्यसम पातक पुञ्जा

गिरिसम होंहि कि कोटिक गुञ्जा

ॐ

There is no religion better than truth.
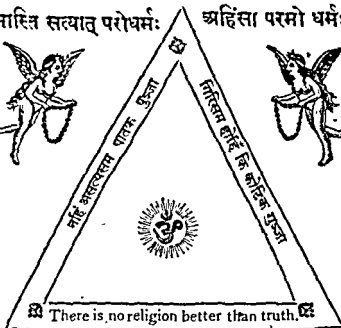
कोचर-शाह तिमिर भास्कर।

शाहजीके "साँचमें लाँछ" पालिश्ड नोटिस-का पोल दिग्दर्शनः—

नोट—त्रिभुजके आधारपर जो अंग्रेजीमें लिखा है, उसका अर्थ है:— "सत्यसे बढ़कर दूसरा कोई धर्म नहीं है।"

मेहर काँपा चर्ख चक्कर खा गया।
शाहजीके सत्यका जौहर खुला॥

मुझे विश्वास था कि पाठशालाओंमें अध्यापक तथा विद्यार्थ "सत्य"से नहीं हटते, क्योंकि इन्हीं स्थानोंमें आचार्य सत्य-पथ-प्रदर्शक हुआ करते थे; परन्तु "सांचमें लाँछ" नाम नोटिस देखकर यह निश्चय होता है कि आधुनिक अध्यापकगण जो पाश्चात्य रंगमें रंगे हुए हैं, सत्य पथ-प्रदर्शक नहीं हैं किन्तु सत्यका अभिनयमात्र ही खेला करते हैं। उदाहरणार्थ, "सांच में लाँछ" तथा शाहजीकी जगह दूसरे हेडमास्टरकी नियुक्ति और शाहजीके पदच्युत होनेसे जो मनुष्य पूर्णतया अभिज्ञ हैं वे समझ सकते हैं कि यह मेरे ही आन्दोलनका "प्रताप" है कि कोवर-महाशयने अपनी भूल कार्य रूपमें स्वीकार कर ली। परन्तु शाहजी-ने फिर भी जनताकी आँखोंमें धूल डालनेके अभिप्रायसे नोटिस निकालकर [illegible] परिचय दिया है।

[illegible] करनेका अभिप्राय नहीं था और न है, किन्तु "जागृति" का था और है, परन्तु शाहजी-ने अपने निर्बल पक्षकी पुष्टि तथा सत्यको छिपानेके लिए "जैन समाज" को मेरे प्रति भड़कानेकी अनधिकार कुचेष्टा की है। शाहजीकी योग्यता तथा विद्योन्नतिका परिचय "विद्या" और "जागा" शब्दोंकी, जो मैंने अपने प्रथम दोहेमें लिखा था, व्याख्या-हीसे प्रकट [illegible] जैन-समाजकी जागृतिका पता "साँच

में लॉछ" के (क) भागसे लगता है कि प्लेगके बाद छात्र अवतक पाठशालामें नहीं आये और इस समय पाठशालाकी १५ वर्षकी विद्योन्नतिमें पाठशालाकी उच्चतम सप्तम कक्षामें छात्र-संख्या केवल १ तथा षष्ठ कक्षामें कदाचित् शून्य ही है। क्या ऐसी ही उन्नति करनेवाले कर्मचारी तथा मंत्रीगण कर्त्तव्यपरायण कहला सकते हैं? और इसी तरह नियम १७ * की अवहेलना मेरी ओर बतलाना तथा श्रीमती अगर्वाजीके प्रति सहानुभूतिपूर्वक परामर्श न देना सर्वथा झूठ है। कदाचित् शाहजीको यह विदित नहीं है कि विभीषणका लङ्कासे निकलनेका कारण केवल उसकी सत्यता ही थी। यह भी एक विचित्र बात है कि नियम ७१† का बनानेवाला तो विद्वान् तथा सभ्य कहलावे और उसका कार्य रूपमें परिणत करने तथा करानेकी चेष्टा करनेवाला निर्लज्ज कहा जावे। क्या प्रातःकाल न उठना और विद्यार्थियोंका, शाहजीकी भांति, आलस्यावतार हो जाना भी किसी "धर्मसिद्धान्त" या प्रचलित "सार्यस" के अनुसार है अथवा "भाग्यवान्" होनेका चिह्न है? कदाचित् शाहजीका अभिप्राय भारतीय धर्म-विमुख प्रं जुएटोंके मतानुसार विद्यार्थियोंको धर्म-विमुख करनेका है और शायद इसीलिये शाहजीने धर्म-शिक्षा पढ़ानेका भार अपने ऊपर लिया है। क्या ही अच्छा कहा है कि :—

जाको मतिभ्रम होइ खगेशू। ता कहँ पश्चिम उगहिं दिनेशू॥

---

* इस नियम नं० १७ को परिशिष्ट नं० ११ में देखिये।

† इस नियम नं० ७१ को परिशिष्ट नं० ११ देखिये।

मेरा ही नहीं किंतु विद्वानोंका विश्वास है कि ("Example is better than precept" अर्थात् गाल बजानेसे कार्यरूपमें परिणत होना ही श्रेयस्कर है।" केवल धर्म पढ़ाने और जीहुजूरीका जाप करनेहीसे "नमोऽरिहन्ताणम्" की व्याख्या समझमें नहीं आ सकती और न बुद्धि ही ठिकाने रह सकती है। स्कूल-सम्बन्धी नोटिसोंका अध्यापकोंके सूचनार्थ निकालना और फिर उसकी नकल या नोट रखनेपर न्याय-विरुद्ध बताना ऐसे ही बुद्धिमानका काम है कि जो सभामें अलापे और फिर उसको गुप्त रखनेकी चेष्टा करे। क्या यही पाण्डित्यका लक्षण है? और मेरे पत्र नं० १७४* ता० २२-१०-२३ तथा पत्र नं० १७६* ता० २४-१०-२३ का उत्तर न देना, तथा "साँचमें लाँछ" नामक नोटिसकी प्रतियाँ मुझको माँगनेपर भी न देना क्या मनुष्यता है? अब जनता स्वयम् विचार करे कि "उलटा चोर कोतवालको डण्डे" जो शाहजीने लिखा है किसपर लागू है? क्योंकि—

साँच झूठ निर्णय करे, नीति निपुण जो होय।
राजहंस बिन को करे, छीर नीरको दोय॥

मेरे पास दान दिया हुआ धन नहीं है जो मैं लम्बे-चौड़े इश्तिहार बाँटकर दुरुपयोग करूँ, बल्कि मेरा सत्य विचार यही है कि श्री जैन पाठशालासे क्रूरता तथा स्वेच्छाचारिताकी इतिश्री हो। मुझे सन्तोष है कि मेरे आन्दोलनपर ध्यान दे कमेटीने नये योग्य हेडमास्टरको नियुक्त कर **भविष्य सुधार**की चेष्टा की है।

* इन पत्रों (नं० १७४ तथा १७६) को परिशिष्ट नं० १५ में देखिये।

ईश्वरसे प्रार्थना है कि यह **सुयोग्य हेडमास्टर** कोचर महाशयकी स्वेच्छाचारिता तथा मन्थराके भँवर-जालका शिकार न होकर **छात्रों** के लिये **सच्चे पथप्रदर्शक** बनें।

"*सुख, सम्पति, यशकी चाह नहीं, परवाह नहीं यह तन न रहे।*
यदि इच्छा है, यह है, मनमें, **यह स्वेच्छाचार दमन न रहे॥**"

नोट—(अ) कोचर महाशय = बा० शिवबक्षजी साहिब सेक्रेटरी, श्री जैन पाठशाला बीकानेर।

(ब) शाहजी = बा० मयाभाई टी० शाह बी० ए०, लेट-हेडमास्टर तथा वर्त्तमान फ़र्स्ट असिस्टेण्ट मास्टर, श्री जैन पाठशाला, बीकानेर।

बीकानेर
ता० २६वीं नवम्बर
सन् १६२३ ई०।

कोचर-शाह स्वेच्छाचारिताका अन्त करनेवाला—
रामलौटनप्रसाद,
लेट असिस्टेण्ट मास्टर,
श्री जैन पाठशाला,
बीकानेर।

दि इण्डियन नेशनल प्रेस, "स्वतंत्र" आफ़िस, मछुआ बाज़ार कलकत्ता।

यह उपरोक्त "कोचर-शाह तिमिर भास्कर" मेरा अबतक अन्तिम नोटिस है, किंतु एक वर्षसे अधिक हो रहा है इसका कोई उत्तर नहीं मिला। सम्भव है कि शाहजीने "अपने आत्मीय

परिशिष्ट विवरणः—

परिशिष्ट नं० १

श्रीजैनपाठशाला (केवल बालक-पाठशाला) बीकानेरका मेरी मौजूदगीसे आजतक भिन्न भिन्न समयों-का मासिक व्यय लगभग इस प्रकार है :—

(अ) सितम्बर सन् १९२० ई० —

क्रम सं०	नाम अध्यापक आदि	वेतन	विशेष विवरण
१	श्रीयुत मा० श्रीरामजी गुप्त	७०)	नोट १—श्रीयुत पं० हरिकृष्णजी इसी मासमें नियुक्त हुए।
२	,, पं० हरिकृष्णजी	७०)	२—कक्षा ८ तक पढ़ाई होती थी किन्तु कक्षा ७ न थी।
३	,, ,, रमाशंकरजी पांडे	४७)	३—मासिक व्यय ३८५) है।
४	,, मा० रामलोटन प्रसाद	३०)	
५	,, ,, जेठमलजी	२७)	
६	,, पं० जीतमलजी व्यास	२५)	
७	,, पं० कृष्णगोपालजी	२०)	
८	,, ,, मणिलालजी	२५)	
९	प्रथम पाठशाला अध्यापक }	४०)	
१०	द्वितीय ,, ,, }		
११	नौकरोंका वेतन	३०)	
१२	फुटकर व्यय	१०)	

(च) जुलाई सन् १९२१ ई०—

क्रम सं०	नाम अध्यापक आदि	वेतन	विशेष विवरण
१	श्रीयुत बा० बहादुरलालजी बी० ए०	९०)	१—श्रीयुत बा० बहादुरलालजी बी०-ए० इसी मासमें नियुक्त हुए और थोड़े ही दिनोंमें १००) मासिक किया गया।
२	„ „ श्रीरामजी गुप्त	७०)	२—श्रीयुत पं० हरिकृष्णजी त्यागपत्र दे ता० ९-७-२१ को चले गये।
३	„ पं० हरिकृष्णजी	७०)	३—कक्षा ७ तक पढ़ाई होती थी।
४	„ बा० रामलौटन प्रसाद	३७)	४—मासिक व्यय ४४५) है।
५	„ पं० साँगीदासजी व्यास	३५)	
६	„ „ गिरधरदेव चन्दजी	४५)	
७	„ बा०जेठमलजी	२७)	
८	„ पं० हीरालालजी ओझा	२५)	
९	„ „ माणिकचन्दजी ओझा	१५)	
१०	नौकरोंका वेतन तथा फुटकर व्यय	३१)	

(स) जुलाई सन् १६२२ ई०—

क्रम संख्या	नाम अध्यापक आदि	वेतन	विशेष विवरण
१	श्रीयुत मया भाई टी० शाह बी० ए०	१२५)	१—कक्षा ६ तक पढ़ाई होती थी। कक्षा ८ में केवल १ लड़का था जो कक्षा ७ के साथ पढ़ता था, विशेष कभी नहीं पढ़ाया गया, परीक्षा भी कक्षा ७ हीके साथ हुई।
२	„ रामेश्वरदयालजी	७५)	२—मासिक व्यय ५२०) है।
३	„ पन्नालालजी	४५)	
४	„ रामलोटन प्रसाद	४०)	
५	„ साँगीदासजी व्यास	४०)	
६	„ जेठमलजी	३०)	
७	„ मेघराजजी गोस्वामी	२८)	
८	„ शान्तिलालजी धर्माध्यापक	४०)	
६	„ मालचन्दजी	२०)	
१०	„ माणिकचन्दजी ओझा	२०)	
११	नौकरोंका वेतन	२२)	
१२	फुटकर व्यय	१०)	
१३	श्रीयुत मुनीमजी	२५)	

(द) मई सन् १९२३ ई० (कमी मास)—

क्रम संख्या	नाम अध्यापक आदि	वेतन	विशेष विवरण
१	श्रीयुत मया भाई टी० शाह	१२५)	१ - कक्षा ७ तक पढ़ाई होती थी। कक्षा ६ तथा ७ में केवल एक एक विद्यार्थी थे।
२	" रामेश्वरदयालजी	७५)	२- मासिक व्यय ४५२) है।
३	" पन्नालालजी	४५)	
४	" रामलोटन प्रसाद	४०)	
५	" सांगीदासजी व्यास	४०)	
६	" जेठमलजी	३०)	
७	" मालचन्दजी	२०)	
८	" माणिकचन्दजी ओझा	२२)	
९	" मुनीमजी	२५)	
१०	नौकरोंका वेतन	[illegible]	
११	फुटकर व्यय		

(य) दिसम्बर सन् १९२३ (कमीके पश्चात्)—

क्रम-संख्या	नाम अध्यापक आदि	वेतन	विशेष विवरण
१	श्रीयुत चिम्मनलालजी गोस्वामी एम० ए०	१५०)	१ कक्षा ७ तक पढ़ाई होती थी। कक्षा ७ में जो एक ही लड़का था उसको इसी मासमें कक्षा ८ में तरक्की दे कक्षा ८ स्थापित की गई। इस समय कक्षा ६ तथा ७ शून्य पड़ी हुई हैं। २—इसी मासमें शाहजीकी १०) और पं० रामेश्वरदयालजीकी ५) वेतन वृद्धि हुई थी किन्तु द्वितीय महाशयने अस्वीकार कर दिया। ३—मासिक व्यय ५७०) है। ४—ता० १०।११।२३ को १५०) मासिक पर नवीन मुख्याध्यापक नियुक्त हुआ।
२	" मयाभाई टी० शाह बी० ए०	१२५)	
३	" रामेश्वर दयालजी	७५)	
४	" (अमुक)	४०)	
५	" चिम्मनलालजी मीतल	७५)	
६	" मालचन्द जी	२३)	
७	" माणिकचन्दजी ओझा	२५)	
८	" शिवधन जी	२२)	
९	" तृतीय मार्जा	१२)	
१०	" मुनीमजी	२५)	
११	नौकरोंका वेतन	२८)	
१२	फुटकर व्यय	१०)	

(२) दिसम्बर सन् १९२४ ई० (वर्तमान दृश्य)—

क्रम-संख्या	नाम अध्यापक आदि	वेतन	विशेष विवरण
१	श्रीयुत चिम्मनलालजी गोस्वामी एम०ए०	१६५)	१—कक्षा ९ तक पढ़ाई होती है किन्तु कक्षा ८ का पूर्णाभाव है। कक्षा ६में १ तथा ७ में २ विद्यार्थी हैं।
२	,, मयाभाई टी० शाह बी० ए०	१२५)	
३	,, रामेश्वरदयालजी	७५)	
४	,, विष्णुदत्तजी पुरोहित	४०)	२—अगस्त सन् १९२४ ई०मे बिना परीक्षा लिये ही छात्रोंको तरक्की दे कोचर महाशयके सत्यानाशी हाई स्कूलका निर्मूल किया गया।
५	,, चिम्मनलालजी मीतल	२५)	
६	,, मालचन्दजी	२५)	३—आरम्भ सन् १९२४ ई०से प्रतिपदा तथा अष्टमीके बजाय आदित्यवारको छुट्टी होने लगी और गत ग्रीष्मकालसे नियम ७१ का पालन करना उचित तथा सभ्यतानुकूल समझा जाने लगा।
७	,, बाड़ालालजी धर्माध्यापक	४०)	
८	,, माणिकचन्दजी ओझा	२५)	
९	,, द्वितीय वाणिकाध्यापक	१५)	
१०	,, तृतीय ,,	१२)	४—अगस्त सन् १९२४ई०में सन्ध्या समयका संगीत-गलास खोला गया किन्तु न जाने कोचर महाशयकी मनेच्छाचारितामें कौनसी बाधा आ पड़ी कि दो ही तीन दिनके पश्चात् इस कार्यको बन्द करना पड़ा।
११	,, मुनीमजी	२५)	
१२	नौकरोंका वेतन	३२)	
१३	फुटकर व्यय	११)	५—मासिक व्यय ६२५) है।
			६—पाठकगण आदर्श कमीका आनन्द लूट कोचर महाशयको बधाई दें और [illegible]

परिशिष्ट नं० २

श्री जैन पाठशाला बीकानेरके साथ साथ यहाँके अन्य मुख्य मुख्य विद्यालयोंका संक्षिप्त ब्यौरा इसी दिसम्बर सन् १९२४ ई० का लगभग इस प्रकार है :—

क्र०नं०	नाम विद्यालय	कक्षा	छात्र-सं०		मा०व्यय	प्रतिछात्र मा०व्यय	विशेष विवरण
१	श्री जैन पाठशाला	६ ८ ७ ६ ५	१ ० २ ३ ४	१०	४००	४०)	
	कक्षा ४ से मय पालिका तक		१८०		२२५)	१।)	
२	श्री मोहता मूलचन्द विद्यालय	८ ७ ६ ५	६ ८ ७ १४	३५	२०५)	५[illegible])	

	...क्षा ४ से मय घाणिकातक म विद्यालय	—	२३५	३४५)	१।ड)॥	
४	० फे० विद्यालय	...	१६०	१४०)	॥=)	
५	श्रीकृष्ण विद्यालय	...	१४०	१५०)	१-)	इन पाठशालाओंमें लगभग कक्षा ४ तक ही पढ़ाई होती है।
६	अगरचन्द भै० से० स्कूल *	...	१२५	१५०)	१=)	
	(यह भी जैन संस्था है]	...	१००	२५०)	२॥)	

* यहांपर विशेषता यह है कि इतिहास, भूगोल तथा गणितकी शिक्षा नहीं दी जाती है। सुना जाता है कि इन विषयोंको यह संस्था व्यापारके लिये लाभदायक नहीं समझती। यह विचार माननीय है अथवा नहीं—इसका निर्णय पाठकोंपर निर्भर है।

परिशिष्ट नं० ३

श्री जैन पाठशाला बीकानेरके हितार्थ "नियम नं० १७ *" के आधारपर भिन्न भिन्न समयोंपर मेरी मौखिक सम्मतियोंके अतिरिक्त लिखित सम्मतियाँ ये हैं:—

(१)

श्री जैन पाठशाला, बीकानेर,
ता० १३-१०-२०.

श्रीमान् हेडमास्टरजी,

यह निर्विवाद सिद्ध है कि समाचार-पत्रादि पढ़नेसे देश, काल आदिका ज्ञान अधिक होता है और इससे छात्रोंको पठन-पाठनमें विशेष सुविधा होती है किन्तु यहाँपर पत्रोंका बिल्कुल ही अभाव है।

अतः पाठशाला तथा छात्रोंके लाभार्थ दैनिक, साप्ताहिक और मासिक पत्रिकाएँ उचित संख्यामें मँगानेका प्रबन्ध यदि शीघ्र किया जावे तो अत्युत्तम हो।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
रामलौटन प्रसाद, असिस्टेंट मास्टर।

---

(२)

श्री जैन पाठशाला, बीकानेर,
५-१२-२०

श्रीमान् हेडमास्टर साहिब,

प्रार्थनाके समय तमाम छात्रोंका हालमें उपस्थित होना कठि

---

* इस नियम नं० १७ को परिशिष्ट नं० ११ में देखिये।

आवश्यक तथा लाभदायक है। मैं अकसर देखता हूँ कि कतिपय छात्र प्रार्थनाके समय क्लासमें बेकार बैठे रहते हैं अथवा इधर-उधर व्यर्थ घूमा करते हैं।

इसलिए निवेदन है कि तमाम छात्रोंको प्रार्थनाके समय उपस्थित होनेके लिये पूर्ण ताकीद की जावे। यदि इस समयपर अध्यापकगण भी उपस्थित रहें तो और उत्तम हो।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
रामलौटन प्रसाद, असिस्टेण्ट मास्टर।

---

(३)

माननीय हेड्मास्टरजी,
श्री जैन पाठशाला, बीकानेर,
ता० ७-१-२१,

अधिकांश लड़के ऐसी सख्त सर्दीके दिनोंमें पतले तथा गन्दे कपड़े पहन कर आते हैं। इससे सर्दी लग जानेसे भयंकर बीमारी का डर है। इसलिये लड़कोंके स्वास्थ्य-रक्षार्थ हिदायत कर दी जावे कि वे मज़बूत तथा स्वच्छ कपड़े पहनकर पाठशालामें आवें और साथ ही यह भी सूचित कर दिया जावे कि गहने पहनकर पाठशालामें आना सदा अहितकर है।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
रामलौटन प्रसाद, सहायक-अध्यापक।

*(४)

श्रीयुत हेड्मास्टर साहिब,

श्री जैन पाठशाला, बीकानेर,

ता० २५-५-२१,

यहाँपर ता० २३-५-२१ से कक्षा ६ के लड़कोंको जियोमेट्रीके स्थानपर अर्थशास्त्र पढ़ाया जाने लगा है। इसका पढ़ाया जाना उत्तम तो अवश्य है किन्तु इससे लड़के मैट्रिक-परीक्षामें सम्मिलित नहीं हो सकने, क्योंकि मैट्रिकमें जियोमेटरी अनिवार्य विषय है। ऐसी दशामें अर्थशास्त्रका पढ़ाया जाना तभी अच्छा होगा, जब कि मैट्रिक परीक्षामें लड़कोंके भेजनेका विचार न हो।

इसलिये सादर निवेदन है कि लड़कोंके भविष्यपर पूर्ण विचार कर उचित कार्रवाई की जावे।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
रामलौटन प्रसाद।

---

(५)

श्री जैन पाठशाला, बीकानेर,

ता० ५-८-२१,

श्रीमान् हेडमास्टर साहिब,

यदि प्रत्येक अध्यापकका एक एक घण्टा तथा हेडमास्टरका

---

* इस अर्ज़ीके पश्चात् भी मैं प्रायः अपनी मौखिक सम्मति प्रकट करता रहा जिसका फल यह हुआ कि ता० ७-७-२१ से पुनः जियोमेटरी पढ़ाई जाने लगी और इसी कारण आज कक्षा ९ स्थापित हो सकी है।

कमसे कम २ घण्टे ख़ाली रक्खे जावें तो शिक्षण-कार्यमें विशेष लाभ हो सकता है।

आशा है कि मेरे इस विचारपर उचित विचार किया जावेगा।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
रामलौटन प्रसाद, असिस्टेण्ट मास्टर।

---

(६)

श्री जैन पाठशाला, बीकानेर,
ता० ३-१२-२१.

श्रीयुत हेडमास्टर साहिब,

प्रत्येक परीक्षाके लिये पाठशालाकी ओरसे उचित मूल्य लेकर अथवा अमूल्य विद्यार्थियोंको स्याही, निब, होल्डर, काग़ज़ और कॉपी आदि दिये जानेका प्रबन्ध होना निहायत ज़रूरी है। ऐसा न होनेसे कार्यमें अधिक असुविधा रहती है, क्योंकि लड़के बाज़ारसे अकसर रद्दी सामान लाते हैं और कभी कभी उन्हें लाना भी भूल जाते हैं। यदि प्रबन्ध पाठशालाकी ओरसे कर दिया जावे तो बड़ा ही अच्छा हो।

आशा है कि मेरी इस प्रार्थनापर विचार किया जावेगा।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
रामलौटन प्रसाद, सहायक-अध्यापक।

* (७)

श्री जैन पाठशाला, बीकानेर,
ता० १-२-२२

मान्यवर हेडमास्टरजी,

यहांपर कक्षा ३ से गणित आरम्भ होता है इससे छात्र कमज़ोर रह जाते हैं। यदि आगामी सेशनसे कक्षा १ से गणित आरम्भ कर दिया जावे तो गणितमें लड़कोंकी योग्यता उच्च कक्षाओंमें अच्छी रहेगी।

आशा है कि आप इसपर उचित विचार करेंगे।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
रामलौटन प्रसाद, असिस्टेण्ट मास्टर।

---

(८)

श्री जैन पाठशाला, बीकानेर,
ता० २६-१-२२

श्रीयुत हेडमास्टरजी,

साप्ताहिक "छात्र-सभा" के दिन स्कूल-पढ़ाईका काम ५ वें

---

* यह मेरी अर्ज़ी शाहजीकी मौजूदगीकी है। इसका प्रभाव यह हुआ कि आरम्भ सेशन अप्रैल सन् १९२३ ई० कक्षा २ से गणित पढ़ाया जाने लगा। किन्तु कोचर महाशयकी "स्वेच्छाचारिता" तथा शाहजीकी "जी-हुजूरी" के कारण अप्रैल सन् १९२३ ई० से एकदम कक्षा ४ तक गणित बन्द कर दिया गया। अब श्रीयुत पं० चिम्मनलालजी गोस्वामी एम० ए० के समयसे मेरी प्रार्थनाके अनुसार ही कार्रवाई होने लगी है अर्थात् कक्षा १ से गणित पढ़ाया जाने लगा है।

घण्टेके बाद बन्द हो जानेसे अन्तिम दो घण्टोंके विषय शेष रह जानेसे छात्रों तथा अध्यापकोंके कार्य अधूरे रह जाते हैं।

इसलिये सादर प्रार्थना है कि सभाके दिन प्रति घं० ३० मिनटका नियत कर सातों घं० रक्खे जावें और इस दिन जलपान आदिके लिये ५ वें घं० के बाद छुट्टी हुआ करे और सभाका समय ३ बजेसे ४॥ बजेतक रक्खा जावे।

आपका आज्ञाकारी सेवक,

रामलौटन प्रसाद, असिस्टेण्ट मास्टर।

नोट—इस प्रार्थनाको स्वयं शाहजीने स्वीकार किया और इसीके अनुसार कार्य करने लगे।

---

(६)

श्री जैन पाठशाला, बीकानेर,
१-१-१९२३,

श्रीमान् हेडमास्टरजी,

आगामी सेशनके लिये कोर्स आदिके विषयमें अपनी सम्मति प्रकट करता हूँ। आशा है कि स्कूलके लाभार्थ उचित विचार कर कृतार्थ करेंगेः—

१—हिन्दी कोर्स (वार्षिक) :—

प्रारम्भिक कक्षा (अ) प्राइमर + बालविनोद भाग १,
" " (ब) बालविनोद भाग २ और ३,
१ बालविनोद भाग ४ [पूर्वार्ध]।
" २ " " ४ (उत्तरार्ध)।

" ३	" " ५ (गद्य भाग पूर्ण)—१६७ पृष्ठतक। तथा बालबोध व्याकरण आधा।
" ४	हिन्दी प्रवेशिका नवीन+बालबोध व्या० पूर्ण।
" ५	संग्रहशिरोमणि आधी + सत्य हरिश्चन्द्र आधा + व्या०।
" ६	" " पूर्ण + सत्य हरिश्चन्द्र पूर्ण + व्या०।

कक्षा ७ और ८—राज्य करीक्युलमके अनुसार।

२—अंग्रेज़ी कोर्स (वार्षिक):—

कक्षा १	M. N. E. R. Primer I, II.
" २	" " " " Book I.
" ३	" " " " " II.
" ४	" " " " " " III.
" ५	" " " " " IV.
" ६	" " " " " " V.
" ७ और ८	According to state Curriculum.

३—पाठशालाका समय:—

पाठशालाका प्रार्थना-समय—१०.४५ से ११ बजेतक।

पाठशालाकी पढ़ाईका समय ११ बजेसे ४.१० बजेतक हो जिसमें आध घण्टेकी छुट्टी जलपान आदिके लिये रहे। समय विभाग ४० मि० के हिसाबसे ७ घण्टे हों। प्रत्येक अध्या-

पक्का एक घं० खाली हो। अंग्रेज़ी कक्षाके छात्रों
फाके लिये प्रातःकालकी पाठ्यशालामें आना अ
जावे। इससे छात्रोंको ठीक समयपर पाठ्यशालामें
कठिन है और अस्वस्थ्य हो जानेका अधिक भय है।

आपका आज्ञाकारी
रामलौटनप्रसाद, सहायक अ

नोट—कोचर महाशयके हाई स्टैण्डर्डका ध्यान
मैंने अपना मत प्रकट किया है! कोचर महाशयका निर्
इससे विशेष कठिन है। मेरे उक्त विचारपर भला "ठकुर
के अनुयायी शाहजी क्यों ध्यान देने लगें! अब गोस्वा
समयमें मेरे विचारोंका शनैः शनैः आदर होने लगा है।

१०—परीक्षा-सम्बन्धी उपदेश

ता० ७-२-१९२३ को यह लिखित "परीक्षा-सम्बन्धी उपदे
विद्यार्थियोंके लाभार्थ शाहजी के सभापतित्वमें "बालसना
तमाम उपस्थित अध्यापकों तथा छात्रोंके समक्ष समझाया
.इसी प्रकारका किन्तु इससे संक्षिप्त उपदेश इसके पूर्व भी शाह
के सभापतित्वमें छात्रोंको समझाया गया है किन्तु तिसपर भी
खुशामद तथा-चाटुकारिताके अधीन हो शाहजीने लिखते सन
कुछ ध्यान न किया। मुझे पूर्ण आशा है कि उस समयके समस्त
उपस्थित-अध्यापक तथा छात्र मेरी इस लघु सेवाको अबतक स्म
आन्दोलन-काण्डके जारी होते हुए भी न भूले होंगे:—

परीक्षामें बैठना है। समय निकट आ गया है। सब मन्

तरह याद है। जो कुछ त्रुटियाँ हैं वे शीघ्रतासे पूर्ण की जा रही हैं।

परीक्षामें बैठ गये। सब प्रश्नोंको अच्छी तरह किया। ५० फ़ी सदीको कौन कहे ६०, ७० फ़ीसदीसे कम नम्बर किसी भी दशामें आनेकी सम्भावना नहीं—इधर-उधर घूमघामकर गाल बजा रहे हैं कि पास तो हो ही जायँगे —किन्तु !" आश्चर्य है कितने परीक्षार्थी जो पास होनेके योग्य न थे वे तो पास हो गये और जिनकी पूर्ण आशा थी वे फ़ेल हो गये—आश्चर्य, अवश्य अन्याय हुआ है। उत्तर तो ऐसी शान के साथ डटकर लिखा कि परीक्षक उत्तरकी उत्तमताको देख दङ्ग हो जायगा किन्तु इस समय तो हम ही दङ्ग हो गये हैं।

फेल होनेके कारण:—

तैयारी ठीक नहीं रहती, बराबर पढ़ा नहीं रहता है, याद तो खूब रहता है किन्तु उत्तर लिखनेका ढङ्ग मालूम नहीं रहता।

प्रश्नोंका उत्तर कैसे देना चाहिये—

(१) प्रश्नपत्रको बहुत सावधानी और धीरताके साथ पढ़ो। प्रश्नपत्रको तो सभी पढ़ते हैं किन्तु ध्यानपूर्वक पढ़नेवाले बहुत कम होते हैं। पत्रको एक बार ज्यों त्यों पढ़ा बस क़लम उठाकर लिखना आरम्भ कर दिया, किन्तु ऐसा कदापि नहीं करना चाहिये। प्रथम तो प्रश्नपत्रको ध्यान और धीरजसे पढ़ो, कितने प्रश्न करने हैं, समय कितना है, कौनसा प्रश्न कितने महत्वका है, प्रश्नकी महत्ता नम्बरपर निर्भर है! इन सब बातोंको विचारकर

पकका एक घं० खाली हो। अंग्रेज़ी कक्षाके लड़कोंका वाणिकाके लिये प्रातःकालकी पाठशालामें आना अनिवार्य न रक्खा जावे। इससे छात्रोंको ठीक समयपर पाठशालामें पहुँचना अति कठिन है और अस्वस्थ्य हो जानेका अधिक भय है।

आपका आज्ञाकारी सेवक,

रामलौटनप्रसाद, सहायक अध्यापक।

नोट—कोचर महाशयके हाई स्टूयाण्डर्डका ध्यान रखते हुए मैंने अपना मत प्रकट किया है! कोचर महाशयका निर्धारित कोर्स इससे विशेष कठिन है। मेरे उक्त विचारपर भला "ठकुरसुहाती" के अनुयायी शाहजी क्यों ध्यान देने लगें ? अब गोस्वामीजीके समयमें मेरे विचारोंका शनैः शनैः आदर होने लगा है।

१०—परीक्षा-सम्बन्धी उपदेश

ता० ७-२-१९२३ को यह लिखित "परीक्षा-सम्बन्धी उपदेश" विद्यार्थियोंके लाभार्थ शाहजी के सभापतित्वमें "बालसभा"में तमाम उपस्थित अध्यापकों तथा छात्रोंके समक्ष समझाया और इसी प्रकारका किन्तु इससे संक्षिप्त उपदेश इसके पूर्व भी शाहजीके सभापतित्वमें छात्रोंको समझाया गया है किन्तु तिसपर भी खुशामद तथा-चाटुकारिताके अधीन हो शाहजीने लिखते समय कुछ ध्यान न किया। मुझे पूर्ण आशा है कि उस समयके समस्त उपस्थित अध्यापक तथा छात्र मेरी इस लघु सेवाको भवतक इस आन्दोलन-काण्डके जारी होते हुए भी न भूले होंगे:—

परीक्षामें बैठना है। समय निकट आ गया है। सब अच्छी

तरह याद हैं। जो कुछ त्रुटियाँ हैं वे शीघ्रतासे पूर्ण की जा रही हैं।

परीक्षामें बैठ गये। सब प्रश्नोंको अच्छी तरह किया। ५० फ़ी सदीको कौन कहे ६०, ७० फ़ीसदीसे कम नम्बर किसी भी दशामें आनेकी सम्भावना नहीं—इधर-उधर घूमघामकर गाल बजा रहे हैं कि पास तो हो ही जायँगे —किन्तु !" आश्चर्य है जितने परीक्षार्थी जो पास होनेके योग्य न थे वे तो पास हो गये और जिनकी पूर्ण आशा थी वे फेल हो गये—आश्चर्य, अवश्य अन्याय हुआ है। उत्तर तो ऐसी शान के साथ डटकर लिखा कि परीक्षक उत्तरकी उत्तमताको देख दङ्ग हो जायगा किन्तु इस समय तो हम ही दङ्ग हो गये हैं।

फेल होनेके कारण:—

तैयारी ठीक नहीं रहती, बराबर पढ़ा नहीं रहता है, याद तो खूब रहता है किन्तु उत्तर लिखनेका ढङ्ग मालूम नहीं रहता।

प्रश्नोंका उत्तर कैसे देना चाहिये—

(१) प्रश्नपत्रको बहुत सावधानी और धीरताके साथ पढ़ो। प्रश्नपत्रको तो सभी पढ़ते हैं किन्तु ध्यानपूर्वक पढ़नेवाले बहुत कम होते हैं। पत्रको एक बार ज्यों त्यों पढ़ा बस क़लम उठाकर लिखना आरम्भ कर दिया, किन्तु ऐसा कदापि नहीं करना चाहिये। प्रथम तो प्रश्नपत्रको ध्यान और धीरजसे पढ़ो, कितने प्रश्न करने हैं, समय कितना है, कौनसा प्रश्न कितने महत्वका है, प्रश्नकी महत्ता नम्बरपर निर्भर है! इन सब बातोंको विचारकर

उत्तर लिखना आरम्भ करना चाहिये। समयकी पूर्ण क़दर करना, ऐसा नहीं कि ३ घण्टेका प्रश्न एक घण्टेमें कर दिया। बस बलो बला टली। किन्तु ऐसा स्वप्नमें भी न करना वरन् जन्मभर पछताना पड़ेगा। सरल प्रश्नको पहिले, कठिन प्रश्नको अन्तमें, और सोचनेवाले प्रश्नको समय बचनेपर करना उचित है। सरल प्रश्नोंको सन्तोष-पूर्वक करनेसे उत्साह और शान्ति रहती है, जिनकी विशेषतः परीक्षामें अत्यन्त आवश्यकता है। ; यदि एक पर्चा बिगड़ जावे तो व्यर्थकी चिन्ता न करना, भविष्यकी बात देखना उत्तम है।

(२) पर्चेको ध्यानपूर्वक पढ़नेके बाद, इस बातको देखो कि किसी प्रश्नका उत्तर लिखनेके पहले तुम उसे ठीक समझते हो या नहीं। अशोकका चरित्र कैसा था? लड़के उत्तर लिखते हैं, उसके राज्यकी घटनाएँ तथा फ़तह इत्यादि। इस प्रकार ५ मिनटके २५ मिनट नष्ट करते हैं और नम्बर एक भी नहीं पाते। इसीको *नासमझी* कहते हैं।

(३) प्रश्नका ठीक अर्थ समझनेके बाद और उसका उत्तर लिखनेके पहले, "पूरा उत्तर" अपने मनमें पहले सोच लो। यदि ऐसा न करोगे तो मुमकिन है कि असल उत्तरको छोड़ ऊटपटाङ्ग उत्तर लिख कर व्यर्थमें मूर्ख बनो।

(४) उत्तर निश्चय कर लेनेपर, लिखनेके पहले,, प्रत्येक वाक्यकी रचना अपने मनमें कर डालो। ऐसा न करनेसे व्याकरण सम्बन्धी भूलेकों अशुद्धियाँ होती हैं, जिनसे महा अनर्थ हो जाते हैं।

(५) अपने अर्थको बहुत ही सरल और स्पष्ट शब्दोंके द्वारा प्रकट करो। ऐसा करनेसे तुम्हारा भाव परीक्षक सरलतासे समझ सकेगा। शब्द, वाक्य आदि साधारण तथा सरल हों।

(६) भाव संक्षेपमें लिखनेका ध्यान रक्खो—यह केवल लगातार अभ्यासपर निर्भर है।

(७) सुन्दरतासे लिखनेका ध्यान रक्खो। यदि अभाग्यवश समय कम है तो १० प्रश्नोंमेंसे ८ या ६ ही प्रश्नोंको करो किन्तु जो लिखो सो साफ़ लिखो।

(८) एक एक प्रश्न करते जाओ और जो कुछ लिखा है उसे दोहराते जाओ। दोहरानेसे अशुद्धियाँ मालूम हो जाती हैं। दोहराना अच्छा है, सम्भव है कि सब प्रश्न करनेके बाद तुम्हें दोहरानेका मौक़ा न मिले।

(९) केवल वही बात लिखो जिसे तुम निश्चयपूर्वक जानते हो, अटकल लगाना अच्छा नहीं। परीक्षकको धोका देना अच्छा नहीं, परीक्षकको मूर्ख न समझना चाहिये। परीक्षकको केवल नम्बर देनेकी मशीन नहीं समझना चाहिये। उसमें अवश्य कुछ न कुछ बुद्धिका विकाश रहता है।

(१०) जिस शब्द अथवा वाक्यसे दो अर्थ निकलते हों, उसका प्रयोग कदापि न करो। जिस बातको तुम असलमें नहीं जानते हो, उसे तुम जानते हो ऐसा परीक्षकको मत जताओ।

सारांश—

बस, प्रश्नोंका उत्तर लिखते समय, उपरोक्त दस बातोंका

विचार रखो। सावधानी और बुद्धिमानीसे काम लो, ईमानदारीसे अपनी योग्यता दिखानेका प्रयत्न करो। पर्चेको सावधानी और धीरजके साथ पढ़ो। जो कुछ और जितना तुमसे पूछा गया है उतना ही लिखो। अटकल मत बाँधो और परीक्षकको धोखा मत दो।

अन्य आवश्यकीय बातें—

सामान—२ क़लम, २ होल्डर, २ पेंसिल, १ चाकू, २-४ अच्छी अच्छी निबें, १ रूमाल, अच्छी तथा चलती स्याही, कॉपी (प्रश्नोत्तर-पत्र) सुन्दर तथा स्वच्छ किन्तु पर्चे अलग अलग न हों। प्रश्न लिखनेका काग़ज़ साफ़ और सुथरा हो, काग़ज़पर पहलेसे कुछ भी न लिखो। प्रश्न लिखनेके लिये काफ़ी काग़ज़ लाओ। प्रश्नको अच्छी तरह ध्यानसे सुनकर लिखो। कॉमा आदितक चिन्ह छूटने न पावें।

समय—नियत समयसे कमसे कम १५ मिनट पहले परीक्षा-स्थानपर उपस्थित होना उचित है। परीक्षा-स्थानको निर्धारित समयके पहले छोड़ना किसी भी हालतमें लाभदायक नहीं है। समयसे पहले जल्दी-जल्दी काम करके परीक्षा-भवनसे चला जाना अति हानिकारक है। परीक्षाभवनमें, नियत समयसे पहले अपने आवश्यकीय कार्योंसे निवृत्त होकर, शान्तिपूर्वक बैठना चाहिये। यदि कोई आवश्यकता पड़े तो निरीक्षकसे आज्ञा लेकर जा सकते हैं। यदि किसी वस्तुकी आवश्यकता पड़े तो चुप-चाप अपने स्थानपर खड़े हो जाओ—शीघ्र तुम्हारी उचित आवश्यकता पूर्ण कर दी जावेगी।

गणित—चिह्नोंपर पूर्ण ध्यान रक्खो। अंकोंको ठीक ठीक लिखो। ऐसा नहीं कि + के स्थानमें — और — के स्थानमें + या ×, + आदि कर दिया। अथवा १५ के स्थानमें ५१ या ७२ के स्थानमें २७ कर दिया—विशेष और पूर्ण ध्यान रहे।

उत्तर लिखनेके नियम — उत्तर पुस्तकका चौथा भाग किनारा छोड़ दो। किनारे पर केवल प्रश्नकी क्रम-संख्या ही लिखो। पृष्ठके दाहिने तरफ़ केवल एक ही ओर लिखो। बायें पृष्ठपर गुणा, भाग आदि क्रिया रफ़के तौरपर कर सकते हो—उत्तर-पत्रका केवल दाहिना ही पृष्ठ देखा जाता है, इससे सुन्दरताके साथ लिखो। एक पृष्ठपर केवल एक ही प्रश्न करो। हाँ, यदि एक प्रश्नके अ, ब, स, आदि कई भाग हों तो उन्हें एक पृष्ठपर कर सकते हो। यदि कोई उत्तर अशुद्ध जान पड़े और परीक्षकको दिखाना न चाहो तो चारों कोनोंसे दो लकीरोंद्वारा काट दो।

इनपर विशेष ध्यान दें—

चाँद, संदूक़, लड़का, पढ़ना, विद्या, चाक़ी, ., ०, विशेष, प्रशंसा आदि आदि। ~~इतीहास~~ इतिहास, ~~बन्दुक~~ बन्दूक, नहीं, नहीं, ताक़, ता० । Receive, Relieve, Radius, Previous, mathematics, Arithmetic, algebraical, Separate, boundary, history, infantry, centre and factor etc.

नोट—यदि उपर्युक्त परिशिष्ट नं० ३ का कुछ भी ध्यान होता, तो शाहजी अपने नोटिसोंमें ये अनर्गल बातें कदापि न लिखते—

(१) मेरे लिये नियम नं० ६७ की अवहेलना बताना, सेवा-कालमें सत्यका पक्ष छोड़ना आदि आदि।

(२) परीक्षाके समय * गुप्त रूपसे सहायता आदि देनेका स्वप्न देखना।

(३) कर्त्तव्यपालनकी हत्यारूप आप (रामलौटन प्रसाद) की तीन वर्षतक चुपचापी ....।

यह शाहजीके "आत्मीय शुद्ध भावों" का चमत्कार है—शाहजीने स्पष्ट सिद्ध कर दिया है कि चाटुकारिताके वशीभूत होनेसे मनुष्यको सत्यासत्यका विचार लेशमात्र भी नहीं रहता। सत्य है—"सत्यसे डिगा कि दीन व दुनिया दोनोंसे गया।"

परिशिष्ट नं० ४

मेरी नियुक्ति (ता० २५-८-१९२०) से आजपर्यन्त श्री जैन पाठशाला बीकानेरसे इस प्रकार अध्यापकगण पृथक् हुए हैं—

१—स्वर्गवासी श्रीयुत पं० जीतमलजी व्यास—आप एक परिश्रमी, सदाचारी तथा कर्त्तव्य-परायण नवयुवक अध्यापक थे। कोचर महाशयके कारण विना किसी नोटिस आदिके अकारण ही आप पाठशालासे एकदम विदा हो गये। क्यों न हो, कोचर महाशय पूर्ण न्यायकारी जो ठहरे!

२—श्रीयुत पं० कृष्णगोपालजी—आप कोचर महाशयके दूसरे शिकार हैं।

*यहांपर शाहजीने, अपने कर्त्तव्य-पालनका पूर्ण परिचय दिया है। देखो परिशिष्ट नं० ११, नियम नं० ८४।

३—श्रीयुत पं० रमाशङ्करजी पाण्डेय विशारद—आपकी नियुक्ति यहाँपर ता० ७-२-११ ई० को ३५) मासिकपर हुई थी। इनकी योग्यताका प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि लगभग दो ही वर्षके अन्दर ४१) मासिक पाने लगे थे। इन्होंने फ्लैग ड्रिल, स्काउटिङ्ग, देशी व्यायाम, संगीतद्वारा प्रार्थना आदि आदिका प्रचार कर पाठशालाको उन्नत बनानेके लिये पूर्ण चेष्टा की थी और सफलता भी हुई थी। इनके उत्साहको देखकर विद्या-प्रेमी श्रीयुत सेठ उदयचन्दजी रामपुरियाने लड़कोंके लिये यूनीफ़ॉर्म बनानेमें विशेष सहायता दी थी किन्तु दयालु तथा न्यायी कोचर महाशयकी समय समयकी उदासीनताने इन प्रशंसनीय कार्योंपर हरताल फेर इन्हें सदाके लिये निर्मूल कर दिया। आप स्त्रीके सख्त बीमार होनेपर उसे घर ले गये। ऐसी अवस्थामें छुट्टीका हक़ रहते हुए भी कोचर महाशयने अनेकों झंझटें पैदा कीं। अतः इनके स्वेच्छापूर्ण व्यवहारोंसे तङ्ग आकर त्यागपत्र दे पाठशालासे पृथक् हो गये। कोर्ट आदिकी धमकीपर परम दयालु तथा आदर्श सज्जन कोचर महाशयने पृथक् होनेके पश्चात् स्वयं बुलाकर शेष वेतन छुट्टी आदिका अदा किया। क्या ही अच्छा होता यदि कोचर महाशय इनके त्याग-पत्रको प्रकट कर जनताको कृतार्थ करते! आजकल आप श्री डूँगर कॉलेज रियासत बीकानेरमें एक सहायक अध्यापक हैं।

४—श्रीयुत पं० मणिलालजी यति—आप यहाँपर धर्माध्यापक थे। छात्रोंको धर्मकी शिक्षा सुचारु रूपसे दिया करते थे।

किसी प्रकारकी कोई त्रुटि सुनने तथा देखनेमें न आयी। आपमें चापलूसी आदिका पूर्णाभाव था—केवल कर्त्तव्यपरायणताको मुख्य समझते थे। अतः कोचर महाशयके एक मासके नोटिस पर शिकार हो गये।

५ श्रीयुत पं० हरिकृष्णजी—आप सितम्बर सन् १९२० ई० में यहाँ ७०) मासिकपर अध्यापक नियुक्त हुए। आप बड़े अध्यवसायी तथा आदर्श अध्यापक थे। छात्रोंके चरित्र-सुधारकी ओर आपका विशेष प्रेम था। अध्यापकों तथा छात्रोंके प्रति आपका पवित्र प्रेम अनुकरणीय था। आप कर्त्तव्य-परायण तथा शान्ति प्रकृतिके नवयुवक थे। आप ही यहाँकी "छात्र-सभा" के पुनर्जन्मदाता हैं। आपने जुलाई सन् १९२१ ई० में सी० टी० कालेजमें अध्ययन करनेके लिये त्याग-पत्र दिया। ऐसे शुभावसरपर प्रसन्नतापूर्वक सादर विदा करना तो दूर रहा प्रत्युत पूर्ण स्वच्छन्दताके साथ कोचर महाशयने ता० ५-७-२१ को इनका त्याग-पत्र गीदड़भपकी देते हुए मंजूर कर अपनी सभ्यता, नम्रता तथा दयालुताका दृश्य उपस्थित किया। आजकल आप बीकानेर राज्यके सर्दारशहर स्कूलमें सेकण्ड मास्टर हैं।

६—श्रीयुत पं० सूर्य्यकरणजी आचार्य्य बी० ए०—आप यहाँहीके निवासी हैं। आप शान्ति-प्रिय तथा विचारशील पुरुष हैं। आपका ध्यान सुधारमें विशेष रहता है। इस पाठशालाकी स्थिति सुधारनेके हेतु ही आपने जून और जुलाई सन् १९२१ ई० में लगभग दो मासतक यहाँपर अवैतनिक कार्य किया। आप

ऑनरेरी हेड मास्टर थे। आप हिन्दूविश्वविद्यालय काशीसे एम० ए० की उपाधि प्राप्त कर आजकल बीकानेर राज्यके हाई-कोर्टके रजिस्ट्रार हैं।

७—श्रीयुत बा० भागवतसिंहजी विशारद—आप यहाँपर हिन्दीके अध्यापक थे। पूर्णरूपसे अपना कर्त्तव्यपालन करते थे। इनके कार्यमें कभी किसी प्रकारकी त्रुटि नहीं पायी गयी। तमाम छात्र इनके सद्व्यवहारसे पूर्ण सन्तुष्ट थे। आप अपने चचाकी बीमारीका समाचार पा छुट्टी ले घर गये। चचाके शीघ्र स्वस्थ न होनेपर पुनः छुट्टीकी प्रार्थना की किन्तु बा० बहादुरलालजी बी० ए० हेड्मास्टरकी सिफ़ारिशपर भी कोचर महाशयने अवैतनिक छुट्टीतक ऐसी दशामें स्वीकार न की और शीघ्र आनेके लिये नादिरशाही ऑर्डर लिख भेजा। ऐसी अवस्थामें चचाको छोड़कर आना कहाँतक सम्भव है। पाठकगण स्वयं विचार करें। अतः कोचर महाशयके इस व्यवहारपर उन्होंने त्याग-पत्र भेज पाठशालासे सम्बन्ध तोड़ लिया। यह कोचर महाशयके अलौकिक न्याय तथा दयालुताका आदर्श नमूना है। कोचर महाशयकी सज्जनता तो इसीमें है कि यह इनके त्याग-पत्रको जनताके विचारार्थ प्रकट कर दें।

८-श्रीयुत बा० श्रीरामजी गुप्त—आपकी नियुक्ति यहाँपर मुझसे बहुत पहले हुई थी। आप कुछ समयतक प्रधानाध्यापक थे। आप अपने कार्यको अच्छी तरह संचालन करते थे। आप अपने प्यारे भतीजेकी बीमारीका समाचार पा छुट्टी ले

किसी प्रकारकी कोई त्रुटि सुनने तथा देखनेमें न आयी। आपमें चापलूसी आदिका पूर्णाभाव था—केवल कर्त्तव्यपरायणताको मुख्य समझते थे। अतः कोचर महाशयके एक मासके नोटिस-पर शिकार हो गये।

५ श्रीयुत पं० हरिकृष्णजी—आप सितम्बर सन् १९२० ई० में यहाँ ७०) मासिकपर अध्यापक नियुक्त हुए। आप बड़े व्यवसायी तथा आदर्श अध्यापक थे। छात्रोंके चरित्र-सुधारकी ओर आपका विशेष प्रेम था। अध्यापकों तथा छात्रोंके प्रति आपका पवित्र प्रेम अनुकरणीय था। आप कर्त्तव्य-परायण तथा शान्ति प्रकृतिके नवयुवक थे। आप ही यहाँकी "छात्र-सभा" के पुनर्जन्मदाता हैं। आपने जुलाई सन् १९२१ ई० में बी० टी० कालेजमें अध्ययन करनेके लिये त्याग-पत्र दिया। ऐसे शुभावसरपर प्रसन्नतापूर्वक सादर विदा करना तो दूर रहा प्रत्युत पूर्ण स्वच्छन्दताके साथ कोचर महाशयने ता० ५-७-२१ को इनका त्याग-पत्र शीघ्रतयकी देते हुए मंजूर कर अपनी सभ्यता, नम्रता तथा दयालुताका दृश्य उपस्थित किया। आजकल आप बीकानेर राज्यके सर्दारशहर स्कूलमें सेकण्ड मास्टर हैं।

६—श्रीयुत पं० सूर्य्यकरणजी आचार्य्य बी० ए०—आप यहींके निवासी हैं। आप शान्ति-प्रिय तथा विचारशील पुरुष हैं। आपका ध्यान सुधारमें विशेष रहता है। इस पाठशालाकी स्थिति सुधारनेके हेतु ही आपने जून और जुलाई सन् १९२१ ई० में यहाँपर अवैतनिक कार्य किया। आप

ऑनरेरी हेड मास्टर थे। आप हिन्दूविश्वविद्यालय काशीसे एम० ए० की उपाधि प्राप्त कर आजकल बीकानेर राज्यके हाई-कोर्टके रजिस्ट्रार हैं।

७—श्रीयुत बा० भागवतसिंहजी विशारद—आप यहाँपर हिन्दीके अध्यापक थे। पूर्णरूपसे अपना कर्त्तव्यपालन करते थे। इनके कार्यमें कभी किसी प्रकारकी त्रुटि नहीं पायी गयी। तमाम छात्र इनके सद्व्यवहारसे पूर्ण सन्तुष्ट थे। आप अपने चचाकी बीमारीका समाचार पा छुट्टी ले घर गये। चचाके शीघ्र स्वस्थ न होनेपर पुनः छुट्टीकी प्रार्थना की किन्तु बा० बहादुरलालजी बी० ए० हेडमास्टरकी सिफ़ारिशपर भी कोचर महाशयने थोड़े तनिक छुट्टीतक ऐसी दशामें स्वीकार न की और शीघ्र आनेके लिये नादिरशाही ऑर्डर लिख भेजा। ऐसी अवस्थामें चचाको छोड़कर आना कहाँतक सम्भव है। पाठकगण स्वयं विचार करें। अतः कोचर महाशयके इस व्यवहारपर उन्होंने त्याग-पत्र भेज पाठशालासे सम्बन्ध तोड़ लिया। यह कोचर महाशयके अलौकिक न्याय तथा दयालुताका आदर्श नमूना है। कोचर महाशयकी सज्जनता तो इसीमें है कि वह इनके त्याग-पत्रको जनताके विचारार्थ प्रकट कर दें।

८—श्रीयुत बा० श्रीरामजी गुप्त—आपकी नियुक्ति यहाँपर मुझसे बहुत पहले हुई थी। आप कुछ समयतक प्रधानाध्यापक थे। आप अपने कार्यको अच्छी तरह संचालन करते थे। आप अपने प्यारे भतीजेकी बीमारीका समाचार पा छुट्टी ले

किसी प्रकारकी कोई त्रुटि सुनने तथा देखनेमें न आयी। आपमें चापलूसी आदिका पूर्णाभाव था—केवल कर्त्तव्यपरायणताको मुख्य समझते थे। अतः कोचर महाशयके एक मासके मोहिस-पर शिकार हो गये।

५ श्रीयुत पं० हरिकृष्णजी—आप सितम्बर सन् १९२० ई० में यहाँ ७०) मासिकपर अध्यापक नियुक्त हुए। आप बड़े अध्यवसायी तथा आदर्श अध्यापक थे। छात्रोंके चरित्र-सुधारकी ओर आपका विशेष प्रेम था। अध्यापकों तथा छात्रोंके प्रति आपका पवित्र प्रेम अनुकरणीय था। आप कर्त्तव्य-परायण तथा शान्ति प्रकृतिके नवयुवक थे। आप ही यहाँकी "छात्र-समा" के पुनर्जन्मदाता हैं। आपने जुलाई सन् १९२१ ई० में सी० टी० कालेजमें अध्ययन करनेके लिये त्याग-पत्र दिया। ऐसे शुभावसरपर प्रसन्नतापूर्वक सादर विदा करना तो दूर रहा प्रत्युत पूर्ण स्वच्छन्दताके साथ कोचर महाशयने ता० ५-७-२१ को इनका त्याग-पत्र गीदड़भपकी देते हुए मंजूर कर अपनी सभ्यता, नम्रता तथा दयालुताका दृश्य उपस्थित किया। आजकल आप बीकानेर राज्यके सर्दारशहर स्कूलमें सेकण्ड मास्टर हैं।

६—श्रीयुत पं० सूर्यकरणजी आचार्य्य बी०ए०—आप यहाँ-हीके निवासी हैं। आप शान्ति-प्रिय तथा विचारशील पुरुष हैं। आपका ध्यान सुधारमें विशेष रहता है। इस पाठशालाकी स्थिति सुधारनेके हेतु ही आपने जून और जुलाई सन् १९२१ ई० में लगभग दो मासतक यहाँपर अवैतनिक कार्य किया। आप

ए०) को १२५) मासिकपर ता० २१-१२-२१ को नियुक्त कर लिया। जब आप अपनी छुट्टीके पश्चात् ता० २६-१२-२१ को पाठशालामें उपस्थित हुए तो यह अचानक तथा विलक्षण परिवर्तन देख अवाक् रह गये। पूछताछ करनेपर कोचर महाशयने अपनी स्वेच्छाचारिता तथा स्वच्छन्दताका परिचय देते हुए आपको *स्थायी*से *अस्थायी* बतलाया। भला इस धींगाधींगीको एक सच्चा कर्त्तव्यपरायण तथा आत्माभिमानी वीर नवयुवक चुपचाप कैसे सहन कर सकता है ! अतः आपने दूसरे ही दिनसे पाठशाला छोड़ दी। अपने रुपयेके लोभसे नहीं किन्तु कोचर महाशयकी स्वेच्छाचारिता निर्मूल करनेके लिये सद्भावसे बीकानेर कोर्टमें दावा कर अपनेको स्थायी सिद्ध किया और कोचर महाशयकी स्वेच्छाचारिताके कारण पाठशालाके ऊपर २००) से अधिककी डिग्री हुई (देखिये परिशिष्ट नं० ८)।

१०—श्रीयुत पं० गिरधरदेवचन्दजी दोसी—आप यहाँपर ४५) मासिक पर धर्माध्यापक थे। आप कर्त्तव्यपरायण, विचारशील तथा शान्ति-प्रिय आदर्श धर्माध्यापक थे। विद्यार्थियोंको धार्मिक पथपर दृढ़ रहनेकी पूर्ण चेष्टा करते थे। आपको अकारण ही अप्रैल सन् १९२२ ई० में एक मासके नोटिसपर कोचर महाशयने पाठ्शालासे विदा कर दिया। आपकी अयोग्यता आदिका परिचय इसीसे मिलता है कि कमेटीने विदा होते समय आपको ४५) भेंटस्वरूप प्रदान किया था। इनकी जुदाईसे तमाम स्टाफ़ अति दुःखी था।

उसको देखनेके लिये घर गये। अभाग्यवश उनका प्यारा भतीजा कुटुम्बियोंको शोक-सागरमें छोड़ स्वर्गवासी हो गया। ऐसी दुःखमय व्यस्थाके उपस्थित होनेपर उन्होंने नियमानुसार छुट्टीकी अर्ज़ी भेजी। छुट्टी मंजूर करनेके लिये बा० बहादुरलालजी बी० ए० हेड्मास्टरने बहुतेरा कहा किन्तु न्यायशील, दयालु, आदर्श सज्जन कोचर महाशयने करुणासे बाध्य हो शीघ्र उपस्थित होनेको लिख अलौकिक सहानुभूति प्रकट की। भला ऐसी परिस्थितिमें "उपस्थित" शब्दका प्रयोग कहाँतक करुणा तथा नम्रतापूर्ण है, विचारशील सज्जन स्वयं मनन करें। अतः अन्तमें कोचर महाशयने डिसमिसल (Dismissal) ऑर्डर भेज उन्हें शान्ति प्रदान कर अपने दयालुताका अलौकिक परिचय दिया। यही कोचर महाशयकी दयालुता आदिके चिन्ह हैं।

६—श्रीयुत बा० बहादुरलालजी बी० ए०—आप ता० २१-३-२१ को यहाँपर ६०) मासिकपर हेड्मास्टर नियुक्त हुए। थोड़े ही दिनोंके पश्चात आपका कार्य सन्तोषजनक होनेसे १००) मासिक किया गया। आप बड़े कर्त्तव्यपरायण, उत्साही तथा पाठशालाके पूर्ण शुभचिन्तक थे। आपमें चापलूसी और चाटुकारिता आदिकी बूतक न थी। यही कारण था कि आपसे कोचर महाशय हृदयसे प्रसन्न न थे। किसी आवश्यक कार्यवश दिसम्बर सन् १९२१ ई० में १० दिनकी इत्तफ़ाक़िया छुट्टी ले आप घर चले गये। इसी बीचमें कोचर महाशयने अपने स्वभावानुकूल एक दूसरे नये हेड्मास्टर (बा० मया भाई टी० शाह बी०

वेतन-वृद्धि कभी नहीं हुई। अन्तमें पूर्ण असन्तुष्टताके साथ आप ता० २-११-२२ को पाठशालासे जुदा हो गये। इस समय आप राज्यके श्रीवास्टर मोगुल स्कूलमें एक सहायक अध्यापक हैं।

१५—श्रीयुत पं० साँगोदासजी व्यास विशारद—आप यहाँपर जुलाई सन् १९२१ ई० में ३५) मासिकपर अध्यापक नियुक्त हुए। आप बड़े परिश्रमी, उत्साही तथा पाठशालाके शुभचिन्तक थे। आपका कार्य सदा सन्तोषदायक था। अप्रैल सन् १९२२ ई० में आपके वेतनमें ५) की वृद्धि की गयी। इतने योग्य होनेपर भी आपके साथ समय समयपर स्वेच्छाचारिताका व्यवहार किया गया है जैसा कि आन्दोलन-नोटिसोंमें संक्षेपतः प्रकट किया गया है। आपने "तार" के आधारपर अपने भाईकी बीमारीके कारण एक मासकी छुट्टी माँगी। लगभग १॥ मासकी वैतनिक छुट्टीका हक होते हुए भी ऐसी अवस्थामें बड़ी कठिनाईके साथ बम्बई जैसी लम्बी यात्राके लिये केवल १० दिनकी छुट्टी मंजूर हुई। आप यहाँसे ता० २१-५-२३ को हेडमास्टर (शाहजी) को पत्रद्वारा सूचित कर बीमार भाईके पास बम्बई रवाना हो गये। इस पत्रपर शाहजीके विचित्र रिमार्क विचारणीय हैं (देखिये परिशिष्ट नं० ६)। बम्बईसे ऐसी अवस्थामें समयके भीतर वापिस आना असम्भव जान वहाँसे आपने एक मासकी छुट्टीकी अर्जी भेजी। इसपर कोषर महाशयने वहाँ नादिरशाही ऑर्डर लिख मारा कि चाहे जो हो ऑर्डर पाते ही फौरन हाज़िर पाठशाला हो, परन्तु अपनेको मौकूफ़ (Dismissed) समझो। इस

११—श्रीयुत बा० माधवलालजी भार्गव आप अस्थायी तौरपर यहाँ अध्यापक नियुक्त हुए किन्तु इनको उड़ाते क्या देर लगती थी। लगभग एक ही सप्ताहमें, "भेड़िया और मेमनाकी कहानीके आधारपर कि तू मेरा पानी गन्दा करता है," कोचर महाशयने पाठशालासे विदाईका उपहार दे दिया।

१२—श्रीयुत पं० केवलचन्दजी खन्ना—आप यहाँपर हिन्दी तथा वाणिज्य पढ़ानेके लिये अध्यापक नियत हुए थे किन्तु थोड़े ही महीनोंके पश्चात् यह भी लगभग दो सप्ताहके नोटिसपर कोचर महाशयके शिकार हो गये।

१३—श्रीयुत ब्रह्मचारी शान्तिलालजी जैन—आप यहाँपर ४०) मासिकपर धर्माध्यापक नियत होकर आये थे, किन्तु भला ब्रह्मचारीजी तथा कोचर—शाहसे कबकी पटनेवाली! लगभग दो ही मासके पश्चात् आप स्वयं यहाँसे सन्तुष्ट हो कोचर—शाहके व्यवहारोंकी भूरि भूरि प्रशंसा करते हुए चले गये।

१४—श्रीयुत पं० मेघराजजी गोस्वामी—आप ता० २-११-२१ को यहाँपर अध्यापक नियत हुए। आप सदाचारी तथा शान्ति-प्रिय नवयुवक थे। आपसे सारा स्टाफ़ प्रसन्न था। आपकी हिन्दी तथा संस्कृतकी योग्यता विशेष प्रशंसनीय है। अपने कर्त्तव्यपालनमें सदा दत्तचित्त रहते थे। आपका कार्य सर्वदा अति प्रशंसनीय था। आपके काममें कभी कोई त्रुटि नहीं पायी गयी और न अलग होनेके पहले कोई प्रतिकूल रिमार्क ही निकला था। पूर्णतया सन्तोषदायक कार्य होनेपर भी यथेष्ट

सिद्धान्तानुसार एक दिन मेरे सत्यासत्य विचारोंका भेद अवश्य खुल जायगा और यह भी विदित हो जायगा कि मेरा आन्दोलन वास्तवमें किस लिये हुआ है—पेटके लिये अथवा सत्य-प्रकाशके लिये! सच्चा तथा निष्पक्ष परीक्षक ही वास्तवमें ईश्वर-भक्त, राज-भक्त, देश-भक्त तथा समाज-भक्त कहा जा सकता है; और सच्चा परीक्षार्थी वही है जो अपने निर्दिष्ट विषयोंको सत्यतापूर्वक परीक्षकके समक्ष प्रकट कर योग्यताका परिचय दे। आन्दोलन आदिका प्रादुर्भाव तभी होता है जब स्वेच्छाचारिता तथा स्वच्छ-न्दता आदिका व्यवहार चरम सीमातक पहुँच जाता है। इसीके अनुसार यहाँपर सर्वप्रथम श्रीयुत बा० बहादुरलालजी बी० ए० का मुकद्दमा श्रीबीकानेर-कोर्टमें दायर हुआ (देखिये परिशिष्ट नं० ८) और द्वितीय यह मेरे वर्तमान आन्दोलनका रूप जनताके समक्ष विद्यमान है। मैं ता० १६-६-१९२३ ई० को सन्ध्याके ४॥ बजे किसी अपराधके कारण नहीं, किन्तु पालिसीके अनुसार कमी Reductionके कारण पाठशालासे विदा हुआ।

१७—श्रीयुत बा० जेठमलजी—आप यहाँपर पाठशालाकी शैशवावस्था—अर्थात् सन् १९०६ ई०—में अध्यापक नियुक्त हुए। आप सदा पाठशालाको उन्नतिमें दत्तचित्त रहा करते थे। आपकी नियुक्ति स्वयं पाठशालाके जन्मदाता पूज्य शान्तमुनि महाराज श्रीचन्द्रविजयजीके कर-कमलोंद्वारा हुई थी। इनकी योग्यता आदिसे उक्त मुनिजी महाराज पूर्णतया अभिज्ञ हैं। इन्हीं महात्माके आदेशानुसार सदा उत्साहपूर्वक कार्य-सञ्चालन करते थे। सुना

ऐसी अवस्थामें कोई कैसे हाज़िर हो सकता है? यदि कोचर महाशयकी दयालुता इतने रहते हुए भी अवैतनिक छुट्टी मंज़ूर करनेको रोकती है तो भला अवैतनिक छुट्टीमें क्या आपत्ति थी? इसी भारी अपराधपर आप कोचर-महाशयके ऑर्डरसे सदाके लिये पाठशालासे विदा हो गये। अब पाठकगण स्वयं विचार करें कि कोचर महाशयकी नम्रता, दयालुता आदि की क्या परिभाषा है?

१६—रामलोटन प्रसाद (स्वयं लेखक—आन्दोलनकर्ता) मैं इस पाठशालामें ता० २५-८-१९२० ई० को अध्यापक नियुक्त हुआ। मेरा आचार, व्यवहार तथा कार्य आदि कैसा रहा है—आन्दोलन-युद्ध क्षेत्रमें वर्तमान है, जिसका संक्षिप्त वर्णन इस पुस्तिकामें किया गया है और अब इसके निर्णयका भार पाठक महोदयोंपर निर्भर है। आजतक जितने वाद-विवाद हुए हैं, उनको विचारकी कसौटीपर चढ़ानेसे स्वयं परिणाम प्रकट हो जायगा। आज सभी लोग "सत्य" पालनका डंका पीट रहे हैं और अपनेको सत्यवादी, वीर, धीर, धर्मात्मा, देश तथा राज-भक्त आदि होनेकी डींगें मार रहे हैं किन्तु परीक्षा-कसौटीपर चढ़नेसे वास्तविकताका पता लगे बिना कदापि नहीं रहता। इसी विचार-प्रवाहके कारण, मैं भी सत्य-सत्यको तलाश करनेके लिये परीक्षार्थीरूपमें जनताके हुआ हूँ। देखें सत्यकी कसौटीपर कहाँतक टिक और "Truth may languish, but canno

करनेके बजाय ५) वेतनवृद्धि कर स्थायी करना पड़ा। वाह! कहाँ तो इतने अयोग्य कि पाठशालाके लिये "उपयोगी नहीं" और फिर उसी समय इतने योग्य कि ५) वेतन-वृद्धि ही नहीं, किन्तु स्थायी भी! कहिये पाठकगण, दयालुता, न्यायप्रियता आदिका कुछ परिचय मिला? —आप सदा अपना कर्त्तव्यपालन पूर्ण चेष्टाके साथ करते थे, तो भी कभी-कभी कोन्हर-शाहकी झिड़कियोंके शिकार हुए बिना न रहते। अन्तमें आप स्वयं अपने इच्छानुसार ता० २५-८-१९२३ ई० को त्यागपत्र दे "Better alone than in ill company" के अनुसार पाठशालासे अलग हो गये।

१९—श्रीयुत बा० शान्तिचरणजी —आप जनवरी सन् १९२४ ई० में यहाँपर अध्यापक नियुक्त हुए। कुछ ही महीनोंके पश्चात् आप यहाँसे चले गये। सम्भव है कि सन्तुष्ट तथा हँसमुख गये हों!

२०—श्रीयुत बा० रामनाथजी गुप्त—सुना जाता है कि कुछ महीनों पहले आप यहाँपर अध्यापक नियुक्त हुए और योग्य होते हुए भी, न मालूम क्यों, त्यागपत्र देकर चले गये। सम्भव है, मन न लगता रहा हो।

इतने तो अध्यापक इन अलौकिक सद्व्यवहारोंद्वारा विदा हुए। अब ज़रा मास्टरों (बालिका अध्यापकों) की भी संक्षिप्त गाथा सुन लीजिये। भला जब अध्यापकोंकी यह व्यवस्था है, तो मास्टरोंका क्या पूछना! इनको निकालना-पैठाना तो कोन्हर

जाता है कि उक्त मुनिजी महाराज सौभाग्यवश आजकल यहाँ विराजमान हैं। अतः जिज्ञासु जन इनके विषयमें उक्त महात्माजीसे विशेष जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। पाठशाला-ही-के हितार्थ अपने राज्यके वैण्ड डिपार्टमेण्टकी १० वर्षोंसे अधिक पुरानी नौकरी एकदम छोड़ दी। जहाँतक सुना जाता है, आपके विरुद्ध कोई नोटिस आदि उनके समयमें नहीं निकाला गया। अन्तमें शाहजी व्यर्थकी वातमें इनसे रुष्ट हो गये और यह हठ किया कि यदि बा० जेठमलजी यहाँपर रहेंगे तो मैं कदापि यहाँ नहीं रह सकता। अतः "जाको पिया भावे ताही सुहागिन नाम", के अनुसार भला कोचर महाशय कब शाहजीसे सहमत न हों। अतएव आप कोचर—शाहके व्यवहारोंसे तङ्ग आकर ता० १६-७-१९२३ ई० को लगभग १४ वर्षोंकी सेवाके पश्चात् त्यागपत्र दे पाठशालासे पृथक् हो गये। यह कोचर महाशयके अलौकिक प्रेम तथा दयालुताका नवीन चित्र है। इस समय आप राज्यके मास्टर ऑव सेरीमनीज़ (Master of Ceremonies) डिपार्टमेण्टमें ४०) मासिकपर नौकर हैं।

१८—श्रीयुत बा० पन्नालालजी—आप यहाँ जनवरी सन् १९२२ ई० में ४०) मासिकपर अस्थायी अध्यापक नियुक्त हुए। मार्च सन् १९२२ ई०की वार्षिक परीक्षामें पूर्ण योग्य सिद्ध होते हुए भी इनमें चापलूसी आदिका अभाव देख, इन्हें उर्दू जाननेका अनर्गल दोष लगा, कोचर महाशयने पाठशालासे पृथक् होनेकी घोषणा कर दी, किन्तु कतिपय कारणोंसे वाध्य हो इन्हें पुनः

करनेके बजाय ५) वेतनवृद्धि कर स्थायी करना पड़ा। वाह! कहाँ तो इतने अयोग्य कि पाठशालाके लिये "उपयोगी नहीं" और फिर उसी समय इतने योग्य कि ५) वेतन-वृद्धि ही नहीं, किन्तु स्थायी भी! कहिये पाठकगण, दयालुता, न्यायप्रियता आदिका कुछ परिचय मिला?—आप सदा अपना कर्त्तव्यपालन पूर्ण चेष्टाके साथ करते थे, तो भी कभी-कभी फोचर-शाहकी झिड़कियोंके शिकार हुए बिना न रहते। अन्तमें आप स्वयं अपने इच्छानुसार ता० २५-८-१९२३ ई० को त्यागपत्र दे "Better alone than in ill company" के अनुसार पाठशालासे अलग हो गये।

१९—श्रीयुत बा० शान्तिवरणजी —आप जनवरी सन् १९२४ ई० में यहाँपर अध्यापक नियुक्त हुए। कुछ ही महीनोंके पश्चात् आप यहाँसे चले गये। सम्भव है कि सन्तुष्ट तथा हँसमुख गये हों!

२०—श्रीयुत बा० रामनाथजी गुप्त—सुना जाता है कि कुछ महीनों पहले आप यहाँपर अध्यापक नियुक्त हुए और योग्य होते हुए भी, न मालूम क्यों, त्यागपत्र देकर चले गये। सम्भव है, मन न लगता रहा हो।

९. इतने तो अध्यापक इन अलौकिक सद्व्यवहारोंद्वारा विदा हुए। अब ज़रा मार्जाओं (बालिका अध्यापकों) की भी संक्षिप्त गाथा सुन लीजिये। भला जब अध्यापकोंकी यह व्यवस्था है, तो मार्जाओंका क्या पूछना! इनको निकालना-पैठाना तो फोचर

महाशयके बायें हाथका खेल है। इन्हीं समयोंमें कमसे कम लगभग एक दर्जन (श्रीयुत पं० हनुमानजी श्रीमाली, पं० हीरालालजी ओझा, पं० कृष्णजी, सेठ तेजकरनजी रामपुरिया, पं० धौंकलदासजी पुरोहित, पं० शिवधनजी श्रीमाली आदि आदि) मार्जा देखते-देखते पाठशालासे अलग हुए। जहाँतक मुझे ज्ञात है प्रायः सभीने असन्तुष्ट तथा दुःखी हो अपना-अपना रास्ता लिया। सम्भव है एकाधको बाजे-गाजेके साथ टिकट मिला हो।

सारांश यह कि सितम्बर सन् १९२० ई०से दिसम्बर सन् १९२४ ई० तक ५२ महीनोंमें लगभग ३० अध्यापक मय मार्जाके पाठशालासे पृथक् हुए हैं। अर्थात् पौने दो मासके पश्चात् औसतन एक अध्यापकका शिकार होता रहा—क्या अधिक है!

ज़रा तुलनाके लिये यह भी सुन लें कि इन्हीं समयोंमें श्री. बीकानेर-राज्यके सबसे भारी विद्यालय श्री डूँगर-कालेजसे कितने अध्यापक कैसे विदा हुए हैं, जहाँपर कि इसी दिसम्बर सन् १९२४ ई० में लगभग ५७५ छात्र विद्याध्ययन कर रहे हैं, कुल लगभग ३५ अध्यापक हैं, प्रत्येक विद्यार्थीपर शिक्षाके लिये लगभग ४।≈) मासिक व्यय पड़ता है, विद्यालयका मासिक व्यय लगभग २५००) है, इलाहाबाद युनिवर्सिटीकी मैट्रिक्युलेशन (एन्ट्रेन्स) तक पढ़ाई होती है और आगामी परीक्षामें १४ विद्यार्थी सम्मिलित होनेवाले हैं—

(अ) श्रीयुत बा० शिवमूर्त्तिसिंहजी विशारद, मिस्टर भौमिक बी० ए०, पं० मुक्तराजजी रूढ़का ड्राइङ्ग मास्टर, मौ० जब्बार

हुसेन, बा० सम्पूर्णानन्दजी बी० एस-सी०, एल० टी० हेडमास्टर, बा० गोपीनाथजी बी० ए० तथा बा० खेमराजजी ड्राइङ्ग-मास्टर-इन महाशयोंने स्वयं अपने-अपने इच्छानुसार भिन्न-भिन्न समयोंपर त्यागपत्र दे कॉलेजसे विदा ली है।

(ब) श्रीयुत पं० लक्ष्मणजी मार्जा, पं० जयदयालजी शर्मा प्रधान संस्कृताध्यापक -ये दोनों सज्जन पेंशन प्राप्त कर कॉलेज-से सादर विदा हुए हैं।

(स) श्रीयुत बा० ब्रजवासीलालजी और पं० सदानन्दजी—ये लोग निज इच्छानुसार हिन्दू-विश्वविद्यालयमें पढ़ने चले गये।

(द) श्रीयुत पं० शंकरदासजी और बा० रामकृष्णजी बी०ए० —इनके तबादले इनके इच्छानुसार राज्यान्तर्गत हुए हैं।

(य) श्रीयुत पं० रामचन्द्रजी तथा मौ० अब्दुललतीफ़—इनका स्वर्गवास हो गया। इस प्रकारसे लगभग १५ अध्यापक कॉलेजसे पृथक् हुए हैं, जिनके साथ किसी प्रकारका ज़ोर व ज़ुल्म अथवा अन्याय राज्यकी ओरसे होना नहीं पाया जाता।

परिशिष्ट नं० ५

मेरे विरुद्ध पाठशाला-कालमें पृथक् होनेके समय तक केवल नीचे लिखे दो स्वच्छन्दतापूर्ण रिमार्क निकले हैं, जिनका उल्लेख "साँचको आँच क्या?" नोटिसमें संक्षेपतः किया गया है। इनके अतिरिक्त अन्य कोई भी रिमार्क नहीं निकले हैं—

प्रथम रिमार्क—ऑर्डर नं० २, ता० ३-६-२१—इसका

महाशयके बायें हाथका खेल है। इन्हीं समयोंमें कमसे कम लगभग एक दर्जन (श्रीयुत पं० हनुमानजी श्रीमाली, पं० हीरालालजी ओझा, पं० कृष्णजी, सेठ तेजकरनजी रामपुरिया, पं० धौंकलदासजी पुरोहित, पं० शिवधनजी श्रीमाली आदि आदि) मार्जा देखते-देखते पाठशालासे अलग हुए। जहाँतक मुझे ज्ञात है प्राय: सभीने असन्तुष्ट तथा दुःखी हो अपना-अपना रास्ता लिया। सम्भव है एकाधको बाजे-गाजेके साथ टिकट मिला हो।

सारांश यह कि सितम्बर सन् १६२० ई०से दिसम्बर सन् १६२४ ई० तक ५२ महीनोंमें लगभग ३० अध्यापक मय मार्जाके पाठशालासे पृथक् हुए हैं। अर्थात् पौने दो मासके पश्चात् औसतन एक अध्यापकका शिकार होता रहा—क्या अधिक है!

ज़रा तुलनाके लिये यह भी सुन लें कि इन्हीं समयोंमें श्री बीकानेर-राज्यके सबसे भारी विद्यालय श्री डूँगर-कालेजसे कितने अध्यापक कैसे विदा हुए हैं, जहाँपर कि इसी दिसम्बर सन् १६२४ ई० में लगभग ५७५ छात्र विद्याध्ययन कर रहे हैं, कुल लगभग ३५ अध्यापक हैं, प्रत्येक विद्यार्थीपर शिक्षाके लिये लगभग ४।≈) मासिक व्यय पड़ता है, विद्यालयका मासिक व्यय लगभग २५००) है, इलाहाबाद युनिवर्सिटीकी मैट्रिक्युलेशन (एन्ट्रेन्स) तक पढ़ाई होती है और विद्यार्थी सम्मिलित होनेवाले हैं—

(अ) श्रीयुत बा० शिवमूर्त्तिसिंहजी बी० ए०, पं० मुल्कराजजी झुंका

that afterwards he himself felt very sorry for the step he had taken.

I personally spoke to the Secretary to verify his remarks in the said order but as he was unwilling to hear anything now on the subject, I took it to be my duty to inform Master Ram Lautan Prasad that nothing could be done in the matter and that the Secretary's ears had been poisoned against him. Hence I shall advice him to look at the better side of the question thinking as if nothing had happened, for this sorts of remarks can throw no darkness or blot on his conduct.

27 June 1921 | (Sd.) Surya Karan Acharya, B. A.,
Hony. Headmaster,
Shri Jain Pathshala, Bikaner

उपर्युक्त अँग्रेज़ी भाषाका संक्षित अनुवाद यह है—

आर्डर नं २ ता० ३-६-२१ के सम्बन्धमें मैंने बा० रामलौटन प्रसादके प्रार्थनानुसार जाँच की, तो मैं इस नतीजेपर पहुँचा कि उक्त आर्डर ग़लत इत्तिलापर निर्भर था। मैंने बा० श्रीरामजीसे भी, जो पहले हेडमास्टर थे, पूछा; परन्तु वह भी इस मामलेपर कुछ प्रकाश न डाल सके और उन्होंने स्पष्ट कह दिया कि केवल ग़लतफ़हमीके कारण ऐसा हुआ कि मैं (बा० श्रीरामजी) ने सेक्रेटरी साहबसे बा० रामलौटन प्रसादकी शिकायत जोशमें आकर कर दी; परन्तु उसके पश्चात् मुझे भी इस व्यवहारके लिये खेद हुआ।

सारांश* यों है:—

आप (रामलौटनप्रसाद) ने श्रीमान् हेड मास्टर बा० (श्रीरामजी गुप्त) साहिबका अपमान † टीका-टिप्पणियाँ पेश करके किया है। चूँ कि यह आपका पहला सङ्गीन जुर्म है, इसलिये दयापूर्वक मुआफ़ फ़र्माया जाता है। आइन्दाके लिये पूरा ख्याल रक्खें।

मेरा हस्ताक्षर:— R. L. P. } द० शिवबक्स कोचर, मंत्री, श्रीजैनपाठशाला, बीकानेर।

इस आर्डरके विषयमें निम्नांकित सम्मतियाँ ध्यानपूर्वक देखिये —

प्रथम सम्मति—

Shri Jain Pathshala,
27 June 1921.

In accordance with Mr. Ram Lautan Prasad's request about order no. 2 of 3-6 21 I made certain enquiries and came to the conclusion that the above mentioned order was based on misrepresentation. I approached the ex-Headmaster Mr. Sri Ramji and asked him if he could thr ow any light on the matter and he definitely stated that it was simply owing to some misunderstanding on his pa rt that he went to the Secretary and complained him of Mr. Ram Lautan Prasad in the heat of the moment. But

* आर्डरकी नकल अप्राप्त होनेके कारण केवल सारांश ही दिया गया है।

† टीका-टिप्पणियोंका पेश करना बिलकुल असत्य है। सत्यता तो इसीमें है कि उन्हें अब भी प्रकट कर दें।

that afterwards he himself felt very sorry for the step he had taken

I personally spoke to the Secretary to verify his remarks in the said order but as he was unwilling to hear anything now on the subject I took it to be my duty to inform Master Ram Lautan Prasad that nothing could be done in the matter and that the Secretary's ears had been poisoned against him. Hence I shall advise him to look at the better side of the question thinking as if nothing had happened for these sort of remarks can throw no darkness or blot on his conduct.

27 June 1921 | Sd. Sri Krishan Khurana B. A.,
Hony. Headmaster
Shri Jain Pathshala, Bikaner

उपर्युक्त अंग्रेजी आशयका संक्षिप्त अनुवाद यह है

आर्डर नं० ७ ता० ३-६-२१ के सम्बन्धमें मैंने बा० रामलौटन प्रसादके प्रार्थनानुसार जाँच की, तो मैं इस नतीजेपर पहुँचा कि उक्त आर्डर गलत इत्तिलापर निर्भर था। मैंने बा० श्रीरामजीसे भी, जो पहले हेडमास्टर थे, पूछा; परन्तु वह भी इस मामलेपर कुछ प्रकाश न डाल सके और उन्होंने स्पष्ट कह दिया कि केवल गलतफहमीके कारण ऐसा हुआ कि मैं (बा० श्रीरामजी) ने सेक्रेटरी साहबसे बा० रामलौटन प्रसादकी शिकायत जोशमें आकर कर दी; परन्तु उसके पश्चात् मुझे भी इस व्यवहारके लिये खेद हुआ।

pose the order has been issued against you without an investigation into the matter.

I requested the Secretary to reconsider the matter and cancel the order if you are found innocent but he did not deem it necessary to take any such step, though admitting his want of due consideration

Therefore it is to inform you that the order, though cannot be cancelled, cannot be considered to have any weight upon your further career

B. Ram Lautan Prasad,	sd. BahadurLal saksena B A
Assistant Master.	The Head Master,
	Shri Jain Pathshala, Bikaner,

उपरोक्त अँग्रेज़ी भाषाका अनुवाद यह है:—

बीकानेर,

ता० २१ अगस्त सन १६२१ ई० ।

आपके प्रार्थनानुसार मैंने ऑर्डर नं० २ ता० ३-६-१६२१ पढ़कर बाबू श्रीरामजी असिस्टेण्ट मास्टर से, जो उस समय हेड्मास्टर थे, इस विषयमें बातचीत की और स्वयं इसकी जाँच भी की।

मुझे विश्वास है कि जो दोषारोपण किया गया है, वह सिद्ध नहीं होता और मेरे विचारमें उक्त ऑर्डर बिना किसी जाँच-पड़तालके आपके प्रतिकूल निकाला गया है।

मैंने मन्त्रीजीसे इसपर पुनर्विचार करने और अगर आप निर्दोष हों तो उस आर्डरको रद्द करनेके लिये प्रार्थना की; परन्तु वह इस विषयमें कोई कार्रवाई करना उचित नहीं समझते।

हालांकि वह इस बातको स्वीकार करते हैं कि उन्होंने इस मामलेको भलीभाँति नहीं विचारा।

इसलिये आपको सूचित किया जाता है कि उक्त ऑर्डर यद्यपि मनसूख नहीं किया जा सकता तथापि आपके भविष्यपर कोई असर नहीं डाल सकता।

द० बहादुरलाल सक्सेना, बी० ए०,
हेडमास्टर,
श्री जैन पाठशाला, बीकानेर।

द्वितीय रिमार्क—नोटिस नं० ३८९ ता० २०-१-२३

बा० रामलौटन प्रसादजी,

आपने आज रोज भँवरलाल नेमीचन्द कोचरको क्या कारणसे शिक्षा दी थी और आपने शारीरिक दण्ड देनेकी सत्ता किसने दी थी। और शारीरिक दण्ड देनेमें इतना गम्भीर दण्ड किस तरह हुआ। उसकी सविस्तर रिपोर्ट पेश की जावें। आपको फिरसे सूचित होवे कि शारीरिक दण्ड पाठशालाके नियमों विरुद्ध है।

मेरा हस्ताक्षर— R. L. p. 20-1-23.

(sd.) M. T. shah,
हेडमास्टर,
श्री जैन पाठशाला, बीकानेर।

नोट—इस उपरोक्त नोटिसका सन्तोषदायक तथा उचित मैंने उसी दिन स्पष्ट शब्दोंमें दे दिया है, जो कि स्कूल-फाईल-... है और पूर्ण जाँच-पड़तालके पश्चात् परम ...

निःस्वार्थ, कर्त्तव्यपालन करनेवाले तथा न्यायशील आदर्श सज्जन···!" कोचर महाशय मंत्रीने भी मुझे पूर्ण निर्दोष बतलाया है।

इन्हीं दोनों उपरोक्त रिमार्कोंको लेकर शाहजी स्कूल-रिमार्क-बुकको मेरे नामसे निकले हुए रिमार्कोंसे "अर्लहत" बतलाकर "अपने आत्मीय शुद्ध भावों" का परिचय दे रहे हैं।

परिशिष्ट नं० ६

श्रीयुत पं० साँगीदासजी व्यासका पत्र भाईकी बीमारीके कारण यहाँसे बम्बई जाते समय इस प्रकार है: –

ता० २१-५-२३।

सेवामें—

श्रीमान हेडमास्टरजी,

श्री जैन पाठशाला, बीकानेर।

महाशयजी,

ता० जेठमलजीका पत्र आज लगभग दस बजे मिला। मैं Secretary [सेक्रेटरी] साहबसे मिला था। उन्होंने ता० १६ से केवल दस दिनकी छुट्टी मंजूर की है। इतने समयमें आना-जाना असम्भव जान ता० १६ को Bombay [बम्बई] भाईजी-को तार दिया कि यदि सख्त ज़रूरत न हो तो न आऊँ। आज आठ बजे सुबह तारका जवाब आया जिससे मालूम हुआ कि

बीमारी कड़ी है, शीघ्र बुलाया है। घबराहटके कारण आपका दर्शन न कर सका। आज ७ बजे शामको गाड़ीसे जा रहा हूँ, वहाँ पहुँचनेपर कुशलकी सूचना दूँगा। क्षमा करें।

भवदीय, आज्ञाकारी सेवक,

साँगीदास व्यास।

इस उपरोक्त पत्रपर शाहजीका नादिरशाही आॅर्डर अथवा यों कहिये कि "आत्मीय शुद्ध भावों" पूर्ण शान्तिदायक उत्तर इस प्रकार है :—

23 / 22-5-23. Recd. at 1.5. P. m. on 22-5-23.

(sd.) M. T. shah.

Returned. The applicant ought to have attended the school during the three days he was here, instead of staying away without giving any information as to his whereabouts even though he knew that his leave had been sanctioned from the 19 th inst. It appears from the note that the reasons he has stated are altogether false. अर्थात् पत्र वापिस किया जाता है। प्रार्थीको, जब कि वह यह जानता था कि उसकी छुट्टी १६ तारीखसे मंज़ूर हुई है और किसी इत्तिलाके घर रहनेके बजाय उन तीन दिनोंमें, जब कि वह यहाँ था, मदरसेमें हाज़िर होना चाहिये था। उसके पत्रसे मालूम होता है कि उसके बयान किये हुए कारण बिलकुल असत्य हैं।

नोट—ऐसा व्यवहार ऐसी अवस्थामें लगभग १॥ मास

सवेतन छुट्टीका हक़ रहते हुए किया गया है। अन्तर्यामी तथा जासूसी शाहजीके कथनानुसार यदि मान लिया जाय कि प्रार्थी बिलकुल झूठा है तो छुट्टी सवेतन न देकर अवैतनिक देनेमें क्या अड़चन थी? छुट्टी समाप्त होनेपर तो आप ही भेद प्रकट हो जाता। क्या डिसमिस ही करना दयालुता थी? ऐसे ही व्यवहारोंपर शाहजीका कहना है कि "पाठशालाके किसी अध्यापकके साथ कोई नियम-विरुद्ध चेष्टाका किया जाना नहीं पाया जाता और मेरे समयमें किसीके साथ कोई अनुचित व्यवहार नहीं हुआ है।" अब पाठक उचित-अनुचितका निर्णय स्वयं करें।

परिशिष्ट नं० ७

श्रीयुत बा० पन्नालालजी अपनी रिपोर्टकी बाबत जो "साँचमें लाँछ" में प्रकाशित हुई है क्या कहते हैं :-

Bikaner,

1-5-1924,

My dear B. RamLautan Prasadji,

In reply to your letter no. 61 of 23-4-1924, I hereby inform you that my report of 7-8-23, unfortunately published in "Sanch men Lanchh" by mr, Mayabhai T. shah, B. A., the then Head Master of the shri Jain Pathshala, Bikaner, was never meant to show some weakness in your work, and how could it possibly mean that when after your departure the class remained practically idle for over a month under the direct supervision of the

Head master. In face of your uniform excellent results in the school I could not have said so and therefore it is extremely regretted that my report should have been taken in a light which it was never meant to convey, for which I assure you I am in no way responsible.

Your sincerely,

Pannalal.

उपरोक्त अँग्रेज़ी पत्रका अनुवाद यह है :—

बीकानेर,
१-५-१९२४।

प्यारे बा० रामलौटन प्रसादजी,

आपके पत्र नं० ६१ ता० २३-४ २४ के उत्तरमें निवेदन है कि मेरी ता० ७-८ २३ की रिपोर्ट बा० मयाभाई टी० शाह बी० ए०ने, जो उस समय श्री जैन पाठशाला बीकानेरके हेड्मास्टर थे, "साँचमें आँच" नामक नोटिसमें अभाग्यवश प्रकाशित कर दी है। इस रिपोर्टसे मेरा यह अभिप्राय कदापि न था कि मैं आपके कार्यमें कोई त्रुटि दिखलाऊँ और यह सम्भव भी कैसे हो सकता था, जब कि आपके जानेके पश्चात् वह कक्षा स्वयं हेडमास्टर साहिब-ही-की निगरानीमें एक माससे अधिक ऊपरती रही। आपके लगातार अत्युत्तम परीक्षाफलको देखते हुए मैं कदापि ऐसा नहीं कह सकता था और इसलिये मुझे इसके लिये अति खेद है कि मेरी रिपोर्टको ऐसे भावमें ले लिया गया कि

जिसकी कभी सम्भावना तथा आशा न थी और इसके लिये मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मैं इसका उत्तरदायी किसी प्रकार भी नहीं हूँ।

भवदीय—पन्नालाल।

मेरा पत्र नं० ६१ ता० २३-४-२४ इस प्रकार है:—
श्रीयुत बा० पन्नालालजी,

आपको ता० ७-८-२३ की रिपोर्टको, जो "सांचमें ऑच" में प्रकाशित हुई है, पढ़कर भ्रममें पड़ गया हूँ। सादर निवेदन है कि निष्पक्ष हो सत्यभावको प्रकट कर अपने विचारोंसे शीघ्र सूचित करें। सत्यको प्रकाश करनेमें संकोच करना कायरोंका काम है। मैं केवल "सत्य" रहस्यको जाननेके अभिप्रायसे प्रेरित हो आपको कष्ट दे रहा हूँ। यदि "सत्य-प्रकाश" में मेरे प्राण भी जायें तो कोई चिन्ता नहीं है। बस, अधिक यही कहना है कि सत्यतापूर्वक मेरे सन्देहको दूर कर सत्यके मार्गी बनें। चापलूसी करना महानिन्दनीय है।

ता० २३-४-२४ } भवदीप—रामलोटनप्रसाद
हेडअसिस्टेंट मास्टर,
श्री जैन पाठशाला, बीकानेर।

परिशिष्ट नं० ८

श्रीयुत बा० बहादुरलालजी बी० ए० के मुकदमें की नकल:—

श्री बीकानेर कोर्टका फैसला—

नक़ल दस्त बरदारी ता० ८-१२-२२ मशमूला मिसल नं० १६२ मरजूआ १४-२-२२, फ़ैसला ८-१२-२२ बअदालत मुन्सफ़ी सदर राज श्री बीकानेर—

नक़ल मुताबिक़ असल व एतबार मुक़ाबिलह
द० उर्दू छुट्टनलाल सरिश्तेदार मुन्सफ़ी सदर।

बहादुरलाल सकसेना बी० ए० सा० बीकानेर,

बनाम

जैन पाठशाला मार्फ़त् शिवबख़्श कोचर मंत्री,

दावा १८४।)

जनाब आली

मुक़द्दमा सदरमें मैं कुल ज़रे मुतदाविया मय ख़र्चा वसूल पा लिया और इसलिये मुक़द्दमा चलाना नहीं चाहता। लिहाज़ा दस्त बरदारी हाज़ा पेश है और इसकी तसदीक़ सेक्रेटरी जैन-पाठशाला मौजूदा अदालतसे फ़रमा ली जावे। ता० ८-१२-२२

द० अंगरेज़ी शिवबख़्श मुदायलेह। अर्ज़ी फ़िदवी मुक्तामसाद मुख़्तार मुद्दई।

मु० सदर

मुख़्तार मुद्दईने पेश करके तसदीक़ की। शामिल मिसल हो।

ता० ८-१२-२२

द० उर्दू पं० छोटेलालजी,
मुन्सिफ़ सदर बीकानेर।

नोट—तफ़सील कुल ज़रे मुतदाविया मय ख़र्चाः—

दावा १८४।) रसूम १३।।।-) मुख्तारनामा १।।) मेहनताना मुख़्तार ६३), तलवाना २) और मुतफ़र्रिक़ ख़र्च २)—मीज़ान कुल २१२।।।) की डिग्री हुई है। इस स्पष्ट तथा पुष्ट प्रमाणके होते हुए भी बा० बहादुरलालजी बी० ए० के सम्बन्धमें शास्त्रीजी को क़रीब-क़रीब "कोई कागज़ पाठशालाकी फ़ाइलोंमें नहीं मिला।" जब इस पुष्ट प्रमाणकी यह दशा है, तो औरोंके सम्बन्धमें कागज़ोंका न मिलना तथा गुम हो जाना अथवा रजिस्टरों आदिमें फेरफार हो जाना अथवा मनगढ़न्त नयी बातका प्रादुर्भाव हो जाना क्या आश्चर्य है! कहिये, अब भी लोग कोचर महाशयके दानी,दयालु तथा न्यायशील आदर्श सज्जन आदि होनेमें सन्देह करेंगे!!—यह तो स्पष्ट प्रकट दान है, गुप्त दानोंका लेखा यथाशक्ति पाठकगण स्वयं समझ लें अथवा "मौजूदा कागज़ोंके आधारपर कर्तव्यपालन" करनेवाले सत्यवादी शास्त्रीजी, जिनको बात बातपर "हँसी आती है," समझ लें। यही शास्त्रीजीके "आत्मीय शुद्ध भावों" का नमूना है!!! आजकल प्रायः ऐसे ही "आत्म-प्रदर्शित पथसे विचलित" न होनेवाले जाति, समाज, संस्था तथा देश-सुधारक हैं, तभी तो आज भारतमें चारों ओर शान्ति विराजमान है!

ध्यान रहे कि यह मुक़दमा पुराना नहीं किन्तु शास्त्रीजीकी नियुक्तिकी बधाईका है!

परिशिष्ट नं० ६

कोचर-प्रभृति पाठशालासे केवल भण्डारकोंको ही पृथक् कर

चिरस्थायी आदर्श स्थापित नहीं किया है, वरन् समय समयपर छात्रोंको भी बहिष्कृत कर जनताको पाठशालाकी उन्नतिका मार्ग दर्शाते हुए न्याय तथा सुधारके विचित्र उदाहरण उपस्थित किये हैं, जिनमेंसे ये हैं —

(अ) ता० १६-१-१६२२ ई० को शाहजीकी रिपोर्टपर कोचर महाशयने कक्षा ३ के ३ छात्रों (उदयचन्द सेठिया, कन्हैयालाल सिरोहिया और रामलाल कोठारी) का पाठशालासे आजन्म बहिष्कार किया है। भला जातीय पाठशालाओंमें यह नादिरशाही! क्या जैन-जातिके लिये यही सुधारका आधुनिक सुगम उपाय है?" क्या छात्रोंका ऐसा संगीन जुर्म था कि काले पानीकी सज़ा दी गयी? हाँ, छात्रोंका दोष अवश्य था और वह यह कि एक अध्यापकसे बाल-स्वभावके कारण मामूली बात-पर कुछ झगड़ा हो गया था, जिसके लिये यह दण्ड कहाँतक उचित है, जैन-समाज तथा देशके अन्य सुधारक स्वयं सोचें। यह तीनों छात्र खास ओसवाल-जैन-धर्मावलम्बी थे, जिनकी आयु क्रमशः लगभग १५,१४ तथा १३ वर्षकी थी। यह शाहजीके संस्था-सुधारका प्रथम वार था — जिसका खाली जाना विचार-शील कोचर महाशयने उचित न समझा।

(ब) शाहजीने अपने ता० १२-४-१६२३ ई० के पाण्डित्य-पूर्ण आँर्डरके अनुसार शिवकृष्ण स्वामी कक्षा ८, हरीसिंह राज-पूत और चाँदमल दर्जी कक्षा ७ तथा चतुर्भुजसिंह राजपूत और भँवरलाल बैद कक्षा ६ को पाठशालासे सदैवके लिये बहिष्कृत

कर जैन-जनताके समक्ष "आत्मशुद्धि" का परिचय दिया है और आपने अपने इस आदर्श ऑर्डरका समर्थन और आन्दोलन जिस विचित्रताके साथ किया है, वह विचारणीय है। इस ऑर्डरमें शाहजीकी विद्वत्ता, नीति-निपुणता तथा आत्म प्रदर्शिताका दिग्दर्शन अवश्य होगा। इन उपर्युक्त पाँचों छात्रोंमें प्रथम चार जैनेतर और पाँचवाँ जैनी है।

परिशिष्ट नं० १०

पाठकोंके विचारार्थ कोचर महाशयकी १६ वर्षीय (१६०७ – २३) रिपोर्टके परिशिष्ट नं० ३, ४ और ५ की नक़ल यहाँ नीचे दी जाती है—

(अ) कोचर महाशयका परिशिष्ट नं० ३—

सं०	नाम विद्यार्थी	कक्षा	छोड़ने का समय	सं०	नाम विद्यार्थी	कक्षा	छोड़नेका समय
१	चम्पालाल तोतड़	८	१९१६	९	छगनमल मथेरण	४	१९१६
२	मूलचन्द नाहटा	८	”	१०	भयराज नाहटा	१०	१९१७
३	पूनमचन्द्र बेगानी	६	”	११	रामलाल सुराना	७	”
४	हीरालाल लूणिया	४	”	१२	सिद्धिकरण सुराना	७	”
५	चेतनदास सेठिया	४	”	१३	राधाकृष्ण शर्म्मा	७	”
६	दीपचन्द सेठिया	४	”	१४	सोहनलाल रामपुरिया	६	”
७	चम्पालाल नाहटा	४	”	१५	भैरूदान सुराना	६	”
८	धीचन्द नाहटा	४	”	१६	सोहनलाल नाई	[illegible]	”

सं०	नाम विद्यार्थी	कक्षा	छोड़ने का समय	स०	नाम विद्यार्थी	कक्षा	छोड़नेका समय
१७	शिखरचन्द मुकीम	६	१९१७	३१	मुन्नीलाल घाड़ीवाल	५	१९१८
१८	जेठमल फलोधिया	५	"	३२	टीकमचन्द कोचर	५	"
१९	देवीलाल कोचर	५	"	३३	नृसिंहदास सेवक	४	"
२०	मोतीलाल कोठारी	४	"	३४	मुरारीलाल श्रीमाल	४	"
२१	जेठमल स्वामी	४	"	३५	माधूराम सिपाही	४	"
२२	जानकीप्रसाद	६	१९१८	३६	जेठमल स्वामी	४	"
२३	उदयचन्द कोचर	६	"	३७	माणिकचन्द डागा	४	"
२४	तेजकरण वैद	६	"	३८	खुमाणचन्द भंसाली	४	"
२५	समयराज नाहटा	६	"	३९	पूनमचन्द तोलड़	४	"
२६	मगनमल सिपोहिया	६	"	४०	रावतमल कोचर	७	१९१९
२७	मगनमल पारख	६	"	४१	चम्पालाल नाहटा	६	"
२८	धनराज कोचर	६	"	४२	जतनलाल नाहटा	६	"
२९	छत्रसिंह कोचर	६	"	४३	आनन्दमल बेगानी	६	"
३०	बंशीलाल ब्राह्मण	५	"	४४	मगनमल भूरा	५	"

सं०	नाम विद्यार्थी	कक्षा	छोड़नेका समय
४५	हरकचन्द कोठारी	५	१९१९
४६	गफूर मुहम्मद मठापन	४	”
४७	अमरचन्द सिप्पाणी	४	”
४८	रूपचन्द सुनार	४	”
४९	सोहनलाल सुनार	४	”
५०	धनराज कोचर	८	”
५१	फागुणलाल कोचर	८	१९२०
५२	छत्रसिंह कोचर	७	”
५३	छोटमल वैद	७	”
५४	पन्नालाल कोचर	७	”
५५	उत्तमचन्द कोचर	७	”
५६	रामगोपाल सेवक	७	”
५७	रतनलाल नाहटा	६	”

सं०	नाम विद्यार्थी	कक्षा	छोड़नेका समय
५८	रामरतन कोचर	५	१९२०
५९	दुलीचन्द सेठिया	५	
६०	सुन्दरमल कोचर	५	
६१	मेघराज बछावत	४	”
६२	चम्पालाल चोथरा	४	”
६३	भंवरलाल भावक	४	”
६४	गुलाबचन्द नाहटा	४	”
६५	लूनकरण सुराणा	४	”
६६	भंवरलाल कोचर	४	१९२१
६७	भीखम चन्द कोठारी	८	”
६८	लालचन्द भादाणी	८	”
६९	अरजुनदास डागा	५	”
७०	मेघराज नाहटा	५	”

सं०	नाम विद्यार्थी	कक्षा	छोड़नेका समय	सं०	नाम विद्यार्थी	कक्षा	छोड़नेका समय
७१	चैनरूप भूगड़ी	४	१६२१	८०	चाँदमल दर्ज़ी	७	१६२२
७२	मेघराज भादाणी	७	१६२२	८१	सूरजमल बोथरा	७	"
७३	फ़तहचन्द कोचर	७	"	८२	मघरलाल वैद	६	"
७४	मोतीलाल वैद	७	"	८३	जेसराज सुनार	६	"
७५	भैरूदान पूगलिया	५	"	८४	मोहनलाल सेवक	६	"
७६	मोहनलाल रामपुरिया	५	"	८५	चतुर्भुज राजपूत	६	"
७७	कन्हैयालाल कोचर	४	"	८६	माणिकचन्द खज़ांची	५	"
७८	शिवकृष्ण स्वामी	८	१६२३	८७	सोहनलाल राजपूत	५	"
७९	हरीसिंह राजपूत	७	"				

नोट—कोचर महाशयने पाठशाला छोड़नेवाले विद्यार्थियोंकी नामावली देनेमें भी अपनी दयालुता न छोड़ी, अर्थात् मेरी मौजूदगीमें पाठशाला छोड़े हुए कतिपय छात्रोंकी नामावलीमें अभाव दिखलाया गया है। उनके नाम ये हैं :—
(१) मैसकरन राखेचा कक्षा ४; (२) मंगलचन्द कोचर कक्षा ६, (३) भागवतसिंह बैद कक्षा ६; (४) जेसराज वैद कक्षा ५

(य) कोचर महाशयका परिशिष्ट नं० ४—

परीक्षा-फल सन् १६१५से १६२३ ई०तक

सन् १६१५ ई०					सन् १६१६ ई०				
कक्षा	संख्या	उत्तीर्ण	अनुत्तीर्ण	प्रतिशत	कक्षा	संख्या	उत्तीर्ण	अनुत्तीर्ण	प्रतिशत
९	१	१	—	१००	१०	१	—	१	०
८	३	२	१	६६.७	९	३	३	—	१००
७	३	२	१	६६.७	६	२	०	२	०
६	५	५	—	१००	५	६	४	५	४४.४
५	५	५	—	१००	४	१०	८	२	८०
४	१४	७	७	५०	३	१५	६	६	४०
३	१८	५	१३	२७.५	२	१३	१०	३	७६.९
२	५१	३०	२१	५८.८	१	२७	१७	१०	६२.६
१	२२	८	१४	३६.४					

सन् १९१७ ई०				
कक्षा	संख्या	उत्तीर्ण	अनुत्तीर्ण	प्रतिशत
६	१	—	१	०
५	४	—	४	०
४	६	३	३	५०
३	१९	८	११	४१.१
२	१६	९	७	५६.२
१	१५	४	११	२६.६

सन् १९१९ ई०				
कक्षा	संख्या	उत्तीर्ण	अनुत्तीर्ण	प्रतिशत
७	५	१	४	२०
६	१	१	—	१००
५	८	३	५	३७.५
४	७	३	४	४२.८
३	१०	५	५	५०
२	६	५	१	८३.३
१	२२	९	१३	४०.९

सन् १९१८ ई०				
कक्षा	संख्या	उत्तीर्ण	अनुत्तीर्ण	प्रतिशत
६	३	२	१	६६.७
५	३	२	१	६६.७
४	१०	९	१	९०
३	११	७	४	६३.६
२	८	५	३	६२.५
१	१७	१०	७	५८.८

सन् १९२० ई०				
कक्षा	संख्या	उत्तीर्ण	अनुत्तीर्ण	प्रतिशत
७	४	३	१	७५
६	३	१	२	३३.३
५	७	७	०	१००
४	६	४	२	६६.६
३	९	९	—	१००
२	६	६	—	१००
१	१७	१०		५८.८

सन् १९२१ ई०

कक्षा	संख्या	उत्तीर्ण	अनुत्तीर्ण	प्रतिशत
६	६	४	३	६६.६
५	४	३	१	७५
४	३	२	१	६६.६
३	३	२	१	६६.३
२	८	७	१	८७.५
१	१०	६	[illegible]	६०

सन् १९२२ ई०

कक्षा	संख्या	उत्तीर्ण	अनुत्तीर्ण	प्रतिशत
७	५	४	१	८०
६	३	३	०	१००
५	३	३	—	१००
४	४	४	०	१००
३	७	६	—	८५.७
२	१७	१६	१	९४.२
१	१५	१३	२	८६.६

सन् १९२३ ई०

कक्षा	संख्या	उत्तीर्ण	अनुत्तीर्ण	प्रतिशत
८	१	—	१	०
७	६	३	३	५०
६	२	२	—	१००
५	५	३	२	६०
४	५	५	—	१००
३	५	३	२	६०
२	१४	८	६	५७.१
१	१३	११	२	८४.६

(स) फोनर महाशयका परिशिष्ट नं० ५—

सन्	लड़कोंकी औसत	औसत उपस्थिति	कक्षाएँ	औसत खर्च	
१९१४—१५	२६६	^	६		
१९१५—१६	२२६	७३.८	१०	२६४७) रु०	
१९१६—१७	२१५	६४.२	६	२६६४॥)	
१९१७—१८	२३६	६८.१	६	३३२०॥-)	
१९१८—१९	१८१	६६.३	७	२६६१ळ)	
१९१९—२०	१७१	६६.३	७	३५६६॥)	
१९२०—२१	१३६	७२.३	६	३७०१)	
१९२१—२२	१४८	७६.१	७	४८४४)	
१९२२—२३	११०	१०.३	८	५३०२)	

परिशिष्ट नं० ११

पाठशालाके वे नियम जो इस पुस्तिकामें उल्लिखित हैं, श्री जैन पाठशाला (बीकानेर) की **नियमावली** * से, जो व्यवहारमें है, पाठकोंके विचारार्थ नीचे उद्धृत किये जाते हैं—

नियम नं० :—

५७—पाठशालाके अध्यापक व अध्यापिकाओंकी छुट्टीको स्वीकार करना तथा दोनों पाठशालाओंका निरीक्षणादि करना अथवा उचित समझनेपर, सभाकी सम्मति लेकर कन्या-पाठशालाका निरीक्षणादि हेड्मास्टरको सौंपना।

५८—वार्षिक रिपोर्ट बनाकर छपवाना।

५९—आवश्यकतानुसार अध्यापकोंको नियत अथवा पदसे पृथक् करना और पेबिलपर हस्ताक्षर करके कोषाध्यक्षके पास भेजना।

७१—अंग्रेज़ी विभागकी पढ़ाईका समय ११ से ४ बजेतक ५ घण्टेका रहेगा, परन्तु विशेष गर्मी पड़नेपर प्रातःकाल ६॥ से १०॥ बजेतक केवल चार घण्टेका रहेगा। संस्कृत तथा धार्मिक ग्रन्थोंकी पढ़ाई ५ या ४ घण्टे अंग्रेज़ी विभागके अनुसार होगी।

८४—किसी कर्मचारीको यदि असावधान अथवा नियम-विरुद्ध देखे तो, एकदम उसे भविष्यत्‌में वैसा न करनेको कहे,

* यह नियमावली संवत् १९७६ वि० में वैदिक यंत्रालय अजमेरमें छपी है। सम्भवतः हेड्मास्टर अथवा सेक्रेटरी श्री जैन पाठशाला, बीकानेरको लिखनेसे बिना मूल्य प्राप्त हो सकती है।

यदि फिर भी उसी प्रकार देखे तो रिमार्कबुकमें नोट करके उसके हस्ताक्षर लेते जाना और फिर इनको मासिक रिपोर्टमें सम्मिलित करना।

८६—पाठशालाके आफ़िस-सम्बन्धी सब कार्योंको करना व कराना और सब काग़ज़ोंको सम्हालकर रखना।

६७—पाठशालाके उन्नति विषयक अपने अपने विचार व प्रस्तावोंको लेखद्वारा हेड्मास्टरपर सूचित करना।

१०५—एक वर्षमें पाठशालाके अध्यापकों तथा अन्य कर्मचारियोंको हक़की एक मासकी छुट्टी सवेतन मिलेगी।

१०७—रियायती छुट्टीका हक़ ११ मासकी निरन्तर सेवा पीछे एक मासका होगा और तीन महीनेसे ज़ियादा हक़ न होगा, ग्रीष्मकालकी छुट्टी होनेपर यह रियायती छुट्टी आधे वेतनपर मिलेगी।

१०८—बीमारीकी हालतमें डॉक्टरका सरटीफ़िकेट पेश करनेपर हक़ मुताबिक़ छुट्टी दी जावेगी, पर कुल छुट्टी ६ माससे ज़ियादा न बढ़ेगी।

११०—कैज़ुअल और रियायती छुट्टी दो अध्यापकोंको एक साथ नहीं मिलेगी, परन्तु ख़ास ज़रूरतपर एक हफ़्तेतक दी जा सकेगी।

१११—परीक्षा व पाठशालाके किसी ज़रूरी मौक़ेपर किसी प्रकारकी छुट्टी किसीको न मिलेगी।

११४—छुट्टीपर जानेवाले अध्यापक व अध्यापिकाको यदि

परिशिष्ट नं० ११

पाठशालाके वे नियम जो इस पुस्तिकामें उल्लिखित हैं, श्री जैन पाठशाला (बीकानेर) की **नियमावली** * से, जो व्यवहारमें है, पाठकोंके विचारार्थ नीचे उद्धृत किये जाते हैं —

नियम नं० :—

५७—पाठशालाके अध्यापक व अध्यापिकाओंकी छुट्टीको स्वीकार करना तथा दोनों पाठशालाओंका निरीक्षणादि करना अथवा उचित समझनेपर, सभाकी सम्मति लेकर कन्या-पाठशालाका निरीक्षणादि हेड्मास्टरको, सौंपना।

५८—वार्षिक रिपोर्ट बनाकर छपवाना।

५९—आवश्यकतानुसार अध्यापकोंको नियत अथवा पदसे पृथक् करना और पेबिलपर हस्ताक्षर करके कोषाध्यक्षके पास भेजना।

७१—अंग्रेज़ी विभागकी पढ़ाईका समय ११ से ४ बजेतक ५ घण्टेका रहेगा, परन्तु विशेष गर्मी पड़नेपर प्रातःकाल ६॥ से १०॥ बजेतक केवल चार घण्टेका रहेगा। संस्कृत तथा धार्मिक ग्रन्थोंकी पढ़ाई ५ वा ४ घण्टे अंग्रेज़ी विभागके अनुसार होगी।

८४—किसी कर्मचारीको यदि असावधान अथवा नियम-विरुद्ध देखे एकदम उसे भविष्यत्में वैसा न करनेको कहे,

* संवत् १९७६ वि० में वैदिक यंत्रालय अजमेरमें ... हेड्मास्टर अथवा सेक्रेटरी श्री, जैन पाठशाला, ... से मिल सकती है।

यदि फिर भी उसी प्रकार देखे तो रिमार्कबुकमें नोट करके उसके हस्ताक्षर लेते जाना और फिर इनको मासिक रिपोर्टमें सम्मिलित करना।

८६—पाठशालाके आफ़िस-सम्बन्धी सब कार्योंको करना व कराना और सब काग़ज़ोंको सम्हालकर रखना।

६७—पाठशालाके उन्नति विषयक अपने अपने विचार व प्रस्तावोंको लेखद्वारा हेड्मास्टरपर सूचित करना।

१०५—एक वर्षमें पाठशालाके अध्यापकों तथा अन्य कर्मचारियोंको हक़को एक मासकी छुट्टी सवेतन मिलेगी।

१०७—रियायती छुट्टीका हक़ ११ मासकी निरन्तर सेवा पीछे एक मासका होगा और तीन महीनेसे ज़ियादा हक़ न होगा, ग्रीष्मकालकी छुट्टी होनेपर यह रियायती छुट्टी आधे वेतनपर मिलेगी।

१०८—बीमारीकी हालतमें डॉक्टरका सर्टीफ़िकेट पेश करनेपर हक़ मुनासिब छुट्टी दी जावेगी, पर कुल छुट्टी ६ माससे ज़ियादा न चढ़ेगी।

११०—केज़ुअल और रियायती छुट्टी दो अध्यापकोंको एक साथ नहीं मिलेगी, परन्तु ख़ास ज़रूरतपर एक हफ़्तेतक दी जा सकेगी।

१११—परीक्षा व पाठशालाके किसी ज़रूरी मौक़ेपर किसी प्रकारकी छुट्टी किसीको न मिलेगी।

११४ - छुट्टीपर जानेवाले अध्यापक व अध्यापिकाको यदि

परिशिष्ट नं० ११

पाठशालाके वे नियम जो इस पुस्तिकामें उल्लिखित हैं, श्री जैन पाठशाला (बीकानेर) की **नियमावली** * से, जो व्यवहारमें है, पाठकोंके विचारार्थ नीचे उद्धृत किये जाते हैं —

नियम नं० :—

५७—पाठशालाके अध्यापक व अध्यापिकाओंकी छुट्टीको स्वीकार करना तथा दोनों पाठशालाओंका निरीक्षणादि करना अथवा उचित समझनेपर, सभाकी सम्मति लेकर कन्या-पाठशालाका निरीक्षणादि हेड्मास्टरको सौंपना।

५८—वार्षिक रिपोर्ट बनाकर छपवाना।

५९—आवश्यकतानुसार अध्यापकोंको नियत अथवा पदसे पृथक् करना और पेबिलपर हस्ताक्षर करके कोषाध्यक्षके पास भेजना।

७१—अंग्रेज़ी विभागकी पढ़ाईका समय ११ से ४ बजेतक ५ घण्टेका रहेगा, परन्तु विशेष गर्मी पड़नेपर प्रातःकाल ६॥ से १०॥ बजेतक केवल चार घण्टेका रहेगा। संस्कृत तथा धार्मिक ग्रन्थोंकी पढ़ाई ५ या ४ घण्टे अंग्रेज़ी विभागके अनुसार होगी।

८४—किसी कर्मचारीको यदि असावधान अथवा नियम-विरुद्ध देखे तो एकदम उसे भविष्यत्में ऐसा न करनेको कहे,

---

* यह नियमावली संवत् १९७६ वि० में वैदिक यंत्रालय अजमेरमें मुद्रित हुई है। सम्भवतः हेड्मास्टर अथवा सेक्रेटरी श्री. जैन पाठशाला, बीकानेरको लिखनेसे बिना मूल्य प्राप्त हो सकती है।

परिशिष्ट नं० १२

वार्षिक परीक्षा सन् १९२३ ई०—प्रारम्भिक हिन्दी कक्षा (सी) :—

क्रम संख्या	नाम विद्यार्थी	कक्षा-परीक्षा फल	उच्च परीक्षा फल	विशेष विवरण
		पूर्णाङ्क	१००	
१	मोहनलाल देवानी	८८	८४	
२	मोहनलाल कोठारी	८६	७६	
३	मोतीमल सोनार	८६	७०	
४	फतेहचन्द सोनार	८०	७४	
५	धनगुप्त सेवक	७६	६६	
६	मोहनलाल कोठार	७६	४८	
७	रामनारायण ब्राह्मण	७२	५४	
८	धनराज सोनार	७२	३८	
९	रामगिरि स्वामी	७०	७०	

अपनी स्वीकृत छुट्टीके उपरान्त किसी ज़रूरी कामपर पाँच दिन से ज़ियादा छुट्टी बढ़वानी हो तो अर्ज़ी अपनी पहिली छुट्टीकी मियादमें ऐसे समयमें भेजनी चाहिये कि उसका जवाब वापिस आ सके अन्यथा छुट्टी स्वीकार नहीं होगी।

११५—यदि कोई कर्मचारी पाठशाला छोड़ना चाहे तो उसे एक मास पूर्व सूचना देनी चाहिये, यदि कमेटी किसीको पृथक् करना चाहे तो भी एक मास पूर्व सूचना दे दी जावेगी। परन्तु यदि किसी कर्मचारीका आचरण बहुत ही अयोग्य वा पाठशाला-को हानिकारक प्रतीत होगा तो वह सहसा पाठशालासे पृथक् कर दिया जावेगा।

१२३ (ड) - पाठशालामें कार्यसंचालन और सुप्रबन्धके हेतु स्कूलके नये-पुराने सामानकी फ़िहरिस्त रहेगी।

परिशिष्ट नं० १३

जब किसी देश या समाजके नेता, सुधारक, शुभचिन्तक अथवा सत्य-प्रेमी अपनी सम्मति प्रकट कर किसी देश, समाज अथवा संस्थाकी त्रुटियोंका दिग्दर्शन कराते हैं तो उनका भाव किसीका अपमान अथवा आक्षेप आदि करनेका कदापि नहीं होता, वरन् उनकी हार्दिक इच्छा यही रहती है कि किसी प्रकार सच्ची उन्नति हो। इसी भावको लेते हुए नीचे लिखे महानुभावोंने जैन-समाजके प्रति समय समयपर अपनी अपनी सम्मति प्रकट-कर सहृदयता तथा शुभचिन्तकताका परिचय दिया है—ऐसे ही सज्जनोंको त्रुटियाँ दिखलायी देती हैं। चापलूसोंको तो खुशा-मदकी माला फेरनेसे फुर्सत ही नहीं, भला त्रुटियाँ देखें तो कैसे देखें !:—

ओसवाल...इस जातिमें यदि कमी है तो एक बातकी है, और वह कमी ऐसी अनुचित है कि उसके कारण उसकी सभ्यता, प्रतिष्ठा और महत्तापर भयङ्कर दोष लगता है। यह कमी है विद्या-प्रचारकी।......इस जातिमें शिक्षित मनुष्योंकी संख्या नितान्त अल्प है।......यदि यह जाति शिक्षा-सम्पन्न हो तो इसकी व्यापारोन्नति दूनी-चौगुनी हो सकती है।

—श्रीयुत कन्नोमलजी, एम० ए०

—("ओसवाल" द्वितीय वर्ष, अङ्क ३)

सारे भारतवर्षकी जातियाँ गहरी नींदसे जागकर उन्नति

१०	मोहनलाल राखेचा	६८		उपस्थित न था, आनेपर तरक्की हुई।
११	शिखरचन्द कोचर	६२		डबल-परीक्षा-कोर्स पढ़ा नहीं था।
१२	ऋद्धिकरण भणशाली	६०½	३२	तरक्की दी।
१३	रामकृष्ण सोनार	५४	...	
१४	फाल्गुणचन्द सेठिया	२२	..	
१५	शिखरचन्द डागा	१४	...	अनु० उत्तीर्ण
१६	उत्तमचन्द सोनार	२	...	
१७	ग्वालदास पुरोहित	०	...	

परीक्षक —

श्रीयुत या० रूपचन्दजी सुराना, उपमन्त्री,
श्री जैन पाठशाला, बीकानेर।

विशेषकर ऐसी दुर्घटनायें घटित हो जाती हैं जो हृदयको व्यथित कर देती हैं.........मैं छोटे मुँह बड़ी बात कहनेको बाध्य होकर स्पष्ट चेतावनी दे देता हूँ कि इस समाजका अन्त निकट है।

—श्रीयुत मोतीचन्दजी वैद, मुथा, चरखरी स्टेट।
("ओसवाल" वर्ष ३, अङ्क ६)

अब चेतिये,ज़माना पलट गया है। सब समाजें अपनी अपनी गिरी हुई दशापर ध्यान देके निद्रासे जागृत होके उन्नतिकी राहको आँख फैलाकर देख रही हैं और विद्यावल तथा एकतासे उन्नति कर रही हैं। परन्तु अफ़सोस ! सख़्त अफ़सोस कि हमारी ओसवाल समाज अभीतक घोर निद्रामें सो रही है। एकता और विद्योन्नतिकी बात तो अलग रही, मिथ्या ज्ञानसे उलटे द्वेष और फूट आपसमें बढ़ रही है।

—ओसवाल समाजका एक हितेच्छु युवक।
("ओसवाल" वर्ष ३, अङ्क ७)

सज्जनो ! प्राचीनकालमें किन किन कारणोंके प्रादुर्भाव होनेसे समाजकी उन्नत दशा थी ! और आजकल किन किन कारणोंके होनेसे अवनत दशा है।.........उन्हें ज़रा ग़ौरसे बाँचनेकी या सुननेकी कृपा करेंगे तो शीशेकी मानिन्द उन्नत और अवनत दशाका हाल मालूम हो जायगा।

लगी हुई हैं, केवल हमारी ओसवाल जाति अवनति-दशामें पड़ी हुई घोर निद्रा ले रही है............इन सब कुरीतियोंका सरदार केवल शिक्षाका अभाव है।

...[स्वर्गवासी] श्रीयुत कानूरामजी वर्डिया, बीकानेर
—("ओसवाल" वर्ष २, अङ्क ४)

आज प्रत्येक शिक्षित जैनके हृदयमें.........क्योंकि जब हम दूसरी जातियोंपर दृष्टि डालते हैं तब उनकी अपेक्षा हम अपनेको अवनत ही पाते हैं............अपने अपने लड़कोंको उच्च शिक्षा दो, विज्ञान उद्योग आदिकी शिक्षाके लिये समुद्र-पार भेजो। विलासिताको त्यागकर सुकुमारताको छोड़कर संयमी और बलवान बनो।

—श्रीयुत जगमन्दिरलालजी जवेरी।
("ओसवाल" वर्ष २, अङ्क १०)

यदि......जबकि समस्त संसारमें उन्नतिकी पवन प्रबल वेगसे प्रवाहित हो रही है तब हमारी समाजमें उन्नति कैसे हो, इसकी पूछताछ मची है। मैं यह कभी कहनेका साहस नहीं कर सकता कि यह समाज उन्नतिके शिखरका मार्ग ही नहीं जानती वरं जानती हुई कुमार्गका अवलम्बन कर रहा है यह कहनेको रुक भी नहीं सकता.........वैसे तो इस समाजमें अविचारने अपना केन्द्र स्थान बना ही लिया है। किन्तु कभी कभी क्या

विशेषकर ऐसी दुर्घटनायें घटित हो जाती हैं जो हृदयको व्यथित कर देती हैं.........मैं छोटे मुँह बड़ी बात कहनेको बाध्य होकर स्पष्ट चेतावनी दे देता हूँ कि इस समाजका अन्त निकट है।

—श्रीयुत मोतीचन्दजी वैद, मुथा, चरखरी स्टेट।
("ओसवाल" वर्ष ३, अङ्क ६)

अब चेतिये,ज़माना पलट गया है। सब समाजें अपनी अपनी गिरी हुई दशापर ध्यान देके निद्रासे जागृत होके उन्नतिकी राहको आँख फैलाकर देख रही हैं और विद्याबल तथा एकतासे उन्नति कर रही हैं। परन्तु अफसोस! सख्त अफसोस कि हमारी ओसवाल समाज अभीतक घोर निद्रामें सो रही है। एकता और विद्योन्नतिकी बात तो अलग रही, मिथ्या शानसे उलटे हैं व और फूट आपसमें बढ़ रही है।

—ओसवाल समाजका एक हितेच्छु युवक।
("ओसवाल" वर्ष ३, अङ्क ७)

सज्जनो! प्राचीनकालमें जिन जिन कारणोंके प्रादुर्भाव होने-से समाजकी उन्नत दशा थी! और आजकल जिन जिन कारणोंके होनेसे अवनत दशा है।.........उन्हें ज़रा गौरसे सोचनेकी या सुननेकी कृपा करेंगे तो शीशेकी मानिन्द उन्नत और अवनत दशाका हाल मालूम हो जायगा।

अन्दर ७० हज़ारके क़रीब घटी है........यदि ऐसा ही सिल-सिला हानि होनेका जारी रहा तो १७८ वर्षोंमें जैनोंका नाम-निशान न रहेगा।

—"अहिंसा-प्रचारक" अजमेर, वर्ष १, अङ्क २४,

आज क़रीब ८ माससे जैन जनताके सन्मुख गला फाड़ फाड़कर चिल्ला रहे हैं कि आप अपना आलस्य त्यागिये, मोहनिद्राको तोड़िये, आपसके भेदभावको अग्निमें भस्मीभूत कीजिए और सब मिलकर सङ्गठन कीजिए, सङ्गठनकी बड़ी आवश्यकता है, सङ्गठन समाज और जातिका जीवन है। सङ्गठन समाजका प्राण है। सङ्गठन समाजकी शक्ति है। किन्तु किसीने भी इस तरफ़ ध्यान न दिया। आज भारतमें चहुँ ओर सङ्गठन हो रहा है, किन्तु जैनोंके अंदर इस बातका ज़रा भी विचार नहीं है। . इस कान्फ्रेन्स-भाइयो, ...सर्वप्रथम आप अपना समाजका संगठनका कार्य आरम्भ कीजिये, जिससे समाजमें शक्ति हो और प्रेम प्रीति बढ़े।

—"श्री०श्वे०स्था०जैन कान्फ़रेन्स," अजमेर,वर्ष११, अंक २८

प्यारे भाइयो, यह कहने या बतलानेकी विशेष रूपसे आवश्यकता नहीं है कि अपनी समाज शिक्षासे कितनी विमुख है। और इसी कारणसे समाजमें नाना प्रकारकी बुराइयाँ आ गई हैं। अगर लोग शिक्षित हों, अगर समाज शिक्षित हो तो भी सम्भव नहीं कि समाजमें इतनी बुराइयोंका प्रवेश हो। पर आई साहब यहाँ

आप देखते हैं कि अपनी सन्तानोंको, अपने भाइयोंको पूर्ण रूपकी शिक्षा देना एक प्रकारका पाप सा समझते हैं। आप प्रत्यक्ष ही देखते हैं कि लोग स्त्रीशिक्षासे कितना चिढ़ते हैं।........अगर बालक कहीं तार आदिका अंग्रेज़ीमें लिखना सीख ले तो वह मानों पूरा पण्डित हो गया। किन्तु शोक है ऐसे पांडित्यपर! कि जो इस नाम मात्रके नामादि ही लिख लेनेमें अपनेको पांडित्यमें कालिदाससे भी उच्च समझने लगते हैं।.........आप जानते हैं कि प्रत्येक देश, जाति और समाजकी उन्नति वहांकी शिक्षा-ही-पर निर्भर रहती है।...........अब मैं अधिक न कहकर यही प्रार्थना करता हूँ कि आप लोग शिक्षाकी ओर विशेष ध्यान देनेका कष्ट उठावें।

—श्रीयुत मालचन्द कोठारी, चूरू (बीकानेर-राज्य)।
(ओसवाल-समाज-सुधारसे)

ओसवाल बन्धुओंकी सेवामें निवेदन है कि इस परिवर्त्तन-युगमें आप कब तक गहरी निद्रामें सोते रहेंगे। इस तरह सोनेसे समाज कबतक जीवित रह सकती है।.... .ओसवाल-प्रतिनिधि-सभा कुछ कालसे जाति-सुधारके निमित्त प्रति रविवारको आप लोगोंको निमंत्रित कर रही है।......जिस रूपमें ओसवाल समाज चल रही है यदि यथाशीघ्र समाजमें सुधार और सङ्गठन नहीं हुआ तो जान लीजिये निश्चय:ही समाजको अन्य समाजोंके सामने नीचा देखना पड़ेगा। अतएव अपनी प्रतिनिधि सभाको सँभालिये

और उसके द्वारा व्यापार एवं अन्य सुमार्गोंपर उन्नतिशील हो चढ़िये और समाजको गौरवान्वित कीजिये। भरोसा है, प्रार्थना विफल न होगी।

श्रीयुत फतैचन्द नाहटा, १२४ केनिङ्ग स्ट्रीट।
("कलकत्ता-समाचार," श्रावण शुक्ल ११, सं० ८१, संख्या १४७)

वेद हैं विचारो चार शास्त्र उर धारो पट,
त्यागदो विकार "मिश्र" ये ही मन मारेंगे।
काल फाल खेदै कलिकालको प्रभाव यही,
अन्त काल गाल सब छनमें सिधारेंगे॥
शाल और दुशाल अश्वशाल धनमाल आदि,
प्यारे बन्धु लाल, बाल येही जाल डारेंगे।
यातें छल छिद्रता दुराय व्यवहार करो,
साँचेहू सुजान आप जातिको सुधारेंगे॥

—श्रीयुत शालिग्रामजी मिश्र, हेडमास्टर, सौंढलपुर, होशंगाबाद।
("ओसवाल" वर्ष ४, अंक १२)

परिशिष्ट नं० १४

श्री महाराज बीकानेर दरबारका आदर्श कानून

ऐक्ट नं० २ सन् १६१६ ई०

रियासत बीकानेरका लड़कोंके तम्बाकू पीनेको रोकनेका ऐक्ट।

२१ अप्रैल सन् १६१६ ई० को श्री जी साहब बहादुरकी मंजूरी हासिल हुई

चूँकि मसलहत है कि रियासत बीकानेरके लड़कोंके तम्बाकू पीनेको रोकनेका क़ानून बनाया जावे, इसलिये हस्ब जैल अहकाम सादिर किये जाते हैं —

दफा १—(१) यह ऐक्ट लड़कोंके तम्बाकू पीनेको रोकनेका ऐक्ट सन् १६१६ ई० कहलायेगा। — छोटा नाम वसअत मुक़ाम और शुरू निफ़ाज

(२) यह ऐक्ट रियासतके कुल म्युनिसिपेल क़स्बों और उन तमाम जगहोंसे, कि जिनको श्री जी साहब बहादुरकी गवर्नमेण्ट सीग़ा माल वक़्तन फ़वक़्तन राजपत्र बीकानेरमें मुश्तहिर करे, मुतालिक़ होगा।

(३) यह तारीख़ १ जुलाई सन् १६१६ ई०से जारी होगा।

दफा २—इस ऐक्टमें अगर कोई अमर मज़मून तारीफ़ात।

या क़रीने इबारतके लिहाज़से ख़िलाफ़ न पाया जावे तो—

'पुलिस अफ़सर'से मुराद एक मुक़र्रिर की हुई जमात पुलिसके किसी मेम्बरसे है और इसमें गाँवका चौकीदार भी शामिल है।

'सिगरेट' में कटा हुआ तम्बाकू जो काग़ज़ या तम्बाकूके पत्ते या किसी दूसरी चीज़में इस तरहपर लिपटा हुआ हो कि जो तम्बाकू पीनेके वास्ते फ़ौरन इस्तेमालके क़ाबिल हो, शामिल है।

लड़कोंके हाथ तम्बाकू बेचनेपर सज़ा।

दफ़ा ३—(१) अगर कोई शख़्स किसी ऐसे लड़केके हाथ, कि जो दीखनेमें १४ वर्षसे कम उम्रका हो, सिवाय इख़्तियार तहरीरीके जो ऐसे लड़केके माता पिता, सरपरस्त या आक़ाने दिया हो, तम्बाकू, सिगार, सिगरेट या बीड़ी बेचे तो वह पुलिसके इस्तग़ासेसे जुर्म साबित होनेपर पहली वारके जुर्ममें जुर्मानेका मुस्तोजिब होगा जो ५) से ज़ियादह न हो और दूसरी वारके जुर्ममें जुर्मानेका मुस्तोजिब होगा जो १०)से ज़ियादह न हो, और तीसरी वारके जुर्ममें और इसके बाद हर एक जुर्मपर जुर्मानेका मुस्तोजिब होगा जो २०) से ज़ियादह न हो।

(२) ज़ाब्ता जो अमलमें लाया जावेगा वह ऐसा होगा कि मुक़द्दमात क़ाबिल इजराय समनमें होता है।

शारह आममें तम्बाकू पीते हुए लड़केसे

दफ़ा ४—(१) अगर कोई लड़का, जो ज़ाहिरा १४ वर्षसे भीतर हो, सड़क या दूसरे शारह आमपर

सिगार, सिगरेट, बीड़ी, चिलम, हुक्का या पाइप पीता हुआ मिले तो हर पुलिस अपसरका, जो वर्दी पहने हुए हो, यह फ़र्ज होगा कि तमाम ऐसी चीज़ें जो ऐसे लड़कोंके पास हों, ज़ब्त कर ले।

सिगार वगैरह ज़ब्त करनेकी बाबत पुलिस अफ़्सरका इख्तियार

(२) ऊपर लिखे हुए ज़िमनी दफ़ा (१)के इगरज़के लिये पुलिस अपसर मजाज़ होगा कि वह हर एक लड़केकी तलाशी ले जो इस तरहपर तम्बाकू पीता हुआ मिले।

(३) इस ज़िमनी दफ़ाकी तामीलमें ज़ब्त की हुई चीज़ोंका तसर्रुफ़ ऐसे तरीक़ेसे किया जावेगा जो श्री जी साहब बहादुर-की गवर्नमेण्टकी मंज़ूरी हासिल करके इन्स्पेक्टर-जनरल पुलिस मुक़र्रर करे।

परिशिष्ट नं० १५

(अ) पत्र नं० १७४ ता० २२-१०-२३ :—

श्रीमान् हेड्मास्टरजी,

श्री जैन पाठशाला, बीकानेर,

ता० २२-१०-२३,

महाशयजी,

"साँचमें आँच" नामका नोटिस आपकी ओरसे प्रकाशित होकर बँट रहा है। यह आम नोटिस है, इस नोटिससे मुझसे बढ़कर घनिष्ट सम्बन्ध किसी दूसरेसे नहीं है। आम नोटिस

होनेके कारण आपसे सादर निवेदन है कि इसकी कम-से-कम २५ प्रतियाँ मुझे दे कृतार्थ करें। इनको मैं अपने परिचित-पहचानियोंमें बाँटूँगा—इसका बाँटना है भी उचित।

अतः आपसे सादर निवेदन है कि मेरी प्रार्थनापर पूर्ण विचार कर मुझे *नोटिस देनेकी कृपा करें—चाहे मेरे मकानपर भेजवा दें अथवा जहाँ चाहें वहाँ मुझे बुलाकर दे देवें। आशा है, उचित तथा शान्तिदायक उत्तर दे कृतार्थ करेंगे।

भवदीय—

रामलौटन प्रसाद, लेट असिस्टेण्ट मास्टर, श्रीजैनपाठशाला।

पता—बेगानी पिरोल, बीकानेर।

(घ) पत्र नं० १७६ ता० २४-१०-२३:—

श्रीमान् हेड्मास्टर जी,

श्री जैन पाठशाला, बीकानेर,

२४-१०-२३

महाशय जी,

मैंने आपकी सेवामें पत्र नं० १७४ ता० २२-१०-२३ भेजकर सादर निवेदन किया था कि मुझे "साँचमें लाँछ" नामके नोटिस* भेजकर कृतार्थ करें, किन्तु आपने कुछ भी उत्तर नहीं दिया। यह तो आम नोटिस है, भला इसके देनेमें इतना विलम्ब क्यों है? इसका तो जितना प्रचार अधिक हो उतना ही अच्छा है—फिर मुझे तो प्रार्थनानुसार देना ही उचित है। अतः सादर निवेदन है

* नोटिसोंका देना तो दूर रहा, पत्रोत्तरतक नहीं मिला!

कि जितनी प्रतियाँ आप आसानीसे दे सकें, आज भेजकर अनुगृहीत करें।

भवदीय—
रामलौटन प्रसाद, लेट असिस्टेण्ट मास्टर,
श्री जैन पाठशाला, बीकानेर

परिशिष्ट नं० १६

मैंने प्रचारार्थ अपने नोटिसोंको बीकानेरके अतिरिक्त भारत तथा भारतके बाहर भी कुछ प्रसिद्ध प्रसिद्ध स्थानोंमें भेजा है। उदाहरणार्थः—

एच. एच. दी महाराजा साहिब तथा महाराज कुमार साहिब, बीकानेर। एच० ई० दी वाइसरॉय ऑव इण्डिया, दिल्ली। एच. एच. दी महाराजा साहिबान ऑव कश्मीर, बड़ौदा, मैसूर, नैपाल जयपुर, जोधपुर, उदयपुर, अलवर, भरतपुर, तथा एच. एच. दी नव्वाब साहिब ऑव हैदराबाद (दक्षिण) आदि आदिकी सेवामें भेजा गया था। इसके सिवाय ऑल इण्डिया कांग्रेस कमेटी आदिकी सेवामें भी भेजा गया था।

दी राइट ऑनरेबुल दी स्पीकर ऑव दी हाउस आव कॉमन्स, दी हाउस ऑव पार्लामेण्ट, लन्दन. तथा दी राइट ऑनरेबुल दी प्रेसिडेण्ट ऑव दी रिपबलिक ऑव दी यू. एस. ऑव अमेरिका (वांशिङ्गटन) आदि आदिकी सेवामें भेजा गया था।

परिशिष्ट नं० १७

नोटिसोंके विषयमें चन्द सम्मतियाँः—

श्री जैन पाठशाला बीकानेर—यहाँकी जैन पाठशालाके सम्बन्धमें "फोचर-शाह तिमिर भास्कर" नामक नोटिस प्रकाशित हुई है। पाठशालाके संचालक शाहजीने उसका प्रतिवाद* किया है। मैंने सत्यता जाँचनेके लिये जाँच की तो मालूम हुआ कि दोष शाहजीका ही है। पाठशालाके व्ययमें वृद्धि और नये हेड्मास्टरकी नियुक्ति होनेपर भी अवस्था सन्तोषजनक नहीं है। सुना जाता है कि शिवबख्सजी फोचर सेक्रेटरीका विश्वास है कि यह पाठशालाके विरुद्ध आन्दोलन कोई ओसवाल ही गुप्त रीतिसे सहायता देकर करा रहा है। यदि ऐसा हो तो दानी महाशयको अपना नाम प्रकट कर उनका भ्रम दूर कर देना चाहिये।

—एक जैनी।

("तरुण-राजस्थान," अजमेर, ता० २४-२-२४)।

श्री डूँगर कॉलेज बीकानेर—"साँचको आँच क्या ?" नामक पुस्तकाकार नोटिस बाँटनेपर इस कॉलेजके हेड्मास्टर श्रीयुत पं० चुन्नीलालजी शर्म्मा एम. ए, एल. एल. बी, ने ता०

* "प्रतिवाद" का होना सम्पादक अथवा संवाददाताने कदाचित् भ्रमवश लिख दिया है—उसका प्रतिवाद तो आजतक भी नहीं हुआ। हाँ, भूतपूर्व दो नोटिसोंका प्रतिवाद बड़ी धूमधामके साथ अवश्य हुआ है।

२७-८-२३ को नोटिसद्वारा अध्यापकोंको सूचित किया कि इस प्रकारके नोटिस आदि न लें।

विद्यालय ही एक ऐसी संस्था है, जहाँपर ज्ञानकी शिक्षा देकर सत्यासत्य निर्णयको शक्ति प्रदान की जाती है। इसी अधारपर मैंने अधिकतर नोटिसोंका वितरण विद्यालयोंमें किया है। एक प्रधान अध्यापकका यह कर्त्तव्य कहाँतक प्रशंसनीय तथा विचारपूर्ण है, पाठकगण स्वयं विचार देखें।

श्रीगुण प्रकाशक सज्जनालय बीकानेर—ता०८-९-२३ई०

मान्यवर मंत्रीजी महोदय,

सुननेमें आया है कि "सांचको आँच क्या?" नामक पर्चाका यहाँसे बहिष्कार कर दिया गया है। जब कि उसके प्रकाशक तथा लेखकका ऊपर नाम लिखा हुआ है तदर्थ वह उत्तरदायी भी है। और न राज्यने ही उसे आपत्तिजनक माना है, तो फिर ऐसी सर्वजन एवं सर्व धर्मोपकारिणी संस्थाके वाचन-स्टेजसे निर्वासित कर देना कौतूहल-जनक नहीं है! क्या अखबारों तथा पुस्तकोंमें किसी सताये हुए दुखीकी दुखगाथा नहीं रहती? तथा उस संस्थाके अथवा इतरजनके विरुद्ध कुछ कम बातें रहती हैं! उसने छपाया किस लिये है! सिर्फ़ प्रचार करनेको। सिर्फ़ बीकानेरमें ही नहीं अन्यत्र भी प्रचारार्थ प्रेषित किये गये हैं। तथापि यद्यपि न तो किसी स्थानसे बहिष्कार ही किया गया और न राज्यद्वारा रोका गया। मुझे सिर्फ़ इतना ही कहना है कि उस पर्चेके यहाँपर रहनेसे किसीभी प्रकार इस संस्थाके

उद्देश्यमें ग़लल नहीं पड़ता है, न किसी मनुष्यका वैमनस्य ही होना है, यहाँपर सब प्रकारके मनुष्य आते हैं। इस संस्थाका किसीसे विरोध नहीं। निष्कर्ष केवल यह है कि बहिष्कारका कारण ज्ञान हो जाना चाहिए।

आपका शुभचिन्तक,
—पोलाराम गोस्वामी।
(सम्मति-रजिस्टर पृष्ठ ७६ से उद्धृत)।

उत्तरः—

व्यक्तिगत आक्षेपसे प्रेरित पत्रोंको संस्थामें स्थान नहीं दिया जाता। यही नियम भिन्न भिन्न पंथोंके लिये भी लागू है।

—श्रीयुक्त युगलसिंहजी [एम० ए०, एल०, एल० बी०]
मन्त्री [तथा भूतपूर्व अवैतनिक अध्यापक, श्रीजैन पाठशाला, बीकानेर]

(उपरोक्त रजिस्टर पृष्ठ ७७ से उद्धृत)

बीकानेरसे 'एक जैनी' वहाँकी 'जैन पाठशाला'के सम्बन्धमें कुछ शिकायतें करते हैं। प्रबन्धकर्त्ताओंको उन्हें दूर करना चाहिए।

—"अर्जुन," दिल्ली, ८ दिसम्बर सन् १९२४ ई०

नोट—"अर्जुन" में आन्दोलन नोटिसका ज़िक्र नहीं है, किन्तु आन्दोलन-समयका समाचार जान उल्लेखित कर दिया है। सम्भव है कि कोई विशेष गुप्त शिकायतें हों जिन्हें सम्पादक महोदयने स्पष्ट प्रकाशित

परिशिष्ट नं० १८

इस पॉलिसीयु-गर्मे चापलूसोंकी विशेष क़दर है,हर जगह पैठाव है, सभा-सोसाइटियोंमें सादर चावके साथ बुलाहट है। चापलूस सदा खुशामद-पसन्द शब्दोंकी खोजमें रहता है। आजकल प्रायः सभा-सोसाइटियों तथा अन्य संस्थाओंमें सभापति, मंत्री तथा अन्य कर्मचारियोंके प्रसन्नतार्थ चापलूस निम्नलिखित भाव प्रकट करते हैं और अफ़सरान पूर्ण अनधिकारी होते हुए भी फूल कुप्पा हो जाते हैं :—

"श्रद्धास्पद सेवक समाजके सुजान वर,
सुजन सुशील सत गुण गण धाम हैं।
सहज सुभावके दुराव कछु राखैं नाहिं,
भाखें नाहिं असत करत पर काम हैं॥
सेवा नाथ ! केहि विधि रावरी बखानि सकौं,
सेवाके गनाइवेको कहँ इते नाम हैं।
लोक उपकार हित आपको जनम यह,
आजके जमाने भगवान आप राम हैं॥"

बस—समाप्त होते ही करतलध्वनि आरम्भ! वाहवाह, कमाल है—इसके आगे सूर, केशव, तुलसी आदि सब झूठ!!

करना उचित तथा देश-हितकर न समझा हो—इशारामात्र कर दिया है।

और कोई लिखित सम्मति आदि मेरे देखने अथवा सुननेमें नहीं आयी है। बहुत सम्भव है कि और भी अनेकों सम्मतियाँ हों जिन्हें ज्ञात होनेपर यथासमय सूचित करनेकी यथाशक्ति चेष्टा करूँगा।

एक नवयुवक, जो पहले-हीसे इस कार्यके लिये फ़िट (योग्य) चुना रहता है, पुष्प-माला पहनानेके लिये हाव भाव करता हुआ शीघ्र भरी सभामें आ उपस्थित होता है !!! यह दृश्य वर्णन करने-योग्य नहीं, देखते ही बनता है। भला कहिये, इस नवयुग बहार-के आगे पुरानी सभ्यता तथा बहार कहाँ ? ..आदि आदि।

अब पाठक स्वयं विचार करें कि सुधार तथा सत्य-प्रकाशमें कितना विलम्ब है, और हम लोग किधर जा रहे हैं !! क्या प्राचीन सभ्यता लेकर निखट्ट बनेंगे !!!—बस, दाँतों तले जीभ दबानेके अतिरिक्त और कुछ भी वश नहीं।

परिशिष्ट नं० १६

कोचर महाशय और रिपोर्ट

श्री जैन पाठशाला बीकानेरकी यह १६ वर्षीय (१६०७--२१) रिपोर्ट केवल ४० पृष्ठोंमें सर्वप्रथम प्रकाशित होकर इसी दिस-म्बर मासमें जनतामें बाँटी गयी है। मैंने सत्य-प्रेमसे, समाज तथा देशकी भलाई समझ, इसपर अपनी जानकारी के अनुसार थोड़ा प्रकाश डाला है, जिससे जनताको इसका रहस्य विदित हो गया होगा।

अति खेद है कि इस प्रकारकी झूट बातें लिख जनताको धोखा दिया जा रहा है। ऐसे व्यवहारोंसे समाज तथा धर्मकी कहाँतक उन्नति हो सकती है, पाठकगण स्वयं विचार करें।

व्यवहारोंको आजकल प्रायः लोग भ्रमवश अहिंसात्मक क
कहने लगे हैं।

आश्चर्य है कि श्रीयुत पं० चिम्मनलालजी गोस्वामी एम,
जैसे सुयोग्य हेड्मास्टरके होते हुए रिपोर्टमें इस प्रकारकी असत
बातोंका समावेश निर्भीकताके साथ किया गया है। सम्भ
है कि गोस्वामीजीने शाहजीका विश्वास कर काग़ज़ोंको उन्हीं
हाथमें दे रक्खा हो।

इतने वर्षोंमें केवल दो ही अध्यापक (बाबू मया. भाई टी
शाह बी० ए० और पण्डित रामेश्वरदयालजी) वैतनिक अध्या
पकोंमें कोचर महाशयको प्रकटरूपमें धन्यवादके पात्र प्राप्त हु
हैं, जिनकी रिपोर्टमें मुक्तकण्ठसे भूरि भूरि प्रशंसा की गयी है
खेद है कि अन्य अध्यापकगण कर्त्तव्यपालनकी अवलेहना क
कोचर महाशयको खुश न कर सके।

इस रिपोर्टमें मेरे वर्त्तमान आन्दोलन तथा श्रीयुत गोस्वामीज
की नवीन नियुक्तिका पूर्णाभाव है! कदाचित् यह कहा जावे कि
पाठशालाका वर्ष ३१ मार्चको समाप्त हो जाता है और ये दोनों
बातें इसके पश्चात्‌की हैं। किन्तु ऐसा कहना मान्य नहीं हो
सकता; क्योंकि रिपोर्टमें ऐसी बातें भी पायी जाती हैं जो ३१
मार्च सन् १९२३ ई० तथा मेरे आन्दोलनके पश्चात्‌की हैं।
सी उपस्थितिमें इस प्रकारकी रिपोर्टका निकलना
न्तिदायक कैसे कहा जा सकता है? आपसे
रा है।

परिशिष्ट नं० २०

विविध विचार :—

मन्थराकी निस्स्वार्थताको प्रायः भारतवर्षका बच्चा बच्चा जानता है और उसके प्रेममय शब्दोंमें पड़ जो दशा कैकयी जैसी आदर्शशीला महारानीकी हुई है, किसीसे छिपी नहीं है। मन्थराके शब्दोंपर ध्यान देना अत्यावश्यक है—"कोउ नृप होय हमहिंका हानी। चेरि छाँड़ि अब होब कि रानी॥......आदि आदि।" कैसी जटिल समस्या है! कैसा जादू भरा है!! कितनी विचारशक्तिकी आवश्यकता है!!!

अब देखना है कि मेरे प्रतिद्वन्दी शाहजीके निस्स्वार्थ तथा निस्संकोच शब्दोंमें क्या असर है और इस अलौकिक जादूका समाज तथा देशपर क्या प्रभाव पड़ता है—"मैं अपने आत्मीय शुद्ध भावोंसे इस संस्थाका कार्य कर रहा हूँ और मुझे अपने आत्मप्रदर्शित पथसे विचलित करनेकी किसीकी सामर्थ्य नहीं है—मैं, निस्संकोच, पाठशालाके हितार्थ अपना पदत्याग करनेको सहर्ष उद्यत हूँ। .... आदि आदि!"

सत्य-ही-के कारण विभीषण और सुग्रीवने अपने अपने सगे अना-चारी और व्यभिचारी भाइयोंका वध कराया। सत्य ही के रक्षार्थ श्रीकृष्ण भगवानने, अपने खास मामा कंसका वध अपने हाथों ... के लिये राजा हरिश्चन्द्रने कौनसा कठिन

कष्ट नहीं भोगा? सत्य-ही-के लिये भक्त प्रह्लादने अपने पितासे पूर्ण असहयोग किया और इसीमें उसके पिताका वध हुआ। सत्य-ही के लिये ५ वर्षका बालक ध्रुव कड़ीसे कड़ी तपस्यापर उद्यत हो परम पदको प्राप्त हुआ। सत्य-ही-के लिये वीर बालक तथा आदर्श विद्यार्थी हक़ीक़तरायने प्रसन्नतापूर्वक अपना सिर कटवाया। सत्य-ही-के लिये नौशेरवाँ बादशाह पूर्ण प्रतापी होते हुए बुढ़ियाका झोंपड़ातक न ले सका। सत्य ही-के लिये मेवाड़के राणा राजसिंहका पुत्र भीमसिंह अपने अन्यायी पिताका सिर काटनेको तैयार था, किन्तु अन्यायके छोड़ते ही वही भीमसिंह पिताके चरणोंपर गिर सदाके लिये, राज्यका उत्तराधिकारी होते हुए भी, जंगलका वासी हुआ।…… आदि आदि।

अब कहिये न्याय और सत्यका कहाँ समर्थन नहीं हुआ! और जहाँ नहीं हुआ वहाँ शान्ति कहाँ रही?

यदि स्वार्थका परित्याग कर सब लोग विचारें तो उन्हें आप ही पता लग जायगा कि कौन कार्य यथार्थमें अच्छा है— बन्धुओंकी आँखोंमें धूल डालकर अपनी पाकेट भर दामन झाड़ना या उनकी आँखकी पट्टी खोलकर सचेत करना?

मर्द अन्यायके लिये कभी हाथ नहीं उठाता। हाँ, अन्याय-रोकना या आततायीको दण्ड देना हर एक भलेमानुसका है। भले आदमियोंका काम है कि वह बुरे आदमियोंको,

चाहे वे किसी भी जाति या धर्मके क्यों न हों, रोकें।

—माननीय पं० मदनमोहनजी मालवीय।

("अभ्युदय," प्रयाग, ३० अगस्त सन् १९२४ ई०)।

गृहस्थके लिये दूसरोंके किये हुए अपराधको शान्त भावसे सह लेना पाप है;उसे उस अपकारका बदला उसी समय और उसी स्थानपर उसी रूपमें लेनेकी चेष्टा करनी चाहिये, जिस रूपमें अपकार किया गया हो।

— स्वामी विवेकानन्द।

("मतवाला," कलकत्ता, १८ अक्तूबर सन् १९२४ ई०)।

अत्याचार करनेवाला निस्सन्देह पाप करता है, परन्तु उससे बढ़कर पापी वह निर्बल होता है, जिसपर अत्याचार होता है। निर्बलता मृत्युका चिन्ह है।

— भाई परमानन्दजी एम० ए०

"नेक बाशी व बदत गोयद् ख़ल्क़ बेह, कि बद बाशी व नेकत गोयद।" अर्थात् सुमार्गपर चलते हुए यदि लोग बुरा कहें तो यह उससे अच्छा है कि कुमार्गपर चलते हुए तुम्हारी प्रशंसा करें।

"गर रास्त सुख़न गोई बदर बन्द मानी,
बेह ज़ाँकि दरोग़त देहद अज़ बन्द रिहाई।"

तात्पर्य यह कि, यदि सत्य-भाषणसे तुम क़ैद हो जाओ
यह उस झूठसे अच्छा है जो क़ैदसे मुक्त कर दे।

—महात्मा शेख़शादी।)

"खलोंका कभी साथ करना नहीं,
कभी श्वानकी मौत मरना नहीं।
कभी आत्म-सम्मान खोना नहीं,
कभी देखकर दुःख रोना नहीं॥
किसी का कभी सत्व लेना नहीं,
खलोंको कभी दान देना नहीं।
किसीको अकारण सताना नहीं,
कभी गर्वसे फूल जाना नहीं॥"

'प्रकाशर्क' का श्रष्यंक,
लाहौर, ता० २६-१०-२४

"लक्ष्मी नहीं, सर्वस्व जावे, सत्य छोड़ेंगे नहीं;
अन्धे बनें पर सत्यसे सम्बन्ध तोड़ेंगे नहीं।
निज सुत-मरण स्वीकार है पर वचनकी रक्षा रहे,
है कौन जो उन पूर्वजोंके शीलकी सीमा कहे!"

—मैथिलीशरण गुप्त।

बालकोंकी शिक्षा निर्लोभी, मृदुभाषी, सत्यवादी, प्रेमी, संयमी, सदाचारी, परिश्रमी और धैर्यवान् पुरुषोंके अधीन हो।

"दुर्जनः परिहर्तव्यो विद्यया भूषितोऽपि सन् ।
मणिनालङ्कृतः सर्पः किमसौ न भयङ्करः ॥"

अर्थात् दुष्ट यदि विद्वान् भी हो तो भी त्यागने-ही-के योग्य है, जैसे मणिसे भूषित सर्प क्या भयानक नहीं होता ?

—भर्तृहरि।

"Cowards die many times before thier deaths
The valiant tastes of death but once "

—Shakespeare.

अर्थात् डरपोक अपने जीवनमें पग पगपर मृत्युको प्राप्त होता है, किन्तु दिलेर वीरताके साथ एक ही बार मृत्युका आनन्द लेता है।

——शेक्सपियर।

"ता हम चो कलम सर न नही दर तहे-कारद ।
हरगिज़ ब सर अगुश्त-निगारे नरसी ॥"

अर्थात् जबतक लेखनीकी भांति तू चाकूके नीचे सिर नहीं रक्खेगा, तबतक तू अपने प्यारेकी अँगुलियोंके सिरों (पोर) तक नहीं पहुँच सकेगा।

—श्रीस्वामी रामतीर्थ।

What shall it profit a man if he shall gain the whole world but lose his own soul अर्थात् यदि आत्माको खेच किसीने समस्त संसारको प्राप्त कर लिया, तो क्या लाभ!

—श्री स्वामी रामतीर्थ।

सत्यको न छोड़ो वीरो! चाहे जान यह तनसे निकले।

ओ३म् शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!

—रामलौटन प्रसाद।

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	६	बाधाए	बाधाएँ
३	२, ३	year's	years'
५	२०	अथवा	तथा
६	१४	ठकुरसुहाता	ठकुरसुहाती
१६	४	उपदेश	कोरा उपदेश
२७	७	है	हैं
२८	१०	भारतीयोंपर	भारतियोंपर
३१	१८	हू	हूँ
४२	७	५॥=)	५॥=)
५०	१६	बहुधा	यद्यपि
५३	१८	आप्य	आर्य
५४	२१	ता	सनदयाफ़्ता
५५	६	अपनी	जैन
५५	१८	अथवा	अन्यथा
"	२२	भाव) न	भाव न)
६०	१३	——	३६-४
६१	२	छात्रोंको	चन्द छात्रोंको
६३	५	जीवनलाल कोचर	जीवनमल कोचर
६८	१२	काना	काया
७३	७	कहते	कह देते
७—१५		अभीनवी	अभिनवी
		देता है	देते है
		"	पत्र नं०
			12-6-23
			कुछ भी

तात्पर्य यह कि, यदि सत्य-भाषणसे तुम क़ैद हो जा
यह उस झूठसे अच्छा है जो क़ैदसे मुक्त कर दे।

—महात्मा शेखसादी।

"खलोंका कभी साथ करना नहीं,
कभी स्वानकी मौत मरना नहीं।
कभी आत्म-सम्मान खोना नहीं,
कभी देखकर दुःख रोना नहीं॥
किसी का कभी सत्व लेना नहीं,
खलोंको कभी दान देना नहीं।
किसीको अकारण सताना नहीं,
कभी गर्वमें फूल जा

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	६	याधाए	याधाएँ
३	२, ३	year's	years'
५	२०	अथवा	तथा
६	१४	ठकुरसुहाता	ठकुरसुहाती
१६	४	उपदेश	कोरा उपदेश
२७	७	हैं	हैं
२८	१०	भारतीयोंपर	भारतियोंपर
३१	१८	दू	दूँ
४२	७	५॥≠)	५॥≠)
५०	१६	वहधा	बहुधा
५३	१८	आर्य्य	आर्य्यं
५४	२१	ता	सनदयाफ्ता
५५	६	अपनी	जैन
५५	१८	अथवा	अन्यथा
„	२२	भाव) न	भाव न)
६०	१३	——	३६-४
६१	२	छात्रोंको	चन्द छात्रोंको
६३	५	जीवनलाल कोचर	जीवनमल कोचर
६८	१२	काना	काया
७३	७	कहते	कह देते
७६	१५	अभीनवी	अभिनवी
७८	६	देता है	देते हैं
८४	१५	नं०	पत्र नं०
८६	२३	12-6-22	12-6-23
९१	५	कुछ	कुछ भी

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१४१	१०	[मेन्सस]	(मेन्सस)
१४३	१२	उचित है	उचित ही है
"	१७	letter	letters
१४५	२	नामासर	नापासर
१४७	२	यह कहावत	यह कहावत
१५४	९,१०	"ब्रूयान् सत्यमप्रियम्"	"ब्रूयादसत्यमपिप्रियम्
१५५	१४	dreads fire	dreads the fire
१५८	.१३	[चीफ जस्टिस]	(चीफ जस्टिस)
१५९	११	प्रत्यक्ष अनुमान	प्रत्यक्ष और अनुमान
१६५	१०	सबला	उसे सबला
१६८	१९	[पाठशाला]	(पाठशाला)
१७१	१८	नियम नं० १७	नियम नं० ७१
१७२	१८	cennot	cannot
१७३	१९	fergotton	forgotten
१७४	१६	मज़बुर	मजबूर
१७५	१७	[नहीं, वरन् सबकी	[नहीं, वरन् सबकी]
१७६	५	कोचर शाहका	कोचर-शाहकी
"	१६	"अकंशन"	"अलंकृत"
१८१	४	कोचर-शाहकी जो	कोचर-शाह, जो
१८३	५	६—	७—
१८४	६	मज़बूरन	मजबूरन
"	१६	६०	६० में
१८५	१२	विशाला	विशाल
१८६	४	हो गया।	हो गया होगा
१९१	२१	and	ad
१९६	९	वा० जेटमलज	वा० जेटमल
१९७	३	कक्षा ६ तक	कक्षा ८ तक

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२०७	१८	अप्रैल सन् १६२३ ई०	अप्रैल सन् १६२२ ई० से
२१५	२०	infantary	infantry
२२८	२	दर्ज़न	दर्जन
२३३	१	an	any
२३६	६	at 1-5-p. m.	at 1.50 p. m.
३६	२	म इसका	में इसका
३२	४	ये हैं.	चन्द ये हैं
५	१०	समयराज नाहटा	सभयराज नाहटा
१	१२	रामगिरि स्वामी	राजगिरि स्वामी
	३	तरक्की दी।	तरक्की दी गयी।
	५से८	उत्तीर्ण	अनुत्तीर्ण
	२१	उन्नति	उन्नतिमें
	५	इारज़	इारज़
	५	कृपा करें	शीघ्र कृपा करें
		अधारपर	आधारपर
		निरट्ट	निरट्ट
	८	मर्द	मर्दका
		अपराधको	अपकारको
		नर्यल्ता	निर्यल्ता
		'प्रकाशक'	—'प्रकाश'

पृष्ठ २५३ पंक्ति १४, नियम नं० १०८ में कुछ भूल
। शुद्ध पाठ इस प्रकार है :—
—बीमारीकी हालतमें डॉक्टरका सर्टीफ़िकेट पेश
मुताबिक छुट्टी दी जायेगी। इसके उपरान्त यदि
अवैतनिक छुट्टी दी जायेगी, पर कुल छुट्टी १
न बढ़ेगी।